मूल्य : तीस रुपये (30·00)

प्रथम संस्करण 1982,
JANGAL KE AASPAAS (Novel), by Rakesh Vatsa

जंगल के आसपास

राकेश वत्स



राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

बलकेश
और उसकी पीढ़ी के लिए
जिसकी उम्र अभी 'शैल' से ज्यादा नहीं है।

बाहर लकड़ियों के ढेर के पास किसी के धप्प से गिरने की आहट सुनाई दी और उसके साथ ही बच्ची की मासूम मिमियाती चीख पहाड़ के जमे हुए सन्नाटे को तोड़कर जंगल के स्याह अंधेरे में गुम हो गई।

पूरे गांव पर इस चीख का कोई असर नहीं हुआ; जैसे गांव, गांव न होकर कोई जंगली खंडहर हो, जिसके पथरीले टीलों और बेजान भुरभुरी मिट्टी के दूहों में बनी खोहों के बीच इन्सानों की बजाय रेंगने वाले कीड़े रह रहे हों।

पर चन्देरी बेअसर नहीं रह सकी। बेटी की चीख कानों में पड़ते ही वह लपककर बाहर आ गई। बाहर आते ही उसे एक भुतही छाया झाड़ियों के बीच भागती नजर आई, और नजर आया कि उसकी बच्ची छाया के शिकंजे में है। कुछ और नहीं सूझा तो वह जोर-जोर से चिल्लाने लगी, "अरे कोई बचाओ! मेरी महुआ को बचाओ! वह प्रेत मेरी बेटी को उड़ाए लिए जा रहा है। बचाओ! बचाओ!"

चन्देरी की थरथराती चिल्लाहटों का भी किसी पर कोई असर नहीं हुआ। गोबर पुते मकानों के दरवाजे और धुआं छोड़ती झोंपड़ियों के कपाट उसी तरह बन्द पड़े रहे। हां, चन्देरी का पति बाकर और दो जवान बेटे सगुआ और देवा जरूर थोड़ी हरकत में आए। उन्होंने चौगाठ के अन्दर रहकर ही चन्देरी की धोती का पल्लू पकड़ लिया और उसे झटके देने लगे, ताकि चन्देरी खिंचकर अन्दर चली आए और वे झट-से दरवाजा बन्द करके सांकल चढ़ा लें।

पर चन्देरी खिंचते हुए पल्लू का एक टुकड़ा तीनों मर्दों के हीजड़िया हाथों में छोड़ बदहवास-सी गलियारे की तरफ उतर गई और बेहोश पड़े मकानों के बन्द दरवाजे एक-एक करके पागलों की तरह थपथपाने लगी। चार-पांच दरवाजे एक के बाद एक थपथपाने के बाद सहसा एक

चौड़े-से मकान का एक पल्ला धीरे-से खुला और एक चेचक के दागों वाला बूढ़ा चेहरा बाहर निकलकर पूछने लगा, "क्यों, फिर कोई औरत या बच्चा उस प्रेत की बलि चढ़ गया ?"

"हां सरपंचजी ! महुआ को उठाकर ले गया प्रेत !" चन्देरी हांफती हुई आवाज मे घिघियाई और उस चेहरे के नजदीक जाकर घुटन-भरी फुफकारों मे रोने लगी।

"अब···इस वखत क्या हो सकता है ?···हाथ को हाथ तो दिखाई नहीं देता !···सवेरा होते ही सब लोग इकट्ठे होकर जाएंगे !···हो सकता है कही बेहोश पडी मिल जाए !" सरपंच रामदास ने चन्देरी की फुफकारों की जलन से चेहरे की चमडी बचाने की गरज से अपनी गर्दन मोड ली।

"नही, आप मेरे साथ अभी चलें, इसी वखत। अभी तो वह उसका खून ही पी रहा होगा। हमें देखते ही छोड़कर भाग जाएगा। सुबह क्या मिलेगा ? तब तक तो वह उसकी हड्डियां तक चबा डालेगा !" चन्देरी ने हाथ फैलाकर सरपंच का गिरेबां पकड लिया और उसकी दुबली-पतली देह को झटके दे-देकर बाहर खीचने की कोशिश करने लगी।

लेकिन सरपंच किसी भी कीमत पर बाहर आने के हौसले मे नही था। उसे पता था कि प्रेत अब बूढ़े मर्दो पर भी वार करने लगा है। उसने बन्द पल्ले के सहारे कन्धा अड़ाकर एक हाथ से सांकल थाम ली और दूसरे हाथ से चन्देरी की मुट्ठी में से अपना गिरेबां छुड़ाने के लिए संघर्ष करने लगा। मुट्ठी फौलाद की तरह सख्त लगी तो चन्देरी के पति को आवाजें भी लगाने लगा, "बाकर ! बाकर ओ !···आकर संभाल अपनी बहू को !···छोड, छोड़ मेरा कुरता चन्देरी ! पागल तो नही हो गई है क्या ?"

इसी कशमकश में पुरानी कमीज का कालर फटकर चन्देरी की मुट्ठी मे चला आया। वह अपने ही जोर से झटका खाकर थोडा पीछे हटी तो सरपंच को पल्ला बन्द करने का मौका मिल गया। उसके मशीनी हाथों ने झट-से सांकल चढ़ा ली और सुरक्षित होकर गालियां बकने लगा।

इससे पहले कि चन्देरी अकेली ही जंगल की तरफ भाग निकले, उसके अपने घर के तीनों मर्दों ने आकर उसे दबोच लिया और फड़फड़ाती

मछली की तरह कुदालती उसकी देह को अपने घर के अन्दर ले गए। अन्दर पहुंचकर उन्होंने भी सरपंच की तरह सांकल चढ़ा ली और पिल्लों के रोने जैसी आवाज़ों में चन्देरी को झिड़कने-फटकारने में जुट गए।

रात के दूसरे पहर तक चन्देरी के आधी झोंपड़ी और आधे मकान से विलाप की ऊंची-ऊंची आवाज़ें सुनाई देती रहीं। फिर आहिस्ता-आहिस्ता आवाज़ें मद्धम पड़ गईं। इसके बाद पहाड़ का टूटा हुआ सन्नाटा फिर जुड़ गया। कभी-कभी चन्देरी की हूक उस सन्नाटे के पत्थर पर सिर पटकती रही। लेकिन शेष गांव उसी तरह सोता रहा—तंग मुंह के बर्तन में बंद पानी की तरह निस्पन्द और शान्त।



दमकड़ी गांव,...मिली-जुली जातियों, धर्मों और आस्थाओं से बना एक छोटा-सा पहाड़ी गांव।

इस गांव में आदिवासियों और हरिजनों की पहचान खास किस्म के घास-फूस और पत्तों से बनी गोल-गोल झोंपड़ियों से होती है और दूसरी जातियों की पहचान लाल मिट्टी के साथ पत्थर के टुकड़े कूटकर बनाए गए छोटे-छोटे कच्चे मकानों से। महाजनों के मकानों की किस्म इनसे काफी अलग है। उनके मकान पत्थर की दीवारों के ऊपर टीन की छतें डालकर बनाए गए हैं। गांव के सरपंच रामदास का मकान इसी तरह का पथरीला मकान है।

रंग, आकार, पहरावे और रस्मो-रिवाज, यहां तक कि पहचान के लिए रखे जाने वाले नामों तक में भी आदिवासी दूसरी जातियों से पूरी तरह से भिन्न हैं। इस बात में भी भिन्नता है कि दूसरी जाति के लोगों और महाजनों के तन पर दो या तीन वस्त्र होते हैं और किसी-किसी के पैरों में जूते भी, जबकि आदिवासियों के तन पर केवल एक वस्त्र होता है और पैर नितान्त नंगे।

जूते वाले महाजनों से आदिवासी बहुत डरते हैं। शायद भूत-प्रेतों, डायनों, चुड़ैलों से भी कहीं ज्यादा। डायनें-चुड़ैलें किसी खूंखार जंगली जानवर का रूप धारण कर बस एक झटके में जान ले लेती हैं, पर ये

महाजन रेत-रेतकर मारते है। आदिवासी ही नही, दूसरी छोटी जातियां भी मधुमक्खियों की तरह जो कुछ भी अपनी जिन्दगी के छत्ते मे अपने, श्रम से उपजाती या इक्ट्ठा करती है, जूते वाले उस सब पर अपना जन्मसिद्ध अधिकार मानते हैं। बाकी के गांवों की भी लगभग ऐसी ही दशा है।

गांव से थोड़ा हटकर, दो-तीन छोटी-छोटी पहाड़ियों को पार करते ही, सामने सोन नदी की भव्यता दिखाई पड़ती है। दूर के बर्फीले पहाड़ो से ठण्डा और पवित्र जल लेकर आने वाली सदाबहार नदी; इस नदी का तेज बहाव यहां की लकडी बहाकर नीचे के सभ्य समाज तक ले जाता है। हालांकि उस सभ्य समाज के बौद्धिक और मानसिक विकास की बू तक भी इस इलाके तक नही पहुंची है।

इसी नदी के साथ-साथ, सैंकडो मील के घेरे मे पसरा एक हरा-भरा जंगल है। बहुत-से बरसाती नाले इस जंगल से होकर नदी में गिरते है। बीच-बीच मे बहुत से जलकुण्ड भी है जो रिसते हुए भी पानी से सदा लबालब भरे रहते है। पिछले चार-पांच वर्षों से, सरकार ने इस जंगल को कुछ खूंखार जानवरों की नस्ल की हिफाजत के लिए संरक्षित किया हुआ है। अब इस जंगल में शिकार खेलने का अर्थ है एक हज़ार रुपये जुर्माना और एक साल की सख्त कैद। अगर जुर्माना अदा न किया जाए तो दो साल की सख्त कैद। जूते वाले महाजन और जंगल की देख-रेख के लिए निर्धारित किए गए सरकारी हरकारे इस कानून का डटकर फायदा उठाते हैं। जो कोई भी आंख मे रड़कता है उसी को अपने किसी आदमी से संरक्षित जानवर मरवाकर फंसा देते है और सरकारी ताकत के सहारे अपना दबदबा बनाए रखते हैं। बेचारा जगतिया इन्ही महाजनों के कोप का भाजन बनकर, दो साल की सख्त कैद की सजा काट रहा है।

नदी के दूसरे किनारे के पहाड़ एकदम सूखे है। इतने अधिक जलहीन कि किसी को घास काटने या जानवर चराने इन पहाड़ो पर जाना होता है तो पीने का पानी साथ बाधकर ले जाना पडता है। इन पहाड़ों पर पेड़-पौधे भी मात्र वही दिखाई देते हैं जो पानी के अभाव मे भी जिन्दा रह सकते हैं। घास की किस्म भी कुछ ऐसी ही है जो एक बार की बौछार मिल जाने पर ही लहलहा उठती है—पिंडलियों और घुटनों तक लम्बी, सरकण्डे की तरह घनी और जीरी के खेत की तरह सुनहरी। ये सूखे पहाड

आदिवासियों और हरिजनों के जानवरों के लिए बहुत बड़ा वरदान हैं, सहारा है, क्योंकि जूते वाले महाजन इन पर अपना उस तरह का हक नहीं जताते जिस तरह का हरे-भरे पहाड़ों और जंगलों पर जताते हैं। बस थोड़े-से पैसे जमा करवाकर या घर के किसी भी आदमी को निश्चित अवधि के लिए बन्धुआ मजदूर रखवाकर किसी भी एक हिस्से को अपने लिए सुरक्षित करवाया जा सकता है। भेड़-बकरियां पालना यहां की छोटी जातियों का सबसे बड़ा और आजाद धंधा है।

लेकिन आज इस आजाद धन्धे के रास्ते में भी बहुत बड़ी बाधा आकर खड़ी हो गई है। आस्था की बाधा, विश्वास की बाधा। दमकड़ी गांव के लोग आज अपने जानवरों को चराने इन सूखे पहाड़ों पर नहीं ले जा सकेंगे। उन्हें दिन-भर अपने जानवरों को बाड़ों की सीमा में ही कैद रखना होगा। सब लोग महुआ के साथ घटी दुर्घटना के दुःख में मातम मनाएंगे। चन्देरी के परिवार के साथ रहेंगे। गांव के किसी भी आदमजात के मर जाने या मार दिए जाने पर ऐसा ही होता है।

● ●

सूरज की पहली आभा के साथ ही दमकड़ी गांव पर छाया बेहोशी का काला सन्नाटा टूट गया और लोगों ने देवता की चट्टान के आगे सींग का बाजा बजाकर अपने जीवित होने का सबूत पेश किया।

जैसे-जैसे धूप चढ़ती गई वैसे-वैसे लोग एक भीड़ की शक्ल में चन्देरी के मकान के सामने जमा होते गए। जब काफी लोग इकट्ठे हो गए तब चन्देरी के बन्द मकान के अन्दर से विलाप की आवाजें शुरू हुईं और इधर भीड़ छोटे-छोटे समूह बनाकर आपसी कानाफूसी में व्यस्त हो गई। इलाके का ओझा बागपत महाराज जब अपने हाथ में मोर के पंखों और सेह के तक्लों से बना जादुई झाड़न लेकर पहुंचेगा तभी चन्देरी, उसका पति और बेटे घर से बाहर निकलेंगे। तभी एक विशेष अनुष्ठान के बाद भीड़ के कुछ बहादुर आदमी ओझा और उसके सहायकों के साथ बच्चों की लाश को जंगल में ढूंढने जाएंगे। इस इलाके की यही परम्परा है। शताब्दियों से चला आ रहा दस्तूर है। इस दस्तूर को कोई नहीं तोड़ सकता। किसी

भी दस्तूर को कोई नही तोड सकता। दस्तूर टूटता है तो समझ लिया जाता है कि जल्दी ही कोई घोर संकट आने वाला है। देवी-देवताओ को नाखुश करने का नतीजा संकट ही होता है और संकट बुलाने वाले आदमी के लिए कठोर से कठोर दण्ड का विधान है। कई बार तो दण्ड की यातना न सह पाने की वजह से दण्ड पाने वाला मर भी जाता है। अंग-भंग हो जाना तो लगभग निश्चित ही होता है।

खाई पार के गांव डवरू से आती पतली-सी पगडण्डी पर ओझा अपने दो अगरक्षको के साथ आता दिखाई दिया तो भीड़ कानाफूसी बन्द करके चौकस होकर उसे देखने लगी।

सचमुच, यह दृश्य देखने के काबिल था। सिर पर उल्लू और गिद्ध के परों से बना मुकुट, गले मे रग-बिरंगे पत्थरो से बने बड़े-बड़े मनकों की मालाएं, चेहरे पर खिची काले, लाल और सफेद रग की चौड़ी-चौड़ी लकीरें, एक हाथ मे जादुई झाड़न और दूसरे मे सिद्ध किया हुआ लाल कपडा, कमर मे खास किस्म की झालरदार तड़ागी और पैरों मे बड़ी-बड़ी नोकों वाले लाल जूते, और इसके साथ ही आगे-पीछे चल रहे दो सफेद अगरक्षक—यह सब ऐसे लग रहा था जैसे किसी काली गुफा से निकलकर तीन प्रेतात्माए चली आ रही हो।

थोडी देर बाद ही बडी चट्टान के पीछे लुप्त होकर ओझा जब प्रकट हुआ तो भीड की औरतें और मर्द, एक-एक करके कमर तक झुक-झुककर उसका अभिवादन करने लगे। ओझा झुके लोगों की पीठ पर झाड़न छना-छना कर आशीर्वाद देने लगा। कोई मर्द या औरत ओझा के पैरों में ज्यादा ही झुक जाती तो एक अजीब-सी बुदबुदाहट के साथ उसके मोटे-मोटे चाकलेटी होठों में से लम्बे-लम्बे पीले दांत दिखाई देने लगते, बिलकुल वैसे ही जैसे कोई जगली कुत्ता, किसी गाय को सामने देख दांत दिखाता हुआ धीरे-धीरे गुर्राने लगता है—अपने गुस्से और शक्ति की मामूली-सी बानगी पेश करने के लिए, ताकि गाय बिना किसी हुज्जत के उसका दबदबा स्वीकार कर ले।

चन्देरी और उसके परिवार के लोगो को आशीर्वाद ओझा ने अलग ढंग से दिया। सबके मुह से लेकर पाव तक झाडन सात-सात बार फिराया और किसी अनजानी खुरदरी भाषा मे मन्त्र भी पढ़ता रहा। भीड़ के लोग दायें और बायें हाथो को आपस मे गुथाए बड़ी ही श्रद्धा और तन्मयता से

ओझा को यह सब करता देखते रहे। दोनों अंगरक्षक बन्दूकों को लाठियों की तरह धरती पर टेके, मूंछों पर ताव दे-देकर औरतों की तरफ घूरते रहे। औरतें भी उनकी हर हरकत को पूजा भाव से निहारती रहीं, जैसे वे ओझा-रूपी भगवान के पैगंबर हों और उनकी भद्दी से भद्दी हरकत का भी सम्मान करना उनका धर्म हो।

सब रस्में पूरी हो जाने के बाद अन्तत: बाकर, सगुआ और देवा समेत, दूसरे दस-बारह आदमियों को साथ लेकर, ओझा और उसके अंगरक्षक बच्ची की लाश की खोज में निकले। विलाप करती चन्देरी और उसको धीरज बंधाती दूसरी औरतें उनको क़तार बांधकर जाते देखती रहीं। चन्देरी के साथ दूसरी सभी औरतें, जब तक जानेवाले लोग वापिस नहीं आ जाते, इसी तरह देखती रहेंगी। दूसरी औरतें अगर चाहें तो जमीन पर बैठ सकती हैं, पर चन्देरी ऐसा कतई नहीं कर सकती। बहुत ज्यादा देर हो जाने पर किसी चट्टान के साथ पीठ भर ज़रूर लगा सकती है, वह भी कुछ न कुछ दान करने का संकल्प करके। ओझा के पूर्वजों की बनाई हुई यही धार्मिक व्यवस्था है। मुद्दत से भीड़ पर इस व्यवस्था की कड़ाई से आजमाईश हो रही है। इसके निर्णयों के खिलाफ अपील कहीं नहीं हो सकती।

● ●

बरसाती नाले की बेढब डरावनी चट्टानों और घने जंगल की हरहराहट के बीच भी, लाश को ढूंढने निकले जूताहीन लोग, अपने-आपको किसी भी प्रकार के डर से मुक्त और सुरक्षित अनुभव कर रहे हैं। क्योंकि वे ओझा के साथ हैं। उन्हें विश्वास है कि मंत्रों की असीम शक्ति ओझा की मुट्ठी में है और उस शक्ति के ज़रिये ओझा कुछ भी कर सकता है। उस शक्ति के बहुत से चमत्कार उन लोगों ने अपनी आंखों से देखे हैं। ओझा बिना एक बूंद खून को गिराए लोहे का काफी मोटा सूआ अपनी जीभ के आर-पार निकाल लेता है। भूत-बाधा से ग्रसित मर्द और औरतों को पीट-पीटकर उनके अन्दर के प्रेत, चुड़ैल, डाकिनी या डायन को प्रत्यक्ष रूप में बुलवा देता है और शरीर छोड़कर भाग जाने के लिए मजबूर कर

देता है। बलि के बकरे, भेड़ या भैंसे का, बिना कोई आघात पहुंचाए प्राणान्त करवा देता है। गुम हो गए जानवरों का पता बता देता है। बड़े से बड़े रोग को बिना किसी औषधि के ही, केवल झाड़-फूक के सहारे दूर कर देता है। जिसपर प्रसन्न हो जाए उसे मालामाल कर देता है और जिसपर नाराज़ हो जाए उसे तपेदिक या कोढ़ जैसी भयंकर बीमारियां लगाकर बरबाद कर देता है। बहुत-सी दैवी ताक़तें हैं उसके बस में। इन ताकतों से वह बहुत-से गैर इन्सानी काम करवा सकता है। इन ताकतों के हाथों किसी की हत्या करवा देना तो उसके बायें हाथ का काम है। इसके अलावा उसके दोनों अंगरक्षकों के पास बढ़िया किस्म की विदेशी राइफलें हैं, जो बहुत दूर तक मार करती हैं और जिनका निशाना कभी खाली नहीं जाता।

ओझा झाड़न के पंखों को हवा मे लहराकर जिस भी दिशा की तरफ इशारा करता है, लोगों की भीड़, एक अंगरक्षक खलवा को साथ लेकर उसी दिशा की तरफ चल देती है। दूसरा अंगरक्षक चेतू दो आदमियों के साथ ओझा के पास रहता है। ओझा किसी से फालतू बात नही करता है। भीड़ को वह फालतू बात करने के काबिल ही नही समझता है। कोई परेशानी महसूस करता है तो चादी की डिबिया मे से सुगन्धित नसवार चुटकी मे भरकर एक अजीब-से सडाके के साथ नाक मे चढ़ा लेता है। सड़ाके के थोडी देर बाद उसके माथे की त्योरियां रेत पर खिंची लकीरो की तरह गहरी हो जाती है। उस समय उसकी मुट्ठी झाड़न के मुट्ठे पर कुछ ज्यादा ही सख्ती से कस जाती है। तब वह गुर्राहट की-सी बोली मे कुछ बोलता है जो किसी की भी समझ मे नही आता। कोई देख रहा होता है तो यही समझता है कि वह किसी विशिष्ट आत्मा से संवाद कर रहा है। अब भी पास खड़े दो आदमियों ने यही समझा है और वे ओझा के चेहरे पर आए विकारों को ताड़कर कुछ कदम दूर हटकर खड़े हो गए हैं।

पूरे दो घण्टे खोज-खबर लेने के बाद भी जब भीड़ के हाथ कुछ नहीं लगा तो ओझा ने झाड़न से एक पंख निकालकर चाकर की दायीं कलाई पर बांध दिया। इसका मतलब था बच्ची का पिता अपने धर्म और कर्त्तव्य से उऋण हुआ, जिसका सबूत धर्म के देवता ने उसकी कलाई पर दे दिया है।

पिता की कलाई पर मोरपंख बंधा देख सगुआ और देवा ने भी अपनी-

अपनी कलाई आगे बढ़ा दीं। उनकी कलाइयों पर राइफल का अगला भाग टिका कर खलवा ने उनसे मज़ाक किया, "तुम दोनों बच्ची के भाई हो, हट्टे-कट्टे हो, जवान हो, तुम्हें तो तलाश जारी रखनी चाहिए।"

दोनों भाई आंखों में रहम की आशा में बिटर-बिटर खलवा के मुस्कराते चेहरे की तरफ ताकने लगे।

ओझा ने अपनी चौंधियां आंखों से उन दोनों की बैलिया आंखों में एक बार गौर से देखा, फिर होंठों को थोड़ा विकृत कर उसने उन दोनों की कलाइयों पर भी मोरपंख बांध दिए।

मोरपंख बंधते ही दोनों भाइयों के चेहरों पर खुशी और राहत की चमक पुत गई। भीड़ भी उनकी खुशी में शरीक हो गई और ओझा का इशारा पाते ही गांव की तरफ लौट चली।



अभी सब लोग बरसाती नाले को भी पार नहीं कर पाए थे कि पीछे रह गए आदमियों में से एक की पुकार सुनकर सब ठिठक गए। दो आदमी, जो चेतू की शहादत में अपना कोई आपसी झगड़ा निपटा रहे थे, हाथ के इशारों से सबको वापस आने के लिए कह रहे थे।

वापस आकर सबने सुर्ख जंगली गुलाब की झाड़ियों के पास जो दृश्य देखा, उससे उनके रोंगटे खड़े हो गए।

बच्ची का नन्हा-सा खूबसूरत पैर घुटने से उखड़कर दो मजबूत पत्थरों की सन्धि के बीच अटका पड़ा था। किसी सस्ती धात की बनी पाजेब, पिण्डली तक चढ़कर धूप में लक-दक चमक रही थी। एक तरफ कुहनी से थोड़ा नीचे के हिस्से को चबाकर तोड़ा गया हाथ पड़ा था। कलाई में कांच की छोटी-छोटी लाल चूड़ियां पाजेब की ही तरह चमक रही थीं। थोड़ा हटकर घनी झाड़ियों के बीच गाल खाया मुण्ड पड़ा था। कान के नीचे का काला डिठौना और कान में पड़ी बालियां सुरक्षित बच गई थीं। दोनों आखें अतिरिक्त ढंग से फैली हुई थीं। बाकी के धड़ का कहीं पता नहीं था।

ओझा क्रोध में भरकर, पेड़ों की टहनियों की ओट में झिलमिलाते

सूरज पर टकटकी बांधकर खड़ा हो गया। उसके हाथ का झाड़न थर-थर कांपने लगा। झाड़न के साथ ही बिजुका के बांसों की तरह खड़ी भीड़ की टांगें भी कंपन महसूस करने लगी। हालांकि भीड़ के लिए यह कोई अजूबा नहीं था। इससे कहीं ज्यादा भयावने दृश्य भीड़ की आंखों के सामने से पिछले चन्द महीनों के बीच ही गुज़रे थे।

नरभक्षी का सबसे पहला शिकार चमकी का डेढ़ वर्ष का बच्चा हुआ था, नरभक्षी उसे पालने समेत खींचकर जंगल में ले गया था। ढूंढने पर पालने का मलबा तो मिल गया था, पर बच्चे का कहीं पता नहीं चला था। दूसरा शिकार रामेश्वर की गर्भवती पत्नी हुई थी। वह घास का गट्ठर सिर पर उठाए घर लौट रही थी कि अचानक रास्ते में ही गायब हो गई। खोज करने पर, नाले की छोटी-छोटी चट्टानों के बीच गट्ठर बिखरा हुआ मिला था और उसके सिर्फ दो-सौ गज की दूरी पर कमीज का एक टुकड़ा झाड़ी में फसा दिखाई दे गया था। दूसरे दिन ओझा के संरक्षण में जब उसकी खोज की गई थी तो अधखाई लाश, दो किलोमीटर दूर, घने जंगल में पड़ी मिली थी। नरभक्षी ने उसका पेट, गाल, वक्ष और जांघें खाकर बाकी का हिस्सा झाड़ियों में छुपाकर छोड़ दिया था। गर्दन पर दो गहरे छेद भी मिले थे, जिससे अनुमान लगाया गया था कि नरभक्षी ने मांस खाने से पहले उसे बेहोश कर उसका गर्म-गर्म खून पिया होगा। इसी तरह करीमन की दादी सीढ़ियों के पास बर्तन मलती-मलती गायब हो गई थी। दूसरे दिन नाले के बीच उसकी हड्डियां और अधखाया मुह ही मिले थे।

पिछले थोड़े-से अरसे में आसपास के गांवों की दस औरतें और पांच बच्चे नरभक्षी की भेंट चढ़ चुके थे जिनमें से तीन बच्चों का तो नामो-निशान तक नहीं मिला था। और इन पन्द्रह में से लगभग आधे इसी दमकड़ी गांव के थे, जिस गांव की ओझा पर सबसे अधिक श्रद्धा है और ओझा भी जिस गांव को काफी महत्त्व देता है।

ओझा सूरज की तरफ देखते-देखते जब अघा गया तो उसने अपनी गर्दन थके हुए गधे की तरह नीचे झुका ली। कुछ देर लम्बे-लम्बे सांस खींचने के बाद उसने गर्दन उठाई और झाड़न बच्ची के चाकलेटी हो गए खून से सने अंगों पर छनकारने लगा।

बानर ओझा का इशारा समझ गया। उसने कन्धे से कपड़ा उतारकर अपनी आंखें पोंछीं और अंगों को उसमें इकट्ठा करके अगले हुक्म का

इन्तज़ार करने लगा।

अगला हुक्म हुआ तो उसने पोटली बाजुओं पर रखकर छाती से सटा ली और आदमियों का काफ़िला तेज़ी से गांव की तरफ लौट चला।

सबको पता है कि औरतें ज़मीन पर बैठी उनका इन्तज़ार कर रही होंगी और उनके पहुंचे बिना किसी के भी घर में चूल्हा नहीं जलेगा। यही नहीं, मातम में शरीक कई औरतें तो हठयोगिनियों की तरह उनके पहुंचे बिना जल तक ग्रहण नहीं करेंगी।

● ●

छोटी पहाड़ी की उठान पार करते ही ओझा के तेज़ चाल से चलते पैर अचानक मन्द पड़ गए। उसकी नजर ढलान पर सतर्कता से घास काट रही एक सांवली-सी लड़की की पीठ पर जा टिकी। कुछ देर तक तो वह कटती घास की मादक गन्ध से उन्मत्त होता रहा, फिर अपनी गर्दभी आवाज़ में मिठास भरने की कोशिश करता हुआ वह आगे तक बढ़ आया, "श्यामा, क्या कर रही हो?"

श्यामा ओझा की आवाज़ से चौंककर बिना बंधी कमान की तरह तनकर खड़ी हो गई और सामने ओझा समेत भीड़ को खड़ी देख तुनक उठी, "देख तो रहे हो, क्या कर रही हूं।"

ओझा तनिक सकपकाया और उसे लगा कि उसके पैर अचानक किसी दलदल में धंस गए हैं। पर वह संभला, "नहीं, मेरा मतलब है, उधर दमकड़ी गांव में दिखाई नहीं पड़ीं?"

"उन बुज़दिलों के बाड़े में जाकर मैं क्या करती?" श्यामा फिर घास काटने को झुक गई।

श्यामा की स्पष्ट बात सुनकर चन्देरी का बड़ा बेटा सगुआ भभका, "हमको बुज़दिल कहती है चुड़ैल, जीभ काट के फेंक दूंगा।"

सगुआ की भभकी सुनकर श्यामा फुंफकारकर खड़ी हो गई, "अहा, मेंढकी को भी जुकाम हो गया! अपनी बहन को तो बचा नहीं सका शियाल, मेरी जीभ काटेगा। श्यामा का मतलब नहीं जानता क्या? काली होता है, महाकाली। आ, काट जीभ!" उसकी कमल की पंखुड़ियों के

आकार की बड़ी-बड़ी आंखें पूरी खुल गईं और उनमें से शृंगार झड़ने लगे।

श्यामा का आह्वान सुनकर सलवा ने अपनी राइफल संभाली, पर ओझा ने झाड़न का इशारा करके उसे रोक दिया। एक क्षण के लिए ओझा के दिमाग मे आया—काश, यह आग की चिंगारी एक भोली-भाली गाय होती और वह होता शक्तिशाली सरकारी सांड। दोनों मजबूत कांटेदार तारों से बने घेरे मे घिरे होते जहां से गाय लाख कोशिश करने पर भी बाहर न निकल सकती। और फिर उसके बाद··· । लेकिन उसने अपनी आवाज मे अपने ख्याल की भनक नही आने दी। प्यार और संयम को कायम रखते हुए, उसी तरह उन्मत्त बना रहा—"बांसुरी बजैया, रास रचैया, भगवान श्रीकृष्ण की प्यारी राधा को भी तो कहते हैं श्यामा!"

"कहते होंगे! मैं तो सिर्फ काली की, खप्पर वाली की उपासिका हूं।"

"लेकिन खप्पर वाली की उपासिका को, दमकड़ी गांव के इन शरीफ लोगों को बुज़दिल कहकर गाली देने का हक नही है श्यामा।"

"मेरा क्या हक है, क्या नही, मैं अच्छी तरह से जानती हूं। लेकिन आपको इन गदहों की तरफदारी करने की कोई जरूरत नही।"

'गदहा' शब्द सुनते ही, बांहों मे थामी पोटली को छाती में भींच अब बाकर आगे आया, "हमको गदहा कहती है डायन, यही ढलान पर गढ़ा खोदकर दफना दूगा।"

"आ हा हा हा, वाह रे कागडी पहलवान! जरा आगे तो बढ के देख! मां काली की इस खड़ग से हज़ार टुकड़े करके गिद्धों को न खिला दिए तो मेरा नाम श्यामा नही! आ, बढ़ आगे!"

श्यामा का विकराल रूप देख भीड़ के सब लोग बगलें झांकने लगे। सबको पत्थर बना देख श्यामा फिर गरजी, "झुण्ड का झुण्ड एक जानवर को तो मार नही सकता, एक लड़की पर हाथ उठाएगा। बड़ा आया रावण की औलाद! आ जरा आगे तो बढ! मा का दूध पिया है तो बढ़ आगे।"

ओझा ने श्यामा के हाथ की दराती हवा मे लहराती देखी तो उस दराती के पिछले कारनामे उसकी आखों के सामने कौंध गए। उन कारनामों के साथ ही श्यामा की मां सुचित्रा बंगालन के इस इलाके तक पहुंचने का इतिहास भी ताजा हो आया। इस इतिहास के बीच उसे कमीन जात

नाथूराम का चेहरा भी चमकता हुआ दिखाई दिया। वह इस सब में सरा-बोर होकर श्यामा को छोड़ चुपचाप आगे बढ़ गया और उसे जाता देख भीड़ भी उसके पीछे-पीछे आगे बढ़ गई।

इधर श्यामा भी इस हादसे के बाद अपने अतीत में खो गई और दुःखी होने लगी कि उसके अतीत के बहुत बड़े हिस्से का गवाह यह ओझा जैसा भेड़िया क्यों है!

● ●

जात से चमार नाथूराम फौज से निकाले जाने के बाद जब अपनी जन्म-भूमि, इस पहाड़ी इलाके में लौटा था तो उसके साथ आठ-दस साल की लड़की को लिए एक बंगालिन भी थी। पहले तो कई वर्षों तक इलाके के लोगों ने मां-बेटी को स्वीकार ही नहीं किया था, क्योंकि कहीं से पता चल गया था कि नाथूराम के सम्पर्क में आने से पहले बंगालिन कलकत्ता में वेश्यावृत्ति का धन्धा करती थी। लेकिन धीरे-धीरे बंगालिन की सहनशीलता और सेवाभाव की आदत ने लोगों के मन को जीत लिया। पर बहुत से रूढ़ और निरंकुश लोगों की आपाधापी का शिकार बंगालिन को फिर भी होते रहना पड़ा था। एक बार तो रायसाहब फतेहसिंह के वहशी कारिन्दों के चंगुल से उसे ओझा ने ही बचाया था।

सूरज डूबने की तैयारी कर रहा था और बंगालन सुचित्रा बच्ची श्यामा के साथ भेड़ें हांकती हुई घर लौट रही थी। अचानक जंगली भैंसों की तरह फुंकारते हुए दो यमदूतों ने उसे आ घेरा। यमदूत बंगालिन को घसीटकर झाड़ियों के पीछे ले जाना चाहते थे पर बंगालिन वहां जाने के लिए तैयार नहीं थी। वह बड़ी बहादुरी से दोनों का मुकाबला कर रही थी और साथ ही 'बचाओ! बचाओ!' चिल्लाए जा रही थी। अपनी मां को छुड़ाने के लिए जब श्यामा ने एक यमदूत की टांग पर काट खाया था तो यमदूत ने उसे लातों और घूसों से मार-मारकर अधमरी कर दिया था। इसके बाद बंगालिन झाड़ियों की बगल में दोनों भैंसों के साथ दनादन युद्ध करती रही थी। एक तरफ पड़ी श्यामा देह के दर्द से चीखती-चिल्लाती रही थी और दूसरी तरफ बंगालिन अपने आपको बचाने में

लहूलुहान होती जा रही थी। फिर पता नही कहां से ओझा खलवा और चेतू के साथ अचानक प्रकट हो गया था। ओझा की ललकार सुनते ही कारिन्दे मुंह छुपाकर भाग खड़े हुए थे। श्यामा ने जब झाड़ियों की ओट से मा को निकलते देखा तो वह उसे गुर्राती हुई घायल शेरनी की तरह लगी थी। बस यही वह क्षण था जब श्यामा के अन्दर भी एक शेरनी ने जन्म ले लिया था। मां के कपड़े तार-तार हो चुके थे और बदन पर जगह-जगह से रक्त चू रहा था। लेकिन मां को गर्व था कि उसने अपनी इज़्ज़त बचा ली थी।

ओझा को धन्यवाद देकर जब मां ने घायल पड़ी श्यामा को आकर संभाला था तब श्यामा अपने-आपको रोक नही सकी थी और वह मां की रक्तसनी गोद मे मुंह छुपाकर ज़ोर-ज़ोर से चीख उठी थी। पर श्यामा का यह चीखना अन्तिम चीखना था। इसके बाद बड़ी से बड़ी मुसीबत में भी किसी ने श्यामा की आंखो मे आंसू नही देखे। उस दिन उसका रोना जैसे पहाड की गहरी गुफाओं मे समाधि ले गया था, बच रहा था मौत से भी न डरने वाला मन और यही मन अब उसकी सबसे बड़ी शक्ति था।

● ●

चार दिन बाद नाथूराम जब राजधानी से लौटा था तो वह बिना एक पल रुके श्यामा को साथ लेकर रायसाहब के गांव सुमेरा की तरफ चल दिया था। हालांकि श्यामा अभी पूरी तरह से स्वस्थ नही हुई थी पर फिर भी वह उत्साह मे भरकर नाथूराम के साथ चलने को तैयार हो गई थी।

रास्ते में श्यामा ने देखा था, नाथूराम बार-बार ज़मीन से पत्थर उठाकर उसे किसी बडे-से पत्थर पर मारकर तोड़ देता था। वह ऐसा क्यों कर रहा है, श्यामा की समझ में नही आया था। हां, वह इतना जरूर समझ पा रही थी कि बापू के मन मे कोई आग है, बिलकुल वैसी ही आग, जैसी उसके अपने मन के अन्दर भी लपटें फैलाती धधक रही है। लेकिन यह आग क्या चाहती है, यह उस मासूम बच्ची को पता नही था। शायद नाथूराम भी इस आग की मांग को नही पहचानता था। वह पन्द्रह साल फौज मे सिपाही जरूर रहा था। उसने युद्ध-बन्दी के रूप मे चीन

के कैम्पों में भी कुछ माह काटे थे लेकिन फिर भी वह इस आग को सही ढंग से पहचानने में श्यामा के अनुभवहीन बालमन से बहुत ज्यादा आगे नहीं था।

काफी देर चलने के बाद वे दोनों जब रायसाहब की मांद के पास पहुंचे थे तो वहां के रोब-रुतबे को देखकर श्यामा हैरान रह गई थी। इस तरह का वैभव और अपने ढंग का प्रभाव-क्षेत्र तो उसने कलकत्ता जैसे महानगर में भी नहीं देखा था। वह सब उसके कल्पना क्षेत्र से बाहर की चीज़ थी। उसे लगा था जैसे कोई सपना देख रही हो।

दो पहाड़ों के बीच पिघली चांदी जैसा सफेद पानी लिए कल-कल करती सोन नदी वह रही थी। नदी के किनारे-किनारे खुली जगह पर रंग-बिरंगे फूलों की क्यारियां खिली थी। क्यारियों के बीच रेशमी घास के गलीचों पर खूबसूरत आराम-कुर्सियां पड़ी थीं और इन कुर्सियों के पास रंग-बिरंगी छतरियों के नीचे सफेद पत्थर की चमचमाती मेजें सजी हुई थीं।

सामने की ढलान पर ऊंचे-ऊंचे पेड़ों से ढके कुछ अजीब-सी शक्ल के लाल-लाल मकान चमक रहे थे। मकानों के बीच से एक चिमनी पेड़ों जितनी ही ऊंची उठकर दूध जैसा सफेद धुआं उगल रही थी। उन मकानों की तरफ से एक अजीब किस्म की नशीली-सी गन्ध उठ रही थी। श्यामा को वह गन्ध घाव पर लगाई जाने वाली स्प्रिट जैसी लगी थी।

थोडा आगे बढने पर लकड़ी के तख्तों से जगह घेरकर बनाया गया एक बड़ा-सा अस्तबल दिखाई दिया था। आधे अस्तबल को लकड़ी के फट्टों से ढका हुआ था। ढकी हुई जगह पर बहुत ही सुडौल किस्म के चम-चम करते बहुत घोड़े बंधे थे। खुली जगह पर घोड़ों जैसे ही सुडौल खच्चर मटक रहे थे। इतने स्वस्थ घोड़ों और खच्चरों को देखकर श्यामा के मन मे अनजाने भय की एक लकीर-सी खिच गई थी। उसने कलकत्ता मे एक बार इसी तरह के घोड़ों पर सवार हुए सिपाहियों को निहत्थी जनता पर लाठियां बरसाते देखा था। शक्तिशाली घोड़ों के पैरों में औरतों, मर्दों और बच्चों को इस तरह कुचले जाते देखा था जैसे वे चावल की पराली से भरे बोरे हों। बस, उनका अपराध सिर्फ इतना था कि उन्होंने चीन के खिलाफ युद्ध में हार जाने के लिए सरकार को दोषी ठहराकर एक छोटा-सा जलूस निकालने की जुर्रत की थी। दूर खड़ी सम्भ्रान्त लोगों की भीड़

चुपचाप उस लाठीचार्ज को सर्कस का तमाशा समझकर देखती रही थी। जब घोड़े उन सम्भ्रान्त लोगों तरफ भी बढ़े थे तो सब के सब भेड़-बकरियों की तरह कुदालियां मारकर भाग खड़े हुए थे। उसी भागमभाग में श्यामा का भी स्कूल का बस्ता कहीं छूट गया था। नई किताबें खरीदने के सिलसिले को लेकर उसको मा से काफी डांट-फटकार खानी पडी थी।

वह बापू के साथ थोडा और आगे बढी थी तो उसे दिखाई दिया था कि एक साफ-सुथरे शीशे वाले मकान के अन्दर के पथरीले फर्श पर दूध जैसी सफेद चीज़ के ढेर लगे है। वह चीज़ उसे बच्चों के चांदी के झुनझुनों जैसी लगी थी। अपने हाथ की जकड़न नाथूराम के हाथ पर थोड़ी सख्त करते हुए उसने धीरे-से पूछा था, "यह चीज़ क्या काम आती है?"

नाथूराम ने भी धीमी-सी आवाज में उसे बताया था, "खुम्भी है, बाहर के देशों वाले इसे भाजी बनाकर खाते है।"

श्यामा ने देखा था, शीशों के अन्दर अजीब-सी पोशाकों वाले कारिन्दे खुम्भी को पेटियो मे भरकर हथौड़े से बन्द कर रहे थे। सारा काम इतनी फ़ुर्ती और मुस्तैदी से हो रहा था जैसे कारिन्दे आदमी न होकर मशीनें हों। एक कारिन्दा पेटी उठाकर खडा हुआ तो उसका चेहरा देखते ही श्यामा का शरीर काप उठा था। यह उसी भैंसे का चेहरा था जिसने मां पर हवस-भरा हमला किया था और उसे भी मार-मारकर अधमरी कर दिया था।

उस कारिन्दे ने भी शायद श्यामा को पहचान लिया था। श्यामा ने देखा था कि उसकी बड़ी-बड़ी मूंछों के बीच लापरवाही की मुस्कान फैल रही थी। श्यामा ने बापू को रोककर बताना चाहा था कि वह उन दो बदमाशों में से एक है। उसने बापू को हाथ खींचकर रोका भी था पर पता नहीं क्यों बापू के रुक जाने पर भी वह कुछ नहीं बता सकी थी।

कुछ देर और चलने के बाद दोनो एक आलीशान पहाड़ी बंगले के बाहर पहुंचे थे। बाहर लगी एक बड़ी-सी तख्ती पर सोने के रंग के अक्षरों में लिखा था—राय साहब फतेहसिंह, एम० एल० ए०।

खाकी वर्दी वाले एक बन्दूकधारी ने आगे बढकर रुआब से पूछा था "क्या बात है?"

नाथूराम ने बोल दिया था, "रायसाहब से मिलना है।"

"वहां बैठ जाओ।" बन्दूकधारी ने बरामदे में पड़ी कुर्सियों की तरफ इशारा कर दिया था और श्यामा को भेदभरी नजरों से घूरने लगा था। वे दोनों कुर्सियों पर बैठ गए थे, बिलकुल गुमसुम, पत्थर के बुतों की तरह, जैसे एक-दूसरे को जानते तक न हों।

काफी देर बाद बंगले के बायीं तरफ के कमरे का चोर दरवाजा खुला था। चोर दरवाजे से दो खद्दर की पोशाकों वाले आदमी इशारों से बतियाते हुए बाहर निकले थे और जल्दी-जल्दी शीनों के मकान की तरफ चले गए थे। उनके जाते ही बन्दूकधारी आम दरवाजे के अन्दर गया था और एक क्षण बाद ही बाहर आकर बोला था, "जाइए दर्शन कर लीजिए।"

दोनों पर्दा हटाकर अन्दर पहुंचे थे तो अन्दर का दृश्य देखकर हैरान रह गए थे। लाल रंग के मखमली सोफे में धंसे ओझा ने मुस्कराकर उनका स्वागत किया था। रायसाहब वाली घूमने वाली कुर्सी खाली थी। कुर्सी के पीछे वाली दीवार पर महात्मा गांधी एक बड़े-से चौखटे में उदास खड़े थे। गांधी जी के दायें-बायें मुंह फाड़े हुए भालुओं के दो बड़े-बड़े मुखौटे जड़े थे। गांधीजी के सिर के ऊपर सोने के रंग के चौखटे में दो छोटी तसवीरें लगी थी, एक में किसी अंग्रेज आफिसर के हाथों राय साहब के पिता बड़े रायसाहब को, रायसाहब की उपाधि लेते दिखाया गया था और दूसरी मे रायसाहब खुद राष्ट्रपति से कोई इनाम ग्रहण कर रहे थे।

बायीं ओर के बड़े-से शीशे वाली अलमारी में अजीब किस्म की चीजें सजी थी। पीतल की तोप, पाल वाला पानी का जहाज, दो लड़ते हुए हाथी, हिरण का शिकार करता चीता, रंग-बिरंगा शंख, फन फैलाए खड़ा सांप...और भी जाने क्या-क्या। एक दूसरी आलमारी में छोटे-छोटे चौखटों जड़ी रंग-बिरंगी तसवीरें रखी थी। कुछ तसवीरों में देश-विदेश के बड़े-बड़े नेताओं के साथ रायसाहब खड़े मुस्करा रहे थे और कुछ में नेता मुस्करा रहे थे। बाकी सब कुछ भी ऐसा था जैसा श्यामा ने इससे पहले कभी नही देखा था।

ओझा ने दोनों को बैठने का इशारा किया था। दोनों बैठते ही गर्म सोफे के बीच इस तरह से धस गए थे जैसे घास-फूस से ढके किसी शिकारी गढ़े में जा[illegible]।

ओझा ने उनके बैठते ही हाथ के गिलास की तरफ इशारा करके नाथूराम से पूछा, "कुछ लोगे ?"

नाथूराम के हाथ जोडकर मना करने पर उसने गिलास होंठों से लगाकर एक घूट भरा था और गर्दन मे पडे रामनाम वाले पल्लू से कड़वाहट पोंछकर कहा था, "तुम कुछ मत कहना, मैंने उनसे बात कर ली है।"

नाथूराम ने समझदार बच्चे की तरह स्वीकृति में सिर हिला दिया था, क्योकि उसे बताया गया था कि इस दुर्घटना मे ओझा ने रक्षक की भूमिका निभाई थी।

इसके बाद ओझा श्यामा की ओर मुखातिब हुआ था, "कितनी प्यारी बच्ची है" बिलकुल कृष्ण की राधा जैसी। कलकत्ता मे पढती थी क्या ?"

नाथूराम ने जवाब दिया था, "हां पढती थी।"

"कितनी जमात तक पढी है ?"

नाथू ने श्यामा की तरफ सवालिया मुंह उठा दिया था, जैसे कह रहा हो तुम्ही बता दो, मुझे भी कुछ पता नही है, पर श्यामा ने जवाब देने की बजाय मुह फिरा लिया था।

हंसते-हंसते ओझा की आंखों के डोरे और भी अधिक सुर्ख हो गए थे। वह हंसी को थोड़ा संयत करके बोला था, "शरमाती है। शरमाती हुई बहुत भली लगती है यह लड़की। क्यों ठीक कह रहा हूं न ?"

उसी समय नन्ही-नन्ही घंटियो की झालर टनटनाई थी। टनटनाहट सुनते ही ओझा थोडा संभला था। क्षण-भर बाद ही रेशमी पर्दा लहराया था और अन्दर से एक ठिगना कद का, गोलमटोल तोंद वाला आदमी बड़ी-बडी मूछों को उंगलियों से साफ करता हुआ घूमने वाली कुर्सी पर आ बैठा था। बैठते ही वह चेहरे पर गंभीरता पोतकर बोला था, "हमने उन बत्तमीजों को कड़ी से कडी सजा दी है नाथूराम जी। बिजली के कोड़े मरवा कर पीठों की चमड़ी उधड़वा दी है उन कमीनों की। मुझे यकीन है कि आगे से आपको ऐसी बेवकूफाना हरकत की शिकायत नही होगी।"

श्यामा का दिल हुआ था कि वह उन्हे बता दे कि अभी-अभी एक दरिन्दे को उसने शीशों वाले मकान में मुस्कराते हुए देखा है, लेकिन

उसके बोलने से पहले ही नाथूराम बोल पड़ा था, "हमें आपसे यही उम्मीद थी सर, लेकिन इस तरह के वहशी लोग इस इलाके में रहेंगे तो ···"

नाथू की फौजियों जैसी बात सुनकर रायसाहब थोड़ा मुस्कराए थे और फिर वाणी में विनम्रता भरकर बोले थे, "आप हुक्म करें, मैं उनको अभी निकाल देता हूं। लेकिन सोचता हूं, अगर निकाला तो आप लोगों के साथ खामखाह की दुश्मनी···"

"मैं उन जैसों की दुश्मनी से नहीं डरता। आप जानते हैं मैं फौज का रिटायर सिपाही हूं।"

"रिटायर नहीं, निकाले हुए।"

"ठीक है, निकाला हुआ ही सही पर मैं और मेरे साथी अपनी बहादुरी की वजह से निकाले गए हैं किसी बुज़दिली की वजह से नहीं।" नाथूराम की आवाज में गुस्सा झलक उठा था।

नाथूराम के फौजी तर्क पर फिर रायसाहब को हंसी आने को हुई थी पर उन्होंने अपने पर काबू पा लिया था। उनके होंठ मूंछों के बीच गोल दायरा बनाकर रुक गये थे, "तो sss?"

"ये लोग आपके नौकर न होते तो इनको इस तरह की गलीज हरकत करने की हिम्मत न होती।"

"बजा फरमा रहे हैं आप।" रायसाहब के होंठों ने नया आकार बदला था "आप हुक्म करें तो हम इन सालों को आपके ही सामने गोली से मरवा देते हैं।"

"अजी छोड़िए अब! इतना बड़ा दण्ड तो उनको मिल गया। इससे ज्यादा तो कानून भी इजाजत नहीं देता।" अबकी बार ओझा ने जबान खोली थी।

"कानून जब रक्षा करने की ताकत खो बैठता है तब आदमी अपनी रक्षा खुद करता है ओझा जी!" नाथूराम ने फिर अपने ढंग का तर्क दिया था।

"बेशक, बेशक!" रायसाहब थोड़ा गंभीर हो गए थे, "तो फिर अब आप चाहते क्या हैं?"

"यही चाहते हैं कि दूसरों की बहू-बेटियों की इज्जत पर हाथ डालने वालों के हाथ कटवा दिए जाएं।"

"ठीक है, हाथ कटवा दिए जाएंगे, और कुछ?"

"और कुछ नहीं जनाव !···अच्छा नमस्ते।" कहकर नाथूराम ने श्यामा का हाथ थामा था और एक नज़र ओझा पर फेंककर कमरे से बाहर आ गया था।

लौटती हुई श्यामा ने फिर शीशों के कमरे के अन्दर उस दरिन्दे को देखा था। अबकी वार वह काफी खुलकर हंस रहा था। बापू को जब श्यामा ने इशारे से समझाने की कोशिश की थी तो नाथूराम ने भी उस आदमी को गौर से देखा था। नाथूराम को भी नहीं लगा था कि उसे कोई दण्ड मिला होगा। कोई आदमी इतना बेशर्म भी हो सकता है कि कोड़े खाकर भी हंसता रहे, यह अनुभव नाथूराम का नहीं था। उसने तो कोर्ट मार्शल का दण्ड भुगतने के बाद फौज के जवानों को मुंह छुपाकर दुबकते देखा था। बलात्कार का दण्ड भुगतते-भुगतते एक जवान तो आत्महत्या ही कर बैठा था। ये किस तरह के आदमी हैं? आदमी हैं कि कुछ और? नाथूराम की समझ में ही नहीं आया था। उसे लगा था जैसे इन कुछ औरों के पास सोचने-समझने और महसूस करने की ताकत ही नहीं बची है, उस ताकत के बिना ये सब दरिन्दे हो गए है। इन दरिन्दों के साथ उसे कैसा सलूक करना चाहिए? वह इस सवाल के साथ लड रहा था। वह श्यामा से पूछना चाहता था कि अगर उसे इन जानवरों को दण्ड देने के लिए पूरे अख्तियार दिए जाएं तो वह उन्हें क्या दण्ड देगी? पर उससे कुछ पूछने से पहले ही सहसा श्यामा ने ही नाथूराम से सवाल कर दिया था, "बापू, इन लोगों के पास इतनी धन-दौलत कहां से आती है?"

"ये सैकडों मील के घेरे में फैली पहाड़ी जागीर के मालिक हैं। इनके बुजुर्गों ने सन अठारह सौ सत्तावन की क्रान्ति में अंग्रेजों की जी-जान से सेवा की थी। उसी सेवा के बदले में इनाम के तौर पर यह जागीर अंग्रेजों से इनके बुजुर्गों को मिली थी। और रायसाहब का खिताब भी इनको अंग्रेजों ने ही दिया था।" नाथूराम ने कम से कम शब्दों में श्यामा को समझाने की कोशिश की थी।

"लेकिन अब तो अंग्रेज इस देश में नहीं है, हमारा देश आज़ाद है।" श्यामा की बालबुद्धि ने परोक्ष रूप से यह जानना चाहा था कि अब ये लोग किसके संरक्षण में पल रहे हैं!

"कौन कहता है कि अंग्रेज अब इस देश में नहीं हैं?" नाथूराम ने पहले की ही तरह पत्थर उठाया था और पूरी ताकत के साथ सामने की

चट्टान पर पटक दिया था। पत्थर के कई टुकड़े हो गए थे पर चट्टान पर खरोंच तक नहीं आई थी। फिर वह ठंडा-सा होकर आगे बोला था, "अब रायसाहबों की संतानें कुछ दूसरी तरह की उपाधियां पाकर नेता बन गई हैं और ये नेता लोग बिगड़ी हुई अंग्रेजियत का दूसरा नाम हैं?"

श्यामा ने पूछना चाहा था कि यह बिगड़ी हुई अंग्रेजियत क्या होती है? पर उसी समय धांय की आवाज हुई थी और आवाज के साथ ही एक जानवर ऊपर की पहाड़ी से लुढ़कता हुआ दो पेड़ों की सन्धि के बीच आ फंसा था। नाथूराम देखते ही पहचानकर बोला था, "कस्तूरी मृग है।"

जब हिरण को उठाने के लिए शिकारी नीचे उतरने लगे थे तो उनको देखकर भी नाथूराम के होंठ फुसफुसाए थे, "रायसाहब के आदमी हैं।" इस वक्त भी नाथूराम के हाथ की पकड़ श्यामा की कलाई पर बहुत सख्त हो गई थी। उसकी चाल भी बहुत तेज हो गई थी, इतनी तेज कि कहीं-कहीं तो श्यामा को उसके साथ भागना पड़ा था। और यह सख्ती और तेजी तब जाकर ढीली पड़ी थी जब चढ़ाई चढ़ने के बाद उन दोनों को अपने गांव पहरुआ के मकान और पेड़ दिखाई देने लगे थे।

श्यामा का ध्यान टूटा तो उसने देखा कि भीड़ के बीच चल रहा ओझा साथ के लोगों को हाथ मटका-मटकाकर कुछ समझाता जा रहा है। उसने अनुमान लगाया कि वह उमी की रीछ मारे जाने की कहानी ही सुना रहा होगा और बता रहा होगा कि औरत को श्यामा जैसी ही बहादुर होना चाहिए। श्यामा को इस बात का पता है कि ओझा ये सब बातें उस तक पहुंचने के लिए ही किया करता है और बातें पहुंचाकर चाहता है कि···। ओझा की चाह का ध्यान आते ही श्यामा के जबड़े थोड़े सख्त हो गए और मुंह से निकल गया, "पेटू, भैंसा, सुअर।"

गालियां उगलकर उसके मन को थोड़ी तसल्ली हुई तो वह दराती की धार की तर्जनी उंगली से शिनाख्त करके फिर घास के साथ जैसे पत्थरों को भी काटती चली जा रही थी। उस अग्नि-ध्वनि में उसे अपने मरते पिता की दहाड़ सुनाई दे रही थी और सारी-सारी रात बैठकर कपड़े सिलती मां की पुरानी मशीन की सुबकती हुई किटकिट भी। इसी

आवाज में कहीं-कहीं छोटे भाई शैल की बीमारी के कारण चीखने-चिल्लाने की कातरता भी सुनाई दे रही थी। और साथ ही सुनाई दे रही थी—किसी नरभक्षी की नारकीय दहाड़, जो उसके होश संभालने से लेकर अब तक कभी किसी रूप में तो कभी किसी रूप में लगातार पूरे इलाके में आतंक की दहशत पैदा किए हुए थी।



उन दिनों शैल ने जन्म लिया था। उसके जन्म लेते ही जैसे सुचित्रा बंगालिन की इज्जत और भी अधिक बढ़ गई थी। पर वह बढ़ी हुई इज्जत नाथूराम के नसीब में नहीं थी। वह अपनी वीरता और साहस के झंडे गाड़कर, बड़ी ही शान से इस दुनिया से विदा हो गया था।

वसंत का मौसम था। ग्राड़, सेब और ग्रलूचे के पेड़ फूलों से लद गए थे। घास सूखकर भूरे रंग की हो गई थी। भेड़ें सूखे पहाड़ पर मस्ती से चर रही थीं। पालतू कुत्ता उनकी रखवाली कर रहा था। नाथूराम ढलान पर खड़े पुराने पेड़ के नीचे बैठा ध्यान में मस्त कोई पहाड़ी गीत गुनगुना रहा था। उसके हाथों में एक लम्बा-सा बांस था, जिसके एक सिरे पर हंसिए की शक्ल का बड़ा-सा गंडासा फिट था। वह गंडासे को पत्थर पर गीत की ताल पर घिस-घिसकर उसकी धार तेज कर रहा था। इसी गंडासे से वह पेड़ों की टहनियों और लतरों को काटकर धरती पर गिराता था। भेड़ें एक जगह इकट्ठी होकर उनके हरे-हरे पत्तों को चाव से चरती थीं। कुछ दिनों बाद वे टहनियां और लतरें सूखकर बालन बन जाती थीं जो रसोई के चूल्हे और आंगन के अलाव में जलने के काम आता था।

आज श्यामा घूम-घूमकर इसी बालन को एक जगह इकट्ठा करने में लगी थी। वह बापू के पास के पेड़ के नीचे बालन का ढेर लगाती जा रही थी। दूर-दूर से टहनियां खींचकर लाती और ढेर पर रखकर फिर लौट जाती। बीच-बीच में वह बापू के पास बैठे लेले की नरम-नरम पीठ सहलाकर प्यार भी कर जाती।

कुछ देर पहले उसने अपनी धोती का लड़ फाड़कर लेले के घायल

पैर पर पट्टी बांधी थी। आते वक्त लेला अपनी अबोधता के कारण एक छोटी-सी खड्ड में जा गिरा था। पता उस वक्त चला था जब उसकी मां भेड परेशान होकर खड्ड के पास उछल-कूद मचाने लगी थी और कुत्ता भी भौंक-भौंककर बेहाल होने लगा था। नाथूराम ने खड्ड में उतरकर लेले को बाहर निकाला तो पता चला था कि उसका एक पैर बुरी तरह से जख्मी हो चुका है। सिर्फ चार महीने का ही तो था बेचारा। जैसे शैल चार महीने का था वैसे ही यह लेला भी। संयोग से दोनों एक ही रात में पैदा हुए थे। सुचित्रा ने लेले का नाम रख दिया था शैल-बन्धु। सारा परिवार उसे भी शैल की तरह प्यार करता था। जब शैल-बन्धु के नर्म-नर्म बालों वाले गुदगुदे शरीर को शैल के साथ खाट पर लिटाया जाता था तब शैल की बड़ी-बड़ी आंखों में खुशी की चमक उभर आती थी। अब वही शैलबन्धु घायल हो गया था। नाथूराम परेशान था कि वह सुचित्रा को क्या जवाब देगा।

अभी नाथूराम कोई पाएदार जवाब ढूंढ भी नहीं पाया था कि पहाड़ी की चोटी की परली ढलान पर चरती भेड़ें जोर-जोर से मिमि-याती एक तरफ से दूसरी तरफ भागने लगी थीं। भेड़ों के पीछे उनके लेले भी एक-दूसरे से भिड़ते-टकराते भाग रहे थे। कुत्ता भी पहाड़ी की दूसरी तरफ देख जोर-जोर से भौंकने लगा था। नाथूराम ने समझा था कि कोई भेड़िया दिखाई दे गया होगा, इसीलिए जानवर भाग रहे हैं। वह गुनगुनाना बन्द करके, अपना गंडासा उठाकर पहाड़ी की चोटी पर पहुंचा तो देखकर हैरान रह गया कि हाथों में कीमती किस्म की राइफलें थामे चार शहरी शिकारी चले आ रहे थे।

उन्हें देखते ही नाथूराम ने कुत्ते को झिड़ककर चुप करा दिया था। लेकिन कुत्ता चुप होकर भी जबड़ों में गुर्राता रहा था। शायद उसे आदमी की बुराई की गन्ध मिल गई थी और वह उस गन्ध को अपने मालिक के सामने उजागर कर देना चाहता था। पर नाथूराम का ध्यान तो शिकारियों में टंक गया था, इसलिए वह कुत्ते की तरफ ध्यान ही नहीं दे सका था।

जब चारों शिकारी ऊपर चढ़ आए थे तो सबसे पहले जल्लाद से लग रहे एक तोंदवाले शिकारी ने नाथूराम की तरफ सवालिया आंखों से झांकते हुए खुर्दरी आवाज में पूछा था, "यहां जंगल के आसपास कोई

नहीं है क्या ?"

"है, लेकिन थोड़ी दूरी पर है।" नाथूराम ने सहज भाव से जवाब दे दिया था।

"कितनी दूरी पर है ?"

"वो, पहाड़ की चोटी देख रहे हैं न आप ?···उसकी दूसरी तरफ की घाटी में है।" नाथूराम ने हाथ उठाकर समझा दिया था।

"तब तो मारे गए।" दूसरा, शक्ल से पूरा हरामी-सा नजर आने वाला, पतला शिकारी अफसोस में बडबडाया था।

"हमारा मतलब है, हमे बहुत तेज भूख लगी है। उस गांव में कुछ खाने-पीने का बन्दोबस्त तो हो जाएगा न ?" तोंदवाला शिकारी फिर बोला था।

"लेकिन आप तो शिकारी लोग हैं और शायद रायसाहब के मेहमान भी, आपको खाना साथ लेकर आना चाहिए था।" नाथूराम के शब्दों में अब सहानुभूति थी।

"नहीं हम रायसाहब के मेहमान नहीं है। उनके शराब के कारखाने के मैनेजर स्टीफन के मेहमान हैं। बड़ा ही अजीब इलाका है। सुबह से भटक रहे है, एक भी शिकार लायक जानवर देखने तक को नसीब नहीं हुआ। एक शिकार मिला भी तो लकडबग्घा ! क्या लकड़बग्घा खाया जा सकता है ?"

"कहां से मिलता ? सब जानवरों को मारकर तो खा गए हैं राय-साहब के मेहमान शिकारी। कोई पलने-पुसने दें तब न।"

"चलो ऐसा करो, हम आग पर भून कर ही खा लेंगे, तुम हमें एक भेड़ का बच्चा ही दे दो।"

"लेला ?···"

"हा लेला, हम तुम्हें कीमत देंगे।"

"कैसी बात कर रहे हैं आप ! हम भेड़ें कसाइयों के हाथों बेचने के लिए नहीं पालते।" बोलकर नाथूराम पेड़ के नीचे घायल लेले के पास लौट आया था और आवाजें दे-देकर श्यामा को भेड़ें इक्ट्ठी करने के लिए कहने लगा था।

लेकिन चारों शिकारी ज्यादती करने के मूड में आ गए थे। वे धीरे-धीरे पेड़ तक उतर आए थे। तोंदवाले शिकारी ने शैलबन्धु को देखकर

पूछा था, "क्या हो गया है इसको ?"

"तपेदिक की बीमारी है।" बोलकर नाथूराम ने उसकी तरफ से मुंह फिरा लिया था।

शिकारी ने चेहरे पर तनाव लाकर अपना दायां हाथ साथी शिकारी की तरफ फैलाया था। साथी फौरन समझ गया था कि उसे किस चीज की जरूरत है। उसने चांदी की तरह चमकती हुई स्टील की चपटी बोतल अपने उस तोंदवाले साथी की तरफ बढ़ा दी थी। बोतल लेकर वह गटगट शराब पी गया था। उसके बाद एक-एक करके दूसरों ने भी शराब गटकी थी। फिर तोंदवाला शिकारी शैलबन्धु के पास बैठकर उसके नर्म-नर्म बदन को दबा-दबाकर देखने लगा था, "कितना वज़न होगा इसका ?"

"मैं कहता हूं हाथ मत लगाओ इसको !" नाथूराम की आंखों में खून उतर आया था।

गुर्राहट सुनकर शिकारी के होंठों पर कमीनगी से भरी बेरहम मुस्कान फैल गई थी। उसने एक क्षण के लिए नाथूराम की भोली-भाली निष्पाप आंखों में झांककर उसे तौला था फिर आगे बढ़कर कन्धे की रस्सी से शैल-बन्धु के दोनों पिछले पैर बांधकर साथी से बड़े इत्मीनान और आत्म-विश्वास के साथ बोल दिया था—"ले ज़रा इस रस्सी को खींच !"

रस्सी पेड़ के मोटे तने के ऊपर से होकर दूसरे शिकारी के ऊपर जा गिरी थी। दूसरे शिकारी ने उसे एक तीखी सरसराहट के साथ खींचकर पेड़ की जड़ों के साथ बांध दिया था और खुद अपनी राइफल का मुंह नाथूराम की तरफ करके खड़ा हो गया था।

एक उत्तेजक छटपटाहट के साथ शैलबन्धु पिछली टांगों के सहारे तने पर लटककर बुरी तरह से मिमियाने और झटकाने लगा था।

नाथूराम पूरे आवेश में चिल्लाया था—"नहींऽऽऽ !"

तीसरे शिकारी ने आगे बढ़कर चीखने के कारण तन गए नाथूराम के शरीर को पीठ पीछे से बाजुओं में कस लिया था।

पहले शिकारी ने एक और जल्लादी काम किया था, पहले से ही इकट्ठी की गई लकड़ियों को छटपटाते लेले के नीचे सरकाकर झट-से आग लगा दी थी। काले धुएं के बड़े-से बादल को उगलकर सूखी लकड़ियां फौरन आग की लपटें उगलने लगी थीं और उन लपटों के ठीक ऊपर

छटपटाते लेले की करुण चीखों से धरती और आसमान एक हो गए थे।

शिकारी की सख्त बाजुओं में धंसे नाथूराम को लगा था जैसे शैलबन्धु नहीं, उसका बेटा शैल आग की लपटों पर लटक रहा है और दो पल बाद ही लपटें और ऊंची उठेंगी और शैल का शरीर जलाकर राख कर डालेंगी। इस सोच के साथ ही पता नहीं उसके शरीर में ताकत कहां से आ गई थी कि उसने तीखी ललकार के साथ जोर का झटका दिया था और झटके के साथ ही पीठ पीछे का शिकारी उसकी पीठ पर से चकराता हुआ ढलान पर जा गिरा था और बहुत नीचे तक घिसटता चला गया था।

फिर एक क्षण बाद ही लम्बे बास का गंडासा तोंदवाले शिकारी की गर्दन पर जा टिका था। खच की हल्की-सी आवाज़ हुई थी और आवाज़ के साथ ही शिकारी की आधी से ज़्यादा गर्दन कटकर पीछे की तरफ लटक गई थी।

इसी क्षण बाकी बचे शिकारियों में से किसी एक के पास से धांय की आवाज़ के साथ गोली चली थी और गोली लगते ही नाथूराम पछाड़ खाकर जमीन पर जा गिरा था। गोली चलने की आवाज़ सुनकर कुत्ता भागता हुआ शिकारियों की तरफ लपका था, पर दूसरी गोली ने उसका भी काम तमाम कर दिया था।

गोलियां चलने की आवाज़ सुनकर श्यामा भी भेड़ें इकट्ठी करनी छोड़, भागकर पेड़ के पास पहुंची थी, पर तब तक तो सारा खेल ही खत्म हो चुका था। बचे तीनों शिकारी पकड़े जाने के डर से पास के जंगल में भाग चुके थे। नाथूराम, तोंदवाला शिकारी और कुत्ते की लाशें थोड़ी-थोड़ी दूरी पर खून से लथपथ पड़ी थीं। शैलबन्धु रस्सी जल जाने की वजह से आग में गिरकर खत्म हो चुका था। उसकी चिता से हवा के तेज़ झोंकों के साथ चिंगारियां उड़ रही थीं।

इस भयावने दृश्य को देखकर भी श्यामा न रोई थी और न चिल्लाई थी, बस बर्फ के लोंदे की तरह बापू की लाश पर जा गिरी थी और वह उस लाश पर तब तक बेहोश पड़ी रही थी जब तक गोलियों की आवाज़ सुनकर आ गए चरवाहों ने पानी के छींटे मुंह पर मारकर उसे होश नहीं दिलाया था।

भीड़ उस वक्त भी हैरान थी, क्योंकि अपने इलाके के किसी हरिजन

के हाथों दूसरे आदमी का कत्ल किया जाना भीड़ ने मुद्दतों बाद देखा था। "फौज में जाकर आदमी आदमी नहीं रहता, जानवर हो जाता है।" किसी बूढ़े ने दबी-दबी-सी आवाज में फतवा दिया था। यह फतवा उस वक्त श्यामा की समझ में नहीं आया था और न ही उसकी समझ में आया था कि अपने बापू की इस बहादुरी को लोग नफरत की निगाह से क्यों देख रहे हैं। बस समझ आया था तो मात्र इतना कि इलाके के सारे निहत्थी ज़िंदगी जीने वाले लोग खरगोश हैं, जो किसी भी प्रकार के खतरे को झेलने की महानता को छोटापन समझते हैं।

● ● -

ओझा और उसके साथ के लोग नाले की चट्टानों के पार आते ही गांव के लोगों को दिखाई पड़ गए। वे सब इस तरह से धीरे-धीरे सरक रहे थे जैसे बेगार में शिकार के लिए हांका लगाने की वजह से थक-हारकर लौट रहे हों।

उन्हें देखते ही औरतें चट्टानों से पीठें हटाकर थोड़ा आगे बढ़ आईं। चन्देरी तो बाकर की बाजुओं में पोटली देख पहले से भी कहीं ज्यादा ज़ोर-ज़ोर से विलाप करने लगी। कुछ औरतें हाथ पकड़कर उसे ऐसा करने से रोकने और ढाढस बंधाने लगीं।

ओझा को सामने देखते ही डाक्टर तुलसी उसके पैरों में झुक गए। ओझा ने तुलसी की पीठ पर झाड़न छनकाकर आशीर्वाद दिया और साथ ही दाढ़ी वाले युवक की तरफ गहरी नज़र से देखा, "ये छोकरा कौन है ?"

"इस गांव के स्कूल का नया मास्टर है। नाम है दिनेशचन्द्र शर्मा। शहर से लौटते हुए रायसाहब के डाकबंगले के पास मिल गया था। मुरारी के खोखे पर बैठा चाय पी रहा था। मुझे देखते ही खड़ा हो गया और दमकड़ी गांव का पता पूछने लगा। मैंने किराये की एक खच्चर पर सामान लदवाकर साथ ले लिया। बस अभी पहुंचा ही है।" डाक्टर तुलसी ने सहज भाव से जवाब दे दिया।

ओझा ने दिनेश की तरफ भी झाड़न छनका दिया, इस अन्दाज़ में

जैसे कह दिया हो—तब कोई बात नहीं।

इसके बाद ओझा औरतों की तरफ मुड़ा। उसका इशारा पाते ही बाकर ने पोटली चन्देरी के सामने रख दी। चन्देरी उस पोटली के सामने घुटने टेककर बेहाल होने लगी। उसके दोनों बेटे मां को इस हाल में बिटर-बिटर ताकते रहे। ताकते-ताकते जब उनकी बरदाश्त का घड़ा भर गया तब वे भी विदा होती दुलहन की तरह बाकर से लिपटकर सुबकने लगे।

ओझा समझ गया कि अब ज्यादा देर करना बेकार है। उसने पोटली के ऊपर झाड़न छनकाया, जिसका मतलब था कि अब अन्तिम क्रिया-कर्म की तैयारी की जाए। चूंकि बच्ची बहुत छोटी थी, इसलिए उसे जलाने की बजाय दफनाने का ही इन्तजाम किया जाने लगा।

गांव से थोड़ा हटकर, बेकार-सी पथरीली जमीन में एक छोटा-सा गढा खोदा गया और पोटली को उसमें रखकर बन्द कर दिया गया। इसके बाद उसपर कुछ भारी पत्थर रख दिए गए ताकि कोई जानवर पोटली को निकालकर खा न जाए।

ओझा ने झाड़न छनका-छनका कर कुछ मंत्र पढ़े और फिर झाड़न को बगल में दबाकर बाकर के सामने आ खड़ा हुआ। बाकर ने कुछ रुपये निकालकर ओझा को देने चाहे पर ओझा ने उन्हें स्वीकार नहीं किया। बाकर ने नोटों में कुछ और नोट मिलाए पर ओझा ने फिर भी उन्हें स्वीकार नहीं किया। अन्ततः बाकर ने जेब के सारे नोट मिलाकर ओझा को पेश किए, तब ओझा ने एक हल्की गुर्राहट के साथ उन्हें स्वीकार कर लिया और खलवा तथा चेतू को चलने का इशारा करके जल्दी-से बड़ी चट्टान के पीछे ओझल हो गया।

● ●

ओझा के चले जाने के बाद गांव की औरतों और मर्दों की भीड़ बच्ची की ताजा बनी कब्र के पास पेड़ के नीचे गोल घेरा बनाकर बैठ गई। अब भीड़ इस समस्या पर विचार करना चाहती थी कि प्रेतवाले इस भयंकर संकट से छुटकारा कैसे पाया जाए? डाक्टर तुलसी के इशारे पर दिनेश भी

घेरे की पंक्ति में बैठ गया, लेकिन उसे माजरा पूरी तरह से समझ नहीं आया। जो समझ आया वह बस यही था कि किसी का कोई कीमती और प्यारा कुत्ता मर गया है जिसकी लाश गठरी में बांधकर दफनाई गई है और अब सब लोगों में मिठाई बांटी जाएगी। क्योंकि जालंधर में एक सेठ नेता के कीमती कुत्ते के मर जाने पर उसने इसी तरह का संस्कार होते देखा था। किसी से कुछ पूछने का साहस उसको इसलिए नहीं हुआ था कि पूरी की पूरी भीड़ में से कोई किसी से बात ही नहीं कर रहा था। सब लोग चाबी वाले खिलौनों की तरह बस हिल-डुल रहे थे। इस तरह की गुमसुम और गूंगी भीड़ उसने जिन्दगी में पहली बार देखी थी।

अब भी भीड़ बहुत देर से चुपचाप बैठी थी। कोई भी बात शुरू करने का साहस नहीं कर रहा था। बस, बीच-बीच में चन्देरी के सुबकने की आवाजें शान्ति को भंग कर जाती थीं। आवाजें ज़रा ऊंची होती थी तो झुके हुए सिरों में से कुछ सिर एक क्षण के लिए ऊपर उठ जाते थे और डाक्टर तुलसी की ओर प्रश्न-भरी निगाह में देख फिर झुक जाते थे।

आखिर डाक्टर तुलसी ने ही थोड़ा खांसकर धीमी आवाज में बोलना शुरू किया; "मैं शहर गया हुआ था कि पीछे से यह भयंकर दुर्घटना हो गई। मुझे सुनकर बहुत तकलीफ हुई। चन्देरी की वह लड़की महुआ तो सचमुच चांद का टुकड़ा थी। इस इलाके में गोरे लोग नहीं है लेकिन उसके चेहरे से गोरेपन की झलक आती थी। मेरे पास आती थी तो बोलती थी—'डाक्टर दादा, मुझे कोई ऐसी दवाई दो कि मैं जल्दी-से बड़ी हो जाऊं।' शायद वह जानती थी कि बड़ी होना उसके नसीब में नहीं है। अच्छा, जो भगवान की मर्जी, भगवान के सामने किसका बस चलता है।"

डाक्टर तुलसी की बात सुनकर चन्देरी फिर ज़ोर-ज़ोर से रोने लगी। दूसरी औरतें फिर अपना कर्त्तव्य पूरा करने लगी। दिनेश की भी समझ में आ गया कि जिस गठरी को वह कुत्ते का शव समझ रहा था, वास्तव में उसमें कुत्ते का नहीं बल्कि किसी चांद जैसी खूबसूरत लड़की का शव था। लेकिन यह उसकी समझ में अब भी नहीं आया कि डाक्टर साहब दुर्घटना शब्द का इस्तेमाल क्यों कर रहे हैं।

डाक्टर तुलसी कुछ देर चुप रहकर फिर बोले, "हमें इस प्रेत का

कोई न कोई इन्तजाम करना ही पड़ेगा, इन्तजाम न किया गया तो यह प्रेत धीरे-धीरे हम सबको खत्म कर देगा !"

डाक्टर साहब की बात सुनकर एक ब्राह्मण-सा लगने वाला बूढा आदमी खडा हो गया और गुस्से मे शब्दो को चबाता हुआ-सा बोला, "मैने तो पहले ही कहा था कि हमे प्रेत-बाधा दूर करने वाला यज्ञ करवाना चाहिए, लेकिन मेरी किसी ने नही सुनी। सब ओझा को भगवान समझकर पूजते रहे। अब भुगतो ! भुगतने के सिवा चारा ही क्या है !"

दिनेश को प्रेत वाली बात भी समझ नही आई। उसकी उत्सुकता बढी और उसने डाक्टर साहब से पूछने के बहाने सबसे पूछा, "माफ करना डाक्टर साहब, यह प्रेत वाली बात मेरी समझ मे नही आई !"

दमकडी गाव के मर्दो और औरतो के लिए यह हैरत की बात थी। जो आदमखोर प्रेत इलाके के बच्चो और औरतो को निगलता चला जा रहा था, उसके बारे मे इस आदमी को कुछ भी नहीं पता था। सबको लगा कि या तो यह आदमी पागल है या बदमाश, जो इस तकलीफ की घडी मे भी सबका मज़ाक उड़ा रहा है। चन्देरी ने उसे डांटा, "इस धरती के आदमी हो या कि आसमान के, कौन हो तुम ?"

इस सवाल का जवाब डाक्टर तुलसी ने ही दिया, "एक हफ्ता पहले सरपच को सरकारी चिट्ठी आई थी कि एक पंजाबी मास्टर इस इलाके में आने के लिए मान गया है, शिक्षा अधिकारी के हैड क्लर्क के किसी पंजाबी दोस्त का लड़का है। इस इलाके मे पजाब के किसी शहर से सीधा आ रहा है। क्यों भाई, ठीक कह रहा हूं न ?"

दिनेश ने डाक्टर तुलसी के सवाल का उत्तर स्वीकृति सूचक सिर हिलाकर दिया।

अब डाक्टर तुलसी दिनेश का पक्ष लेते हुए बोले, "अब इसपर क्या गुस्सा करना ! इस बेचारे को आदिवासियो के इस बीहड़ इलाके की कठिनाईयों और मुसीबतों के बारे मे कुछ भी पता नही है।"

लेकिन दिनेश को अपने आपको बेचारा कहा जाना अच्छा नही लगा। वह अपनी आवाज़ में थोड़ी तल्खी भरकर बोला, "क्यों, इसमे पता न होने की ऐसी कौन-सी बात है ? आप लोग भी इंसान हैं और मैं भी इंसान हूं। इंसानों से इंसानों के दुःख-दर्द और मुसीबतें कहां छिपे रहते है ?"

"नहीं, तुम हमारे जैसे इंसान नहीं हो। सुरक्षित इलाके में पले सुरक्षित इंसान हो। तुम हम लोगों की तकलीफों को नहीं समझ सकते।" अपनी बात कटती देख डॉक्टर तुलसी ने तर्क किया।

"नहीं, मैं सुरक्षित इन्सान नहीं हूं। सुरक्षित होता तो इस बीहड़ जंगली इलाके में न आता। आता भी तो एक शिकारी के रूप में आता और इस वक्त किसी एयर कंडीशंड कमरे में बैठा बीयर पी रहा होता। आप लोग जो मुझे समझ रहे हैं, मैं वह नहीं हूं। मैं तो आप लोगों जैसा ही एक असुरक्षित इंसान हूं।"

"हमारी तरह के एक असुरक्षित इंसान हो तो बताओ कि तुमने किसी प्रेत को देखा है?"

"प्रेत ?"

"हां, प्रेत! जिन्दा औरतों और बच्चों का खून पी जाने वाला प्रेत। देखा है ?"

डाक्टर तुलसी के इस क्रूर सवाल के साथ ही सबकी आंखें सवालिया निशानों की तरह दिनेश को घूरने लगीं। उन आंखों की पुतलियों में दिनेश को प्रेत का वह चेहरा दिखाई देने लगा जो रामायण में वर्णित ताड़का या कुम्भकर्ण और श्रीमद् भागवत में वर्णित वृकासुर और बकासुर जैसे राक्षसों के चेहरों से मिल-जुलकर बना था। जिसपर कोई अवतार ही काबू पा सकता था, धरती का साधारण तरीके से पैदा हुआ इंसान नहीं। दिनेश के मुख से जवाब में केवल इतना निकला; "तुम लोग बहुत ही घिनौने और बदबूदार संस्कारों से ग्रसित इंसान हो, तुम्हें इन संस्कारों से मुक्त होने की कोशिश करनी चाहिए।"

दिनेश के वाक्य सुनकर सबको लगा जैसे उसने एक साथ सबको एक भद्दी गाली दी है। "मास्टर, तुम अपने इस थोबड़े को लगाम दो! तुम सरकारी आदमी हो, इसका यह मतलब नहीं कि तुम हम सबको गालियां बको।" इस बार बाकर उठकर सामने आ गया और आवेश में मुट्ठियां सख्त-नर्म करने लगा।

"मैं गाली दे रहा हूं?" दिनेश के दोनों हाथ हैरानी में फैल गए।

"हां, तुम गाली दे रहे हो!" समवेत स्वर में बोलकर बाकर के दोनों बेटे भी खड़े हो गए।

"हां, हां, यह गालियां बक रहा है!" घेरे में से कई आवाजें उभरीं

और उन आवाज़ों के साथ ही बहुत-से लोग मिस्र की ममियों की तरह टांगें सीधी करके खड़े हो गए। देखते ही देखते नंग-धड़ंग ममियों का एक वहशी घेरा तैयार हो गया जो दिनेश को बीच में लेकर धीरे-धीरे सिकुड़ने लगा।

दिनेश को लगा, जैसे भीड़ बस भूखे भेडियों की तरह उस पर झपटने ही वाली है। अभी एक क्षण बाद ही भीड़ के तेज नाखूनों वाले पंजे होंगे और होगी उसके शरीर की बोटी-बोटी। अपनी रक्षा के लिए उसे अपने पैरों के पास पड़े कुछ पत्थर ही दिखाई दिए और वह तेज़ी से उन पत्थरों को उठाने के लिए झुका ही था कि अचानक पीछे से उसकी गर्दन पर एक सबल पंजा आकर जम गया। पंजा उसे घसीटता हुआ घेरे से बाहर ले गया। थोडी दूर घसीटने के बाद पंजे ने उसे छोड़ दिया। दिनेश ने आंखों के सामने बिखरे सिर के बालों को समेटकर देखा तो वह हैरान रह गया। उसे बचाकर निकाल लाने वाला पंजा डाक्टर तुलसी का था। एक बूढे आदमी के पंजे मे इतनी बला की ताकत हो सकती है, इसकी वह कल्पना भी नही कर सकता था।

"आओ, मेरे साथ आओ!" कहकर डाक्टर तुलसी एक तरफ को चल दिए। दिनेश एक बार भीड के अन्दर पड़े अपने सामान की तरफ नजरें फेंककर डाक्टर साहब के पीछे-पीछे हो लिया। अचानक पैदा हो गई स्थिति मे उसके लिए सामान इतना महत्त्वपूर्ण नही रहा था जितना कि स्थिति को समझना।

भीड़ अब, बीच से खाद्य पदार्थ उठ जाने के कारण कुलबुलाने वाले चीटियों के झुण्ड की तरह, कुलबुला रही थी, और दिनेश पीछे मुड़-मुड़कर उस कुलबुलाहट को समझने की कोशिश कर रहा था।



डाक्टर तुलसी एक छोटे-से झोंपड़ीनुमा मकान के सामने आकर रुक गए। मकान के बाहर दीवार पर शायद कोयले से लिखा हुआ था—दवाईखाना। तुलसी ने दवाईखाने के पुराने घुन खाए किवाड़ों का ताला खोलने के लिए जेब से चाबियां निकाली ही थीं कि दो मटमैले, नंग-धड़ंग

बच्चे आकर उसकी टांगों के साथ लिपट गए और खुशी से हुल्लड़ मचाने लगे।

"अरे ठहरो, ठहरो तो !" तुलसी ने बच्चों की गिरफ्त से पैदा होने वाले आनन्द में सराबोर होते हुए ताला खोला। अन्दर जाकर झोले में से कुछ खाने का सामान निकालकर बच्चों को दिया। भूखे बच्चे खाने के सामान पर टूट पड़े। लड़के की अपेक्षा लड़की ज्यादा भूखी दिखाई दे रही थी। उसने जल्दी से सब कुछ निगलकर तुलसी के सामने फिर हाथ पसार दिया। अबकी बार डाक्टर ने शहर से विशेष रूप से लाई डबल रोटी के दो टुकड़े निकालकर उसके हाथ पर रख दिए। लड़के ने हाथ नहीं पसारा, लेकिन तुलसी ने उसकी तरफ भी दो टुकड़े बढ़ा दिए। उसने खुशी-खुशी ले लिए। इसी समय बाहर से एक खुरदरी आवाज़ सुनाई दी, "सूरज ! ओ रूपा !! कहां मर गए हो तुम दोनों !!!"

आवाज़ सुनते ही दोनों बच्चे चौकस हो गए। बाहर खड़े दिनेश ने देखा—अपनी लकवाई टांगों को जमीन पर घसीटती हुई एक बीमार-सी फटेहाल औरत डाक्टर तुलसी के दवाईखाने की तरफ बढ़ी चली आ रही थी। अपनी बगल से बच्चों को सरपट भागकर जाते देख वह उनको गालियां बकती हुई मशीन की तरह तेज़ी-से घूम गई। भागते हुए सूरज के हाथ से डबल रोटी का एक टुकड़ा जमीन पर गिर गया। औरत ने लपककर उसे उठा लिया और बच्चों की तरफ से ध्यान हटाकर खाने में तल्लीन हो गई।

डाक्टर तुलसी ने आगे बढ़कर उसे दो टुकड़े और देने चाहे। उसने पहले हाथ का लंगूरिया पंजा खोलकर इंकार की मुद्रा बनाई, पर दादा ने तकरार की तो स्वीकार कर लिया। फिर टुकड़ों को फटी-पुरानी धोती के एक कोने में बांधकर वह उसी तरह घिसटती हुई वापस चली गई।

डाक्टर तुलसी ने दिनेश को बताया, "जगतू की घरवाली है। और जो अभी गए है, जगतू के बच्चे है। निर्दोष होकर भी जेल काट रहा है बदनसीब। अभी तो पूरा डेढ़ साल बाकी है। पता नहीं तब तक इन बेचारों का क्या हाल होगा। जेल से छूटने के बाद वह इनको देख भी सकेगा या नहीं। औरत को तो चीता ही उठाकर चलता बना था। हो-हल्ला मचाकर लोगों ने बचा लिया। फिर भी दोनों टांगें बेकार हो गई। अब तुम ही बताओ, इन लोगों का जीना भी कोई जीना है ?"

दिनेश ने जिज्ञासा प्रकट की तो तुलसी ने जगतू के जेल जाने की दर्दभरी कहानी उसे बाहर खड़े-खड़े ही संक्षेप में सुना दी। तुलसी को लगा, कहानी सुनकर दिनेश के चेहरे पर उदासी पुत गई है। उन्हें महसूस हुआ कि कुछ क्षण और वे दिनेश के चेहरे की तरफ देखते रहे तो उदासी उन पर भी अपना अधिकार जमा लेगी। लेकिन इस वक्त वे उदास नहीं होना चाहते थे। आठ घण्टे जाने और आठ घण्टे आने के तकलीफ देह सफर के बाद शहर से लाई गई ताजगी को कायम रखना चाहते थे। उन्होंने दिनेश को अन्दर चलने के लिए कहा—इस अन्दाज़ में कि यह काम उन्हें बहुत पहले करना चाहिए था।

दिनेश के बैठने के लिए बांस का मूढ़ा देकर डाक्टर तुलसी एक कोने में कुछ बर्तन रखकर बनाई गई रसोई में बत्ती वाला स्टोव जलाकर चाय बनाने लगे। उधर तुलसी चाय बनाते रहे और इधर दिनेश युद्ध में बन्दी बनाकर लाए गए सिपाही की तरह बिना हिले-डुले, चुपचाप मकान के झरोखों में से पहाड़ों की चोटियों और उनके बीच की घाटियों के सुहावने दृश्य देखता रहा। देखता रहा कि मकान की छत के भार को संभाले खड़ी लकड़ी की थम्भी पर एक बारह बोर की देसी बन्दूक लटक रही है। बन्दूक के पास हंसिये के आकार की तीन-चार दरातियां एक पर एक के क्रम से तिरछी टंगी हैं। दरातियों की चमकदार धार बताती है कि इनके एक ही वार से किसी भी जानवर की मोटी से मोटी गर्दन धड़ से अलग की जा सकती है। सामने, छोटे-बड़े पत्थर चिन-चिनकर खड़ी की गई दीवार पर एक छोटे आकार के रीछ की मुण्ड से जुड़ी खाल टंगी है। खाल के नीचे की ज़मीन पर लकड़ी की एक पुरानी लेकिन मज़बूत लग रही मेज़ पड़ी है। मेज़ पर छोटे-बड़े आकार की अनगिनत शीशियां रखी हैं, जिनमें सफेद-सफेद गोलियां और तरल पदार्थ भरे हैं। यह सब देख दिनेश इतना प्रभावित हुआ कि उसके दिमाग में बरबस एक सवाल कौंध गया—'फिर ये लोग इतने कायर और डरपोक क्यों हैं?'

"लो चाय पिओ!" डाक्टर तुलसी की आवाज ने उसे सवाल की गिरफ्त से बाहर खींच लिया। दिनेश ने चाय का गिलास ले लिया। अभी पहला ही घूंट भरा था कि तुलसी ने ही अपनी तरफ से सवाल दाग दिया, "अच्छा तो इस वक्त तुम सीधे पंजाब से ही आ रहे हो?"

दिनेश समझ गया कि परिचय बढ़ाने की शुरुआत इसी तरह के

व्यर्थ के सवालों से हुआ करती है। उसने जवाब दिया, "जी!"

"वह तो खाते-पीते अमीर लोगों का प्रदेश है।"

"शायद आप इसलिए कह रहे हैं कि सोना उगलती उपजाऊ धरती और उसके अस्सी प्रतिशत उत्पादन पर मुट्ठी-भर शक्तिशाली और सम्पन्न लोगों का अधिकार है।"

"नहीं, इसलिए कह रहा हूं कि उस इलाके में इस पहाड़ी इलाके जैसे निहत्थे और मजलूम लोग नहीं बसते।"

"आप ठीक कह रहे हैं। उस इलाके में जगतू की पत्नी और उसके बच्चे जैसे मजलूम लोग नहीं हैं। जगतू जैसे बेबस और निहत्थे लोग भी नहीं हैं। जिल्लत-भरी जिन्दगी की फांसी को वहां के लोग गर्दन तुड़वाकर भी गर्दन से निकाल फेंकते हैं। लेकिन आप यह सब कैसे जानते हैं? क्या आप भी पंजाब के हैं?"

"क्या मेरा कद-काठ तुम्हें पंजाबियों का लगता है?"

दिनेश ने संकोचपूर्वक सिर हिला दिया, "नहीं।"

"मैं तो उत्तरप्रदेश का हूं। एक शिकार खेलनेवाली अंग्रेज पार्टी के साथ इस इलाके में आया था। एक घायल रीछ की पकड़ में आकर बुरी तरह से ज़ख्मी हो गया था। यह बायीं टांग तो उसने चबा ही डाली थी।" डाक्टर तुलसी ने अपनी बड़े-बड़े चकत्तों वाली टांग पाजामा उठाकर दिखा दी।

"सचमुच, पिंडली का मांस तो उसने पूरा का पूरा उधेड़कर रख दिया है। आदमखोर रीछ था क्या?"

"नहीं, इस इलाके में रीछ आदमखोर नहीं होते। विदेशों में भी किसी खास कारण से ही होते हैं। रूस का ग्रिज़र नाम का रीछ ज़रूर मांस खा लेता है और आदमखोर भी हो जाता है। आदमखोर हो जाने के बाद वह शेर और चीते से भी कहीं ज्यादा भयंकर होता है।"

"तो फिर उसके बाद?"

"उसके बाद?...हां, पार्टी मुझे कुछ इनाम के रुपयों के साथ यहीं छोड़कर चली गई। दरअसल मैंने ही जाने से इंकार कर दिया था। इस दमक्ड़ी गांव के लोगों ने मुझे बचा लिया। जानवरों के काटने से बचाने की कई उम्दा दवाइयों के टोटके जानते हैं ये लोग। ओझा के पास तो दवाइयों के कई जादुई नुस्खे हैं। तब से अपनी जान इन्हीं लोगों की

अमानत समझकर इन्हीं के बीच रह रहा हूं। ये लोग मुझे 'डाकधर' कहते हैं।'

"डाक्टर क्यों ?"

"बचपन से ही मुझे होम्योपैथी में काफी दिलचस्पी रही है। बाद मे एक डाक्टर के यहां रहकर भी मैंने बहुत कुछ सीखा। वह ज्ञान यहां आकर काम आया। इन गरीब लोगों के लिए होम्योपैथ की सस्ती दवाइयां बड़ी कारगर और मुफीद साबित होती हैं। वह इसलिए भी कि इनका खून बिलकुल पाक है। अंग्रेजी दवाई का पहले से असर उसमें मिला नहीं है। होम्योपैथ की दवाइयां पाक खून पर बड़ी जल्दी असर करती हैं।"

"अच्छा तो आप इस इलाके के एक-मात्र होम्योपैथ डाक्टर है। बड़ी खुशी हुई दादा आपसे मिलकर। लेकिन एक बात समझ नहीं आई कि आपने खूखार जानवरों से भरा यह इलाका…"

"क्यों चुना है यही न ? शुरू-शुरू में मैं खुद भी अपने-आप से यही सवाल करता था और सोचता था कि मैं अव्वल दर्जे का अहमक हूं। क्योंकि कुछ साल बाद ही मेरी एक-दूसरे रीछ से मुठभेड़ हो गई थी। मैंने भी उसे ऐसा सबक सिखाया कि हमेशा-हमेशा के लिए याद रखेगा। पूरे तीन साल से उलटा लटका रहा है इसी तरह इस दीवार पर। देख रहे हो न ?" दादा ठहाका मारकर हंस पड़े। उनके ठहाके की आवाज से डरकर दो चिड़ियां, जो पास ही डबलरोटी के कण चुन रही थीं, फुर्र से उड़ गई।

दिनेश ने अब इस बात की तरफ गौर किया कि रीछ का सिर सचमुच नीचे की तरफ है। उसे हैरानी हुई कि इतनी महत्त्वपूर्ण चीज पर उसका ध्यान अब तक क्यों नहीं गया। वह डाक्टर दादा के बच्चों जैसे साफ और निष्कपट स्वभाव से प्रभावित हुआ। सहसा उसके मुंह से बच्चों को उत्साहित करने जैसा एक सवाल निकल गया, "अच्छा तो यह रीछ आपका मारा हुआ है ?"

"अरे नहीं, मारा हुआ मेरा नहीं है, मैं तो इसके साथ सिर्फ कुश्ती लड़ा था। मारा तो इसे श्यामा बेटी ने है।"

"श्यामा बेटी ने ?"

"हां, श्यामा बेटी ने।"

"मेरा मतलब है, एक औरत ने !"

"अरे नहीं, वह औरत कहां है । दस मर्दों जैसी एक मर्द है। उसकी दराती के एक ही वार से पंजा कटकर दस गज दूर जा गिरा था, इस नामुराद का। देख नहीं रहे, इस खाल के दायें हाथ को टांकों से सिला हुआ है। फिर तो इस पर बिजली की तरह टूट पड़ी वह शेरनी। बस चीखने भी नहीं दिया पाजी को। वह तो पास ही कहीं घास काट रही थी, शोर सुनते ही फौरन भागकर चली आई। नहीं तो मैं अपाहिज इतने बड़े रीछ का मुकाबला कैसे कर सकता था ?"

"भई कमाल की बात है !"

"अरे एक कमाल क्या, तुम देखोगे तो जानोगे ! साक्षात् महाकाली है महाकाली ! और है भी महाकाली की उपासिका। सब लोग उससे इस तरह डरते हैं कि कोई खूंखार शेर से भी क्या डरता होगा !"

"आप भी डरते हैं ?"

"क्यों, मैं क्यों डरने लगा ? मैं तुम्हें कोई बुरा आदमी लगता हूं ?"

"अच्छा, तो उससे बुरे आदमी ही डरते हैं।"

'हां, बुरे आदमी ही डरते हैं। अच्छे लोगों की तो वह बड़ी इज्जत करती है। भई आफरीन है उस लड़की के, अभी छोटी-सी उम्र है पर अच्छे और बुरे की पहचान एक नजर में कर लेती है।"

"क्या उम्र है उसकी ?"

"यही कोई इक्कीस-बाईस की होगी।"

"इसे आप छोटी उम्र कहते हैं ?"

"इस इलाके में इस उम्र की लड़कियां बिलकुल नासमझ होती हैं। गांव है न और वह भी आज के जमाने की नई रोशनी से बिलकुल बेखबर इलाके का पहाड़ी गांव। जंगली इलाका है न, वह भी आदिवासियों की आदिम आदतों से घिरा जंगली इलाका !"

"तो इस जंगली इलाके में यह लड़की···क्या नाम बताया आपने ?"

"अं···श्यामा।"

"श्यामा ही, अलग ढंग की लड़की क्यों है ?"

"पता नहीं।"

"कोई जादू-टोना जानती है क्या ?"

"जादू-टोना तो नहीं जानती, बस उसकी नजर में ही ऐसी ताकत है।

बड़ी ही पवित्र नज़र है उसकी।"

"अच्छा डाक्टर दादा, एक बात बताओ, इस इलाके में आदमखोर शेर बहुत ज्यादा होते है क्या?"

"पहले तो इतने नही होते थे, अलबत्ता अब बहुत ज्यादा होने लगे है।"

"ऐसा क्यों!"

"जंगल के जानवर शिकारी मारकर खा गए। शेरो या ऐसे ही मांसाहारी जानवरों के लिए खुराक ही नही बची। अब उनका भोजन या तो इलाके के पालतू जानवर हैं या बच्चे, औरतें और बूढ़े।"

"इन मांसाहारियो को भी तो, खत्म हो जाना चाहिए था शिकारियों के हाथों?"

"ये भी खत्म होने जा ही रहे थे कि सरकार ने इनकी नस्ल को बचाए रखने के लिए एक कानून लागू कर दिया कि इनको मारने वाले शिकारी को कड़ा दण्ड दिया जाए। एक साल की सख्त कैद और एक हजार रुपये का जुर्माना। कौन सह सकता है भला? अब कोई शिकारी बुलाए जाने पर भी इस इलाके मे नही आता। हमने तो पिछले तीन साल से बन्दूक उठाकर भी नहीं देखी। डर है कि कही चलाना ही न भूल गए हों।"

"कौन-कौन से मांसाहारी जानवर है जिनका शिकार नही किया जा सकता?"

"शेर, गुलमोहर, तेंदुआ, बाघ और रीछ सभी इस इलाके में हैं। खैर रीछ तो मांसाहारी नही है, पर सरकार ने अब उनके शिकार पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया है। चीता अब बिलकुल भी नही बचा है।"

"आदमियो की एक नस्ल का बलिदान देकर, जानवरों की कुछ नस्लों को बचाने की कोशिश करना क्या आप ठीक समझते हैं दादा?" सवाल कर दिनेश खड़ा हो गया। उसको स्कूल के एकमात्र कमरे के साथ लगी छोटी-सी कोठरी की सफाई करके अपने लिए रात को सोने की तैयार करनी थी। चन्देरी के परिवार के शोक में शामिल होने डाक्टर दादा सीधा उसे स्कूल ही ले गए थे। गन्दगी से भरी अपना सामान रखकर वह ताला लगा आया था। बस कन्धे वाला एक झोला उसने साथ लिया था और भीड़ में

था। उसका दिल हुआ कि डाक्टर दादा से कहे कि मेरा झोला तो वहीं रह गया है, पर कहने से पहले ही उसने देखा—एक कुबड़ाया-सा आदमी उसका झोला उठाए आ रहा है।

आते ही आदमी ने झोला दिनेश के सामने रख दिया, "आज गाव में जो कुछ हुआ उसके लिए हम बहुत शर्मिंदा हैं।"

"अरे, इसमें शर्मिंदा होने की क्या बात है, यह सब तो चलता ही रहता है।" डा० दादा ने आदमी की शालीनता का उत्तर शालीनता में दिया। फिर पूछा, "चाय पिओगे?"

"नहीं डाकघर दादा, सुबे से जानवरों की खबर-सार नहीं ली, अब चलूंगा।" वह आदमी छोटे-छोटे डग भरता हुआ आंखों से ओझल हो गया।

दिनेश को वह आदमी बिलकुल उस गाय जैसा लगा जो किसी गधे या भेड को सींग रहित देखकर मारने को दौड़ती है, सिर्फ यह दिखाने के लिए कि वह भी कुछ है लेकिन खुरली पर लौटते ही अपना दूध अपने बछड़े को न पिलाकर खुरली के मालिक को पिलाती है। उसके दिमाग मे सवाल आया—तो क्या इन लोगों ने उसे गधा या भेड़ समझा था? जवाब में उसके होंठों पर हंसी उभर आई—बढ़ी हुई दाढ़ी को देखकर किसी को भी यह मुगालता हो सकता है।

डाक्टर दादा को दिनेश की हंसी बे-मतलब लगी, "क्यों, हंस क्यों रहे हो? क्या इस आदमी का व्यवहार तुम्हें अच्छा नहीं लगा?"

"नहीं दादा, ऐसी बात नहीं है। मैं सोच रहा था, यहां आने का फैसला करके मैंने अच्छा ही किया है। मुझे पता चल गया था कि इस इलाके में कोई भी मास्टर दो-तीन महीने से ज्यादा नहीं टिकता। पिछले छः महीने में जिस भी मास्टर का यहां तबादला किया गया वह नहीं आया। उसने यहां आने की बजाय नौकरी छोड़कर बेकार हो जाना ज्यादा बेहतर समझा। इस इलाके के बारे में अफवाहें ही कुछ इस तरह की फैली हुई हैं। एक अफवाह यह भी है कि यहां के लोग नीचे के लोगों को मारकर खा जाते है।"

"फिर तुम क्यो आए?"

"मैं यह भी जानता था कि यह सिर्फ छः महीने की अस्थायी नौकरी है। फिर भी अंकल की चिट्ठी पाते ही मैं चला आया। दरअसल अपने

अनुभवों में इजाफा करने के लिए मुझे ऐसे ही इलाके की तलाश थी और मैंने इस अवसर को खोना मुनासिब नहीं समझा। अब तो यह सोच रहा हूं कि जहां आप जैसे दादा हैं और श्यामा जैसी लड़कियां, वहां आकर मैंने अच्छा ही किया है।"

दिनेश चलने को हुआ तो दादा ने उदास-सा होकर कहा, "खाना खाकर चले जाना, अभी बना देता हूं।"

"नहीं दादा, आज का खाना मेरे पास है। अंकल ने चलते वक्त कुछ पराठे बनवाकर साथ बांध दिए थे। सोचता हूं दिन रहते कोठरी की सफाई कर लूं।"

"तुम ज़रा ठहरो, सफाई के लिए मैं तुम्हारे साथ आदमी भेजता हूं।"

"नहीं दादा, इसके लिए आदमी की जरूरत नहीं है। अपनी कोठरी की सफाई मैं अपने ही ढंग से खुद करूंगा। अच्छा प्रणाम!" तनिक-सा मुस्कराकर दिनेश ने झोला कंधे पर लादा और स्कूल की तरफ चल दिया।



चलते-चलते दिनेश को एक क्षण के लिए यह ख्याल आया कि हथियार के नाम पर तो उसकी जेब में सिर्फ एक छोटा-सा चाकू है और उसके रास्ते का एक काफी बड़ा टुकड़ा चम्बल की घाटी की तरह की बड़ी-बड़ी गारों और चट्टानों से भरा है। हो सकता है, इस इलाके के आदमखोर जानवर इसी तरह की गारों में पनाह लेते हों और जब भी मौका पड़ता हो अपने शिकार पर चुपके-से टूट पड़ते हों।

उसे इस बात की हैरानी भी हुई कि भीड़ से घिर जाने पर उसे इस चाकू की याद क्यों नहीं आई? क्या उसे भी जान का इतना ज्यादा मोह है कि जान को जोखिम में देख, हड़बड़ाहट में, वह यह भी याद नहीं रख सका कि उसके पास, छोटा ही सही, बचाव का एक साधन तो मौजूद है।

भीड़ की तरफ ध्यान जाते ही उसके सामने अजीब-से चेहरे नाचने लगे। उसे लगा कि उन चेहरों से उसका सामना कहीं भी और किसी भी

वक्त हो सकता है। सहसा उसने महसूस किया कि उसकी सांस भारी होने जा रही है। पर एक क्षण बाद ही उसे लगा कि उसके अन्दर एक अजीब किस्म का उत्साह है, इस विचार और आस्था का उत्साह कि चेतना-हीन और निष्क्रिय बनकर जीना मरने से भी बदतर है। मरना भी हो तो दुश्मन से संघर्ष करते हुए मरना चाहिए। लड़ते-लड़ते मरना मरने की यातना से परे होता है, क्योंकि लड़ते हुए आदमी के साथ मौत भी खिलवाड़ करने का जोखिम नहीं उठाती, धीरे-धीरे रेत कर मारने का साहस नहीं कर पाती। एक झटके के साथ ही उसे संघर्षरत आदमी को खत्म करना पड़ता है। ऐसी हालत में मौत भी आदमी से डरने लगती है। संघर्षरत आदमी एक प्रकार से मौत को ही ललकार रहा होता है क्योंकि लड़ने के जोश मे चोट लगने या मौत द्वारा कुचले जाने की यातना उसके लिए तुच्छ और बेमानी हो जाती है।

अपने इस विचार के प्रति पूरी तरह से समर्पित हो जाने के बाद दिनेश के मन में एक समांतर सवाल भी उठा—तो क्या हर प्रकार की लड़ाई लड़ने वाला हर इंसान चोट की तकलीफ और मौत की यातना से मुक्त हो जाता है? कुछ क्षणों के लिए उसके पैर रुके। उसने आगे तक बढ़ आई पेड़ की लतर से एक पत्ता तोड़ा, मुंह में दबाकर उसका स्वाद चखा; उसे स्वाद कसैला लगा। पत्ता थूकते हुए उसने निर्णय लिया कि नहीं, झूठ और शोषण के पक्ष की लड़ाई लड़ने वाला आदमी तकलीफ और यातना से मुक्त नहीं हो सकता। उसने कारण की तलाश की कि झूठा होने और सही न होने का अहसास आदमी के जोश को सही ढंग से उभरने ही नहीं देता। बल्कि ऐसा इंसान तो अपने जोश के दम घुटने की यातना को भी अतिरिक्त रूप में भोगता है।

स्कूल के कमरे सामने दिखाई देने लगे तो अब उसके सामने नया सवाल था—तो फिर कायरता किस बला का नाम है? उसने स्थूल निर्णय लिया कि किसी भी कारण से जोश या आक्रोश का निष्क्रिय या सुषुप्तावस्था में पड़े रहना ही कायरता है। लेकिन इस निर्णय से उसे पूरी तसल्ली नहीं हुई। उसने और गहराई से सोचना चाहा, जिन्दगी के कुछ महत्त्वपूर्ण अनुभवों को सोच की इस प्रक्रिया में साझीदार भी बनाना चाहा, पर उसके थके दिमाग और शरीर ने और ज्यादा गहराई में जाकर सोचने से इंकार कर दिया।

"नहीं, नहीं, उठने की ज़रूरत नहीं है!" डाक्टर दादा ने उसे कन्धे से दबाकर बिठा दिया। फिर वे बच्चों की तरफ मुखातिब हुए, "बहुत कम बच्चे आए हैं।" एक बच्चे का चेहरा देखकर उनकी आवाज़ तल्ख हो उठी, "क्यों बे कल्ला, तू आज स्कूल कैसे चला आया? तेरा बाप तो इस कमरे को बनाने के लिए दान में दी गई लकड़ी वापस माग रहा था?"

बच्चा रुआंसी शक्ल बनाकर खड़ा हो गया, "बापू ही छोड़ के गया है। बोला था—दो-चार दिन जाके देख ले, मास्टर टिक गया तो पढ़ लेना, नहीं तो भेड़ें चराना तो किस्मत में है ही।"

"तुम्हारा बाप ठीक ही सोचता है। उस बेचारे का भी क्या दोष? लोगों को विश्वास ही नहीं है कि यह दाढ़ी वाला कच्ची उम्र का लड़का यहां टिक पाएगा। श्यामा को भी यही आशंका है।" कहते-कहते डाक्टर दादा ने दिनेश के चेहरे को कनखियों से जांचा।

दिनेश सिर्फ मुस्कराता रहा, कुछ बोला नहीं, पर फिर भी डाक्टर दादा उसे श्यामा के प्रति आकर्षित करने का मोह बनाए रहे, "श्यामा ने कल तुम्हें मेरे पास से आते हुए रास्ते में देखा था। तुम सुमेरु वाले लम्बे रास्ते से आए थे न? रास्ते में तुमने किसी पेड़ का पत्ता मुंह में चबाकर थूका था। वह ढलान पर कटी घास का बोझा बांध रही थी। तुम बिना उसे देखे उसके पास से निकल गए थे। वह भी तुम्हें रायसाहब का कोई नया कारिन्दा समझी थी। उसने तुम्हारा ध्यान खींचने के लिए थोड़ी खांसी-सी भरी थी। तुम अपने ध्यान में खोए हुए थे। उसे आज, अभी, मैंने बताया कि तुम नये मास्टर हो। बोली, 'एक तो दुबला-पतला सींकिया आदमी, दूसरे अपने-आपमें ही मस्त, न आगा देखने वाला न पीछा, ऐसा मास्टर इस बीहड़ इलाके में कितने दिन जी सकेगा?'

"मैंने कहा, तुम उसे गलत समझी हो। बहुत बहादुर लड़का⋯मेरा मतलब है, मास्टर है और बहुत सयाना भी। जान को हथेली पर लेकर आया है। क्यों गलत तो नहीं कहा?"

दिनेश ने फिर कोई जवाब नहीं दिया। दादा छाती पर हाथ रखकर हांफ उतारने के बहाने चुप हो गए। पर कुछ क्षण बाद ही उनके स्नेह ने फिर ज़ोर मारा, "ज़रा इधर-उधर देखकर और चौकन्ने होकर चला करो। अपने-आपमें खोए रहना इस इलाके में ठीक नहीं। ज़रा-सा पांव फिसला नहीं कि बस गहरे खड्ड के अन्दर। तुम कोई लेखक-वेखक तो

नहीं हो ?"

अब सीधा सवाल हुआ तो दिनेश को जवाब न देना गैर-मुनासिब लगा। नम्रता में उसकी गर्दन झुक गई, "हां दादा, मैं थोड़ा लिखने-पढ़ने का शौक रखता हू।"

"क्या लिखते हो ?"

"कहानी, कविता, लेख, जैसा मूड बने, सभी कुछ।"

"देखा, पहचान लिया न।" लेकिन डाक्टर तुलसी का चेहरा थोड़ा गमगीन हो आया। उनके शब्दो में भी थोड़ी उदासी उतर आई, "हमारे एक साहब भी लेखक थे। शिकार खेलने जाते थे तो घने जंगल में पेड़ के नीचे बैठकर कविता लिखने लगते थे। एक बार एक शेरनी अपने दो बच्चों के साथ सामने आ खडी हुई। बस पसीज गया मन। लेखक जो ठहरे। शेरनी उनकी तरफ मुह खोले गुर्राती रही पर उनसे गोली नहीं चल सकी। शेरनी क्योंकि बच्चों की रक्षा के मूड में ममता से भरी हुई थी, कूदकर उनपर आ चढी। बहुत बुरी तरह से ज़ख्मी हो गए। साथियों ने शोर सुनकर बचाया। अस्पताल में पन्द्रह-बीस दिन दु.ख भोगकर परलोक सिधार गए।'

दादा ने देखा, दिनेश समेत सभी बच्चों के चेहरों पर भी उदासी की रेखाएं खिच गईं। थोड़ा सुस्ता लेने के बाद उन्होंने उंगलियों के पोरों से आंखों के कोर साफ किए, "बहुत याद सताती है हमे उस साहब की। नैन-नक्श बिलकुल तुम्हारे जैसे थे। बातें भी तुम्हारी तरह ही करता था। तुम दाढी मुडवा लो तो बिलकुल उस लेखक साहब जैसे लगो। लेकिन तुम्हें तो शायद शिकार का शौक नहीं है ?"

कुछ क्षण दिनेश दादा के चेहरे को पढता रहा पर उनके मन की गहराई उसकी पकड़ में नहीं आई, "जी नहीं, मुझे तो बन्दूक भी पकड़नी नही आती।"

"बहुत अच्छी बात है। लेकिन बन्दूक चलानी तो आनी ही चाहिए। किसी को मारने के लिए नहीं, अपनी रक्षा के लिए। पर, जंगल में बैठकर लिखने का शौक तो नही है ?"

"नहीं दादा, आप बच्चों के सामने इस तरह की डराने वाली बातें मत करें। आपके लेखक साहब ने मां की हालत में खड़ी शेरनी पर गोली नही चलाई, यह उन्होंने ठीक किया, पर जब वह दहाड़ने और गुर्राने लगी

थी, तब उन्हें अपनी रक्षा के लिए गोली ज़रूर चलानी चाहिए थी, क्योंकि उस हालत में शेरनी मां नहीं थी, एक हिंसक जानवर थी। हिंसक जानवर पर गोली न चलाना बेवकूफी थी। बस यही आपके साहब ने गलती की।"

"लेकिन शेरनी की गुर्राहट भी तो ममता के ही कारण थी।"

"नहीं, वह गुर्राहट ममता के कारण नहीं थी। ममता के कारण वह तब होती जब लेखक शिकारी उसके किसी बच्चे को नुकसान पहुंचाता या पहुंचाने की कोशिश करता। यह तो उसके अन्दर बैठे राक्षस और हिंसक पशु की गुर्राहट थी। ऐसी हालत में लेखक साहब का अपनी रक्षा के लिए तैयार न होना उनकी कमज़ोरी थी। दरअसल अपनी जान उन्होंने अपनी कमज़ोरी की वजह से ही दी थी, किसी अच्छे मकसद के लिए नहीं।"

"तब तो तुम बलिदान के किसी भी मादे को कमज़ोरी ही कहोगे।"

"नहीं, बलिदान के हर मादे को नहीं। जो मादा राक्षसी प्रवृत्तियों का पोषण करता है, वह कमज़ोरी कहलाएगा और जो इन्सानियत को बढ़ावा देता है, वह बलिदान और त्याग!"

डाक्टर दादा को दिनेश का यह तर्क समझ में नहीं आया। वह एकटक उसकी बड़ी-बड़ी खूबसूरत आंखों में देखते रहे। उसकी आंखों में उन्हें कोई बहुत ही पढ़ा-लिखा लेकिन बहादुर आदमी बैठा नज़र आया। उनके बूढ़े होंठों पर एक जवान-सी मुस्कान फैल गई। वे खुशी से भारी हुए गले से बस इतना ही बोल सके, "चलो अच्छा हुआ, तुम इन जंगली लोगों में आ गए। अभी तुम अपनी ड्यूटी पूरी करो, शाम को फुरसत में मेरे पास चले आना। खाना भी वहीं खा लेना। तभी इस बारे में आगे बात होगी।"

दादा दरवाज़े तक बढ़े पर फौरन लौट आए। अपने हाथ की मज़बूत छड़ी दिनेश के हाथों में थमाकर वे गम्भीर हो आए, "यह बहुत बढ़िया गुप्त हथियार है। मुझे उसी लेखक शिकारी ने इनाम में दिया था। तुम इसे रख लो, तुम्हारे काम आएगा।"

दादा बिना किसी उत्तर की प्रतीक्षा किए बाहर निकल गए। दिनेश ने उस छड़ी को दोनों हाथों में पकड़कर थोड़ा ज़ोर लगाया कि खुलकर अन्दर से एक चमचमाती सीधी कटार बाहर निकल आई। उसने उसे प्यार से चूमा और बन्द करके अपनी गोद में रख लिया। बच्चे भी उस अजीब हथियार को देखकर बहुत खुश हुए।

डाक्टर दादा जिस लम्बे रास्ते से चलकर आए थे, उसी से लौटने के लिए जल्दी-जल्दी आगे बढ़ गए। वे अब श्यामा की आशंकाओं को निर्मूल सिद्ध करना चाहते थे। बताना चाहते थे कि दिनेश कोई मामूली आदमी नहीं है, बहुत बड़ा लेखक है। भाग्य से ही वह इस इलाके में आ गया है, उसके संसर्ग से इस इलाके की अगली पीढ़ी तो जरूर एक बदली हुई पीढ़ी होगी।

चलते-चलते उनके दिमाग में यह भी आया कि अगर दिनेश का मन इस इलाके मे रम गया तो करियाला जैसे लोक-नृत्य का नये ढंग से विकास करेंगे। करियाला इस इलाके की जनता को जगाने का अच्छा साधन साबित हो सकता है। लोकनृत्य के साथ-साथ लोककथाएं तो उसमें होती ही है, बस उन कथाओं को आज की जिन्दगी के अर्थों की तरफ मोड़ने की जरूरत है। लेखक तो दिनेश है ही, नई कथाओं को लोक कथाओं के साथ जोडने में उसको कोई दिक्कत नहीं होगी।

सहसा डाक्टर दादा के कानों मे करियाला में बजने वाले लोक-साजों के स्वर गूजने लगे। उनकी आंखों के सामने आ गया बैल की तरह के बड़े-बड़े सींग लगाए, लाल खद्दर का चोगा पहने, बैल की तरह ही छलांगें भरता हुआ लोक नर्तकी-दल। उनके अपने पैर भी स्वरों की ताल पर जमीन को थपथपाने लगे। उनके होंठों से फूट निकला करियाला मे सामूहिक रूप से गाया जाने वाला, मनमोहक पहाड़ी तर्ज का एक लोकगीत।

गीत की मस्ती में डा० दादा को पता ही नहीं चला कि वे कब उस ढलान से आगे निकल गए, जहां जाते वक्त उन्होने श्यामा को घास काटते पाया था। उन्हें मुड़कर पीछे आना पड़ा। अब की बार पता नहीं उनको क्या हुआ कि वे श्यामा पर अपनी निगाह पड़ते ही झोंक में आ गए और दूर से ही पुकार उठे, "शम्मी! ओ शम्मी!!"

श्यामा ने दादा को इस तरह की प्रफुल्लित और स्नेहसनी आवाज में पुकारते कभी नहीं सुना था। वह लकड़िया काटना छोड़ खड़ी हो गई और अपनी आवाज को भी नर्म होने से नहीं बचा सकी, "क्या है डाक्टर दादा, बड़े खुश नजर आ रहे हो?"

तुम यहां अकेली लकड़ियां काट रही हो, अगर आदमखोर इधर

तुम्हारी तरफ निकल आया तो ?"

आदमखोर का नाम सुनते ही श्यामा की आवाज की नमीं एकदम गायब हो गई। वह अपनी स्वाभाविक तीखी और सख्त आवाज में गुर्राई, "निकल आएगा। कैसे निकल आएगा ?" साथ ही उसने बड़ी-बड़ी आंखें पूरी खोलकर, पौने चांद के आकार की दमकती हुई दराती हवा में लहरा दी।

चूड़ियों की खनक सुनकर दादा के होठों पर गाढ़ी मुस्कान फैल गई, "कोई जरूरी थोड़े ही है कि वो रीछ ही हो, बाघ या तेंदुआ भी तो हो सकता है।"

श्यामा पर दादा के मुस्कराते शब्दों का कोई असर नहीं हुआ। उसकी दायीं कलाई की चूड़ियां एक बार फिर खनकीं और हाथ की दराती खच से पास के पेड़ की खासी मोटी टहनी को काटकर; दूसरे में चौथाई अन्दर तक धंस गई। दूसरे प्रहार से टहनी भी चीख-सी मारती हुई जमीन पर आ गिरी।

दादा तब तक उसके बिलकुल पास आ गए थे और अपनी आवाज की पुलक को पहचानकर सावधान हो गए थे, "नहीं-नहीं, मैं तो मजाक कर रहा था। मैं क्या जानता नहीं, मेरी बेटी बबर शेरनी हैं, बबर शेरनी। क्यों ठीक कह रहा हूं न ?"

श्यामा ने टहनी के छोटे-छोटे टुकड़े करके लकड़ियों के ढेर में मिलाने शुरू कर दिए। साथ ही वह दादा के व्यवहार से विचलित भी हो उठी। "आपको इस तरह मसका लगाने की जरूरत नहीं है। क्या कहना चाहते हैं ?"

"मैं ? मैं तो कुछ भी नहीं कहना चाहता। जरा दिनेश से मिलकर आ रहा था। तुम्हें देखा, बात करने को मन चाहा, सो कर ली।"

"लेकिन अभी जाते वक्त तो बात करके आए थे मुझसे ?"

"दिनेश से मिलने के बाद बातें करने को फिर मन कर आया। तुम उससे मिलोगी तो तुम्हारा भी किसी न किसी से तुरन्त बात करने को मन करेगा।"

"क्यों, मैं उससे क्यों मिलूंगी ?"

"नहीं, मेरा मतलब यह नहीं है, वैसे ही कभी मिलना हो जाए तो।"

"क्यों, ऐसा क्या है उस सींकिया पहलवान में ?"

"क्या नहीं है ? वह एक लेखक भी है और बहादुर भी।"

"कलकत्ता में सातवीं तक पढ़ते हुए श्यामा ने लेखकों के महत्त्व को समझा था। रवीन्द्रनाथ टैगोर के सम्मान में संयोजित किए गए स्कूल के अनेक उत्सवों में उसने भाग भी लिया था। कवीन्द्र रवीन्द्र की देशप्रेम की एक लम्बी कविता तो उसे अभी तक याद थी। इस बार वह लकड़ियां काटना छोड़ खड़ी हो गई और दादा को हैरानी से देखने लगी—"लेखक भी है ?"

"हां, बहुत गहरी-गहरी बातें करता है। आज उसने कहा—शेरनी के हाथों मारा जाने वाला वह अंग्रेज लेखक, शेरनी के नहीं अपनी कमजोरी के हाथों मारा गया है।"

"कौन अंग्रेज लेखक ?"

"तुम्हें कहानी सुनाई तो थी। बस, भूल गई ? वही जिसने शेरनी की गुर्राहट को ममता की गुर्राहट समझा था।"

"अच्छा, वो जंगल में बैठकर कविता लिखने वाला शिकारी। मैंने तो पहले ही कह दिया था कि वह बेवकूफ था।"

"लेकिन दिनेश बेवकूफ नहीं है।"

"नहीं होगा।" बोलकर वह फिर लकड़ियां काटने में जुट गई।

डाक्टर दादा दिनेश की सिफ्तों का बखान करते रहे। श्यामा लकड़ियां काट-काटकर ढेर में मिलाती रही। दादा लकड़ी पर पड़ने वाली दराती की आवाज़ से अन्दाज़ा लगाते रहे कि किस बात का उसपर कितना असर हो रहा है। किसी-किसी बात पर तो दराती सिर्फ हवा में लहरा जाती या मात्र पत्तों में पतपताकर गलत जगह पर जा गिरती। डाक्टर दादा को लगता उनकी बात का असर हो रहा है और वे और भी उत्साह में बात को आगे बढ़ाते।

आखिर श्यामा ने लकड़ियों की ढेरी को मजबूत रस्सी से कस लिया। घास की ढेरी वह पहले ही कस चुकी थी। पहले उसने घास की ढेरी दोनों हाथों से उठाकर सिर पर रखी, फिर दादा से बोली, "इन लकड़ियों को घास पर रखकर बांधना ज़रा !"

गीली लकड़ियों के बोझ का अन्दाज़ लगाकर बूढ़े दादा को उन्हें उठाने की हिम्मत तो नहीं हुई, पर वे श्यामा जैसी शेरनी की नज़रों में

गिरना नहीं चाहते थे, पूरा ज़ोर लगाकर उन्होंने लकड़ियां उठाकर घास के बोझ पर रख दी और दोनों बोझों की रस्सियों को आपस में बांधकर फूल आई सास को सहज करते अलग खड़े हो गए।

श्यामा देह का संतुलन बनाकर धीरे-धीरे खड़ी हो गई। दादा उसकी देह की मासपेशियों को सर्पिणी की तरह बल खाकर पुनः अपनी जगह पर जमती देखते रहे। खड़ी होने के बाद श्यामा ने एक टांग पर संतुलन बनाकर, दूसरे के पंजे से नीचे रह गया कपड़ा उठाकर कन्धे पर रखा, फिर दादा को नमस्कार करके वह धीरे-धीरे ढलान चढ़कर पहरुआ गांव की तरफ जाने वाले रास्ते पर आगे बढ़ गई।

दादा उसे मोड़ काटकर आंखों से ओझल हो जाने तक देखते रहे। सहसा उन्हें ओझा के कहे शब्द याद हो आए, "इस लड़की में डाकिनी निवास करती है डाकिनी, किसी दिन उसे निकालना पड़ेगा।"

इसके बाद दादा के होंठों पर मुस्कराहट फैल गई और वे पहले वाला लोकगीत गुनगुनाते अपने दवाईख़ाने की ओर चल दिए।

चलते-चलते अब वे इस सवाल पर भी विचार कर रहे थे कि जब स्कूल के बच्चे अपने-अपने घरों को चले जाएंगे, दिनेश स्कूल की कोठरी में अकेला होगा, तो सूरज डूबने के बाद के लाल दृश्य को देखकर वह कैसा महसूस करेगा। उन्हें इस बात का डर भी सताने लगा कि कहीं झोक में आकर दिनेश नाले की बड़ी-बड़ी चट्टानों की तरफ शाम की सैर करने न निकल जाए। उन चट्टानों में आदमखोर के छुपे होने का उन्हें भी अंदेशा था और वह उनकी तरफ संभलकर ही जाते थे।

● ●

बच्चों के संरक्षक खुद आकर जब बच्चों को ले गए तब कुछ देर तक दिनेश स्कूल के एकमात्र कमरे की टूटी-फूटी दीवारों की तरफ गौर-से देखता रहा। उसे लगा कि बनने के बाद दीवारों को किसी ने हाथ तक नहीं लगाया। तीन-चार जगह, जहां पत्थरों का आकार बड़ा था, कोयले से, बड़े-बड़े दांतों वाले किसी डरावने राक्षस की आकृतियां बनी थीं। किसी-किसी आकृति के दो दांत हाथी जितने लम्बे और पैने बनाए गए

थे। निश्चय ही ये बच्चों के हाथों की करामातें हैं—उसने अनुमान लगाया और उन आकृतियों के माध्यम से वह बच्चों की मानसिकता को समझने की कोशिश करने लगा।

एक पत्थर पर, उसे लगा जैसे जीभ को बाहर निकाले महाकाली की आकृति बनी है। बहुत देर तक वह उस आकृति को देखता रहा। देखते-देखते उसे वे वाक्य याद आते रहे जो डाक्टर दादा ने श्यामा का परिचय देते हुए कहे थे। फिर सहसा, पता नही उसके दिमाग में क्या आया कि उसने कोठरी में जाकर कटार वाली छड़ी और बैटरी अपने साथ ली और किवाडों को ताला लगाकर डाक्टर दादा की ओर चल दिया।

चलते-चलते वह डाक्टर दादा और श्यामा के ही बारे में सोचता रहा। बीच-बीच में उसे उस औरत के रोने का भी ख्याल आता रहा, जो अपनी प्यारी बच्ची के आदमखोर की भेंट चढ जाने पर भी कुछ नही कर सकी थी। उसे लगने लगा कि रुदन-स्वर अभी भी उसके कहीं आसपास ही गूंज रहे हैं। उन रुदन-स्वरों के साथ बच्ची की दर्द-भरी चीखें हैं, जो आदमखोर की तीखी गुर्राहटों में डूबी धीरे-धीरे दम तोड़ रही हैं। उसने अपने आपको इन स्वरों, गुर्राहटों और चीखों से बचाने के लिए प्रकृति में उलझाने की कोशिश की तो वह परेशान हो उठा। ख्यालों ही ख्यालों में वह गलत दिशा मे चला आया था। डा० दादा के दवाईखाने की तरफ जाने वाले रास्ते का तिराहा काफी पीछे छूट गया था।

अब वह अपने आपको प्रकृति के बिलकुल समीप अनुभव कर रहा था। सामने की पहाडी के पीछे सूरज विश्राम लेने की तैयारी कर रहा था। कही से भीनी-भीनी खुशबू को लिए हवा के ठण्डे-ठण्डे झोके आ रहे थे। सामने की पहाड़ी की ढलान पर कुछ भेड़ें और कुछ बकरियां मस्ती मे चर रही थी। तक तरफ छोटे-छोटे कद की लेकिन स्वस्थ भैंसें और गाए थी। नीचे, घाटी की गहरी हरियाली में छोटी-छोटी झोपड़िया और मकान चमक रहे थे और उनके बीच से हल्का-हल्का धुआं उठ रहा था। उसने अन्दाज लगाया कि यही श्यामा का घाटी वाला गाव पहरुआ होगा। चलो आज डा० दादा के पास जाने की बजाए इसी गांव तक घूम आते हैं। निर्णय लेते ही उसके पांव तेज हो गए और थोडी दूर चलने के बाद घाटी मे उतर रही पगडण्डी के साथ नीचे उतर गए।

थोड़ा नीचे उतरने के बाद उसे लगा कि धूप ने उसका साथ छोड़

दिया है, लेकिन हवा में खुशबू कुछ ज्यादा हो गई है। वह गहरी हरीतिमा से भरे पेड़ों में छितरायें मकानों में से सबसे पहले मकान से अभी कुछ दूरी पर ही था कि एक कुत्ता गुस्से में दुम उठाकर ज़ोर-ज़ोर से भूंकने लगा। कुत्ते की आवाज़ सुनकर वहीं से और तीन-चार कुत्ते आकर पहले कुत्ते से कहीं ज्यादा ज़ोर-से चीखते हुए रास्ता रोककर खड़े हो गए।

दिनेश को लगा कि इस इलाके का पहला युद्ध उसे कुत्तों के साथ ही लड़ना पड़ेगा। वह कटार वाली छड़ी संभालकर तैयार हुआ ही था कि मकान के अन्दर से एक सांवली-सी बुढ़िया बाहर निकल आई। बुढ़िया ने कुत्तों को झिड़ककर चुप कराया और दिनेश की तरफ जिज्ञासा-भरी नज़रों से देखने लगी।

दिनेश उस बुढ़िया के नज़दीक पहुंच गया, "मैं दमकड़ी गांव के स्कूल में अध्यापक बनकर आया हूं और छुट्टी होने के बाद इस गांव तक घूमने चला आया हूं।"

"अच्छा-अच्छा, आइए-आइए आपका स्वागत है। आपकी तारीफ मैं श्यामा से सुन चुकी हूं।"

दिनेश को समझने में देर नहीं लगी कि बुढ़िया श्यामा की मां सुचित्रा है, क्योंकि सुचित्रा के बारे में उसने स्कूल के एक बच्चे से बहुत कुछ जाना था। यह भी जान लिया था कि वह अपने गुज़ारे के लिए आसपास के लोगों के कपड़े सिलती है। उसने एक ही नज़र में सुचित्रा को पैर के नाखून से लेकर, सादी,चौड़ी लाल किनारी वाली सफेद धोती से ढके सिर तक परख डाला। वह उसे शरत् बाबू के उपन्यास की कोई नायिका-सी लगी। लगा जैसे देवदास की पारो बूढ़ी होकर उसके सामने खड़ी है।

दिनेश सुचित्रा के पीछे-पीछे घर के अन्दर घुसा तो एक शान्ति, एक महक-सी उसके मन-मस्तिष्क में समा गई। इतना साफ-सुथरा और गोबर की पुताई के बाद अगरबत्ती की महक से महकता पवित्र घर तो उसने अपने आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न पंजाब में भी नहीं देखा था। उसे लगा कि पवित्रता और स्वच्छता का सम्बन्ध अर्थ के अलावा मानसिकता से भी है। मन पवित्र हो तो आदमी अपनी देह और घर को भी पवित्र रखना चाहता है।

एक दीवार पर महाकवि रवीन्द्रनाथ टैगोर का, किसी कैलेन्डर से

निकाल कर शीशे में जड़वाया चित्र लटक रहा था और दूसरी पर बनू सुभाष चन्द्र बोस का। लकड़ी के कार्नस पर बड़े-से फ्रेम में, एक नहीं-सी, किसी फौजी की, सिल्यूट मारने की मुद्रा में फोटो लगी हुई थी। कार्नस के नीचे लकड़ी से बना हुआ एक छोटा-सा मन्दिर था, जिसमें पूजा की तरह-तरह की सामग्री के बीच काले पत्थर की, भैसासुर का संहार करती, मां काली की प्रतिमा रखी थी। अगरबत्ती की महक उस मन्दिर में से ही आ रही थी। दिनेश आगे बढ़कर फौजी की फोटो को गौर से देखने लगा।

सुचित्रा उसे फोटो पर गंभीरता से देखता देख सिर का पल्लू ठीक करने लगी, "श्यामा के पिताजी की तसवीर है। अभी वह चीनियों द्वारा युद्ध में पकड़े नहीं गए थे, तभी कलकत्ता में खिचवाई थी।"

"अच्छा, तो आपको भी युद्धबन्दी के रूप में चीन का मेहमान रहना पड़ा था ?"

"हां, पूरे ग्यारह महीने चीनियों की कैद में रहे थे। जब छूटकर आए थे तो सरकार ने इन्हें भी बहुत-से दूसरे फौजियों के साथ समय से पहले ही रिटायर कर दिया था।"

"क्यों ?"

"सरकार को सन्देह था कि चीन की कैद से लौटे सब फौजियों का ब्रेनवाश हो चुका है। उन दिनों चीन के ब्रेनवाशिंग कैम्पों की बड़ी चर्चा थी।"

"तो क्या सचमुच में उनका ब्रेनवाश हो चुका था ?"

"मुझे तो कोई फर्क नहीं लगा था। आने के बाद भी वे अपने देश पर पहले की तरह मर मिटने के लिए तैयार थे। हां, इतना जरूर हुआ था कि अब वे चीन की फिजूल की खिलाफत नहीं सुन सकते थे।"

"कैसी खिलाफत ?"

"यही कि वहां बूढ़े आदमियों और जानवरों को गोली से उड़ा दिया जाता है। लोग इन्सानों की नहीं जानवरों की जिंदगी गुजारते हैं। चीनी अपने सारे पशु-पक्षियों को, यहां तक कि गाय-भैंसों को भी मारकर खा गए हैं। वगैरह-वगैरह।"

"क्या ऐसी बातें भी कोई करता था ?"

"करते थे। उनके रिटायर होने के बाद—कलकत्ता में ऐसी बातें

करने वाले लोग इन तक पहुंचने लगे थे। बस ऐसे लोगों से तंग आकर ही इन्होंने कलकत्ता को छोड़कर इस जंगली इलाके में आने का निर्णय किया था। आते ही इन्होंने सरकार से जो पैसे मिले थे उनसे जानवर खरीद लिए थे। इनकी इस इलाके में जानवरों की नस्ल सुधारने का एक बहुत बड़ा फार्म बनाने की इच्छा थी। पर…"

दिनेश को लगा जैसे सुचित्रा का गला भर आया है। उसने बात बदलने की गरज से संदर्भ से बिलकुल कटा सवाल पूछ लिया, "लेकिन आप तो बंगालन है और आपके ये शायद पहाड़ी" मेरा मतलब है…"

"आपका मतलब बिलकुल सही है। इनकी महानता ने मुझ अभागन को प्रश्रय दिया था। इस लुंजपुंज समाज के साथ लड़ाई मोल लेने के लिए तैयार हुए थे वे, और लड़ते-लड़ते बहादुरों की तरह इस दुनिया से विदा हो गए।" कहकर सुचित्रा ने संकोच से गर्दन झुका ली।

दिनेश को लगा जैसे सुचित्रा के झुके हुए मुख पर दहकती आंखें तरला गई हैं। उसने एक विधवा नारी के दिल पर मरहम लगानी चाही, "तो क्या हुआ? …इंटर कास्ट मैरिज कोई अपराध थोड़े ही है। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने तो…?"

"नही, मेरे कहने का मतलब यह नही था कि मैं अपराध भावना महसूस कर रही हूं, बल्कि मैं तो इस पर गर्व करती हूं और चाहती हूं, कि बार-बार ऐसी घटनाएं घटें जो इस पत्थर हो गए समाज की मान-सिकता को चोट पर चोट करके पिघला दें।"

सुचित्रा ने मुंह ऊपर उठाया तो दिनेश मन ही मन [illegible] । सुचित्रा की आंखों में न तो कही नमी थी और न अपराध [illegible], [illegible] आंखें पहले से भी कहीं ज्यादा आत्मविश्वास [illegible] थीं।

"आप बैठिए, मैं जरा काफी का पानी [illegible]!" [illegible] सुचित्रा साथ वाले कमरे मे चली गई, अपने पीछे [illegible] का एक झोंका। दिनेश उस झोंके से [illegible] साथ लगी चारपाई पर बैठ गया और सुचित्रा के [illegible] सोचने लगा।

उसे लगा सुचित्रा के व्यवहार में [illegible] उसने अपने बचपन की [illegible] जो अचानक रत बदलते ही [illegible]

कहीं से भी नहीं फूटी थी। जैसे क्यारियों के खारे के मारे पौधे सूखकर ठुंठिया गए हों।

सहसा दिनेश के सामने अपनी मां का चेहरा कुहरा उठा। दिन-भर अथक परिश्रम करते रहने के कारण थकान के गाढ़े लेप ने पुता हुआ चेहरा। बुढ़ापा आने से पहले ही सूखकर हड़िया गया चेहरा। जिस चेहरे पर आंखें नहीं, उदासी के कीचड से भरे दो छोटे-छोटे गढ़े चमक रहे हैं। जिस पर मुस्कान या हंसी के नाम पर सिर्फ तनाव की रेखाएं उभरी रहती हैं। उन रेखाओं में लगता है जैसे चिन्ता और अभावों के दर्द का दरिया ठाठें मार रहा हो। लेकिन सुचित्रा···

वह सुचित्रा की तुलना अपनी मां के साथ करने के लिए तैयार हुआ ही था कि बाहर से आने वाले तीखे नारी-स्वर ने उसके सोचने के क्रम को भंग कर दिया। नारी-स्वर शायद किसी पशु को झिड़क रहा था, "डायन, रुक जा, थोड़ा-सा आगे वढ़ी तो नीचे खड्ड में जा गिरेगी, रुक जा।"

"लो श्यामा आ गई। चर कर लौटे जानवरों को वाड़े में बांध रही है।" सुचित्रा ने बांस की बनी तिपाई दिनेश के सामने खिसका कर, गर्म-गर्म दूध का गिलास उस पर रख दिया, "काफी शायद खत्म हो गई!"

दिनेश ने देखा—मलाई की मोटी-सी तह से ढका हल्के बादामी रंग का दूध, जैसे उसमें केसर का छनका दे दिया हो। सुचित्रा ने दो-तीन वार आग्रह किया तो उसने गिलास उठाकर होंठों से लगा लिया। घूट भरते ही उसका मुह मलाई से भर उठा और वहुत सी मलाई मूछों में ही फंसकर रह गई।

ठीक इसी वक्त श्यामा गोवर पुते हाथ लिए उसके सामने आ खड़ी हुई। मां की तरह ही सफेद धोती में लिपटी, श्यामल चमकदार पत्थर की मूरत-सी। दिनेश उसे देखते ही गिलास रखकर खड़ा हो गया, "नमस्कार!"

श्यामा ने अपनी हंसी होंठों में भींचकर गोवर-पुते हाथ जोड़ दिए और आंखों में शरारत भरकर मां की तरफ देखने लगी।

"मास्टर जी हैं, दमकड़ी वाले स्कूल के मास्टर जी!"

"ओ ऽऽऽ दिनेश जी।" श्यामा शर्म के मारे दुहरी होकर साथ वाले कमरे में भाग गई।

मां श्यामा के दुहरेपन को देखती रह गई। अपनी बेटी को इसी तरह शर्माते उसने पहले कभी नही देखा था। उसे तो उसके अल्हड़ रूप के बारे में ही ज्यादा जानकारी थी। कटरे-बछड़ों के साथ इस उम्र में भी वह खेलने लगती थी। कुत्ते के मुंह को दोनों हथेलियो मे दबाकर बैठ जाती थी, जब तक वह परेशान होकर कू-कू न करने लगे तब तक नही छोड़ती थी। बकरी के मेमने या भेड़ के लेले को कन्धो पर लादकर धम्मड़ चौक मचाना तो उसके लिए आम बात थी। मां को पहली बार महसूस हुआ कि उसकी बेटी सयानी हो गई है। वह दिनेश की तरफ फिर मुखातिब हुई, "तो आप इससे पहले मिल चुके है?"

"जी नही, आमने-सामने तो नहीं, अलबत्ता डा० दादा की बातों मे जरूर कई बार मुलाकात कर चुका हूं।"

"अच्छा-अच्छा ! डा० दादा बहुत भले आदमी है। आज के जमाने मे ऐसा आदमी बहुत मुश्किल से मिलता है। सारा इलाका इज्जत करता है उनकी। श्यामा भी उनका बहुत सम्मान करती है। आप दूध तो पीजिए, ठण्डा हो जाएगा!'

"हां, मुझे भी बहुत अच्छे लगते है। लेकिन इतने वर्षों से इस इलाके में रहकर भी वे इलाके के लोगों को कुछ सिखा नही सके।" दिनेश ने रूमाल से मूछों को साफ करने के बाद गिलास फिर मुह से लगा लिया, लेकिन इस बार थोड़ा संभल कर।

सुचित्रा ने सीखने-सिखाने की बात तो कभी सोची ही नहीं थी। उसे दिनेश का उलाहना अजीब लगा और आवाज में अजीबपन भरकर उन्होंने पूछ भी लिया, "क्या सिखाते?"

"और कुछ नही तो कम से कम इन लोगो को इनकी ताकत का एहसास तो करवा ही सकते थे।"

"कैसी ताकत?"

"अपने अधिकारो के लिए लड़ने की ताकत, संगठन की ताकत और संगठन बनाकर काली ताकतों के खिलाफ आवाज उठाने की ताकत!"

सुचित्रा को दिनेश की मनःस्थिति समझने मे तनिक भी देर नही लगी। वह बगाल के एक गांव मे जन्मी थी। गरीबी की छाया मे उसने बचपन काटा था। जवानी की देहली पर पहला कदम रखते ही वह इलाके की शक्ति-सामन्त की वासना का शिकार हो गई थी। उसके बाद

एक के बाद एक छोटे सामन्त···अन्ततः शादी से पहले ही मा बनने के लक्षण···और फिर कलकत्ते की एक अंधेरी गली में कोठे की शरण। क्षण भर में सुचित्रा की आखों के सामने जलता हुआ अतीत घूम गया। इस अतीत में उसने अनेक क्रांतिकारी पक्ष भी देखे थे। शक्ति-सामन्तों के खिलाफ आवाज उठाने वाले सक्रिय लोगों के पक्ष। सुभाषचन्द्र बोस की फौज में रहकर आए देशभक्तों के पक्ष। लेकिन उनका क्या हुआ? ···तेज धार वाली लाल नदी में डूबकर मर गए सब के सब। सुचित्रा के मुख से जहरीली सांस निकली और सांस के साथ ही बदली हुई आवाज में कुछ शब्द भी—"नहीं, उनका कोई कसूर नहीं है। उन्होंने तो कई बार इलाके के जागीरदार के शोषण के खिलाफ आवाज उठाने की कोशिश की थी, लेकिन लोगों ने ही इनका साथ नहीं दिया था।"

"जागीरदार?"

"हां जागीरदार! वही इस इलाके का सब कुछ है। लोग उसे राय-साहब के नाम से जानते हैं। इस इलाके की सबसे बड़ी ताकत ओझा भी उसके सामने पानी भरता है। हमारे भी पीछे पड़ गया था कि बाड़े की जगह जागीर की जगह है, उसका किराया दो।"

"फिर?"

"फिर क्या, कचहरी में जाकर मुकद्दमा लड़ना पड़ा पूरे तीन वर्ष। पक्की सड़क के किनारे बने रायसाहब के डाक बंगले पर तहसीलदार पेशी भुगताने आता था और जैसा कि लगभग तय था फैसला रायसाहब के हक में हुआ, अब किराया दे रहे हैं बाड़े का।

"और कोई खेती-बाड़ी करने की जमीन?"

"वह भी थोड़ी-सी है लेकिन पट्टे पर। आधी उगाई रायसाहब को देनी पड़ती है। सब को देनी पड़ती है। इस इलाके का यही दस्तूर है। इसी कारण इस इलाके के लोग गरीब हैं और निहत्थे भी।"

"आधी उगाई न दे सके तो?"

"कैसे न दे सके? जब आलू, टमाटर, आदा और जिमीकन्द आदि की फसलें निकाली जाती हैं तो रायसाहब के कारिन्दे सिर पर आकर खड़े हो जाते हैं और खेत से ही आधी उगाई उठवा ले जाते हैं। हां, कोई कर्ज देने वाला दूसरा लाला अगर रात को फसल निकलवा कर चोरी से ले जाने में सफल हो जाए तो बात दूसरी है। ऐसा हो जाने पर रायसाहब

मुजरिम और उसके घर वालों से वेगार लेते हैं। अपने कारखानों में वेगार देने के दिनों और हर रोज़ के घण्टों का फैसला रायसाहब खुद करते है, ओझा के साथ बैठकर।"

"कारखाने कैसे ?"

"शराब का कारखाना, फलों का रस निकालने का कारखाना, मांस तथा खुम्भी को डिब्बों में बन्द करने का कारखाना, लकड़ी की चिराई करने का कारखाना और भी जाने कैसे-कैसे कारखाने है उसके। अब सुना है एक ऊन का नया कारखाना खुलने जा रहा है। सैकड़ों लोग हर साल इन कारखानों में वेगार का काम करते है। जिस साल सूखा पड़ा था उस साल तो इलाके के तमाम के तमाम लोग वैलों की तरह जुट गए थे। नये दो कारखानों की इमारतें रायसाहब ने उन्हीं दिनो वेगार में तैयार करवाई थीं। हमारे यहां भी परवाना पहुंचा था लेकिन हम लोग सिलाई से कमाई पूजी देकर बच गए थे। वैसे भी थोडी पढी-लिखी होने के कारण हम मां-वेटी से वह थोड़ा डरता है।" अन्तिम शब्द सुचित्रा ने ऐसे कहे कि कहते-कहते उसकी गर्दन थोड़ी गर्व से तन गई।

"इसका मतलब खेती-बाड़ी से रायसाहब का कोई वास्ता नहीं है ?"

"नहीं, ऐसी बात नहीं है। इलाके की सारी की सारी सेंजू और बड़ी-बड़ी पट्टियों वाली बढ़िया ज़मीन उसी के कब्ज़े मे है। उसपर भी उसके कारिन्दो की देख-रेख मे वेगार के लोग ही काम करते हैं।"

"कितना जुल्म है।"

"समझो तब।"

"लेकिन बन्धक मज़दूरी को तो सरकार ने कानूनन खत्म कर दिया है।"

"आपके इलाके मे कर दिया होगा, यहां तो सिर्फ रायसाहब का कानून चलता है और जो उस कानून के खिलाफ चलने की जुर्रत करता है, उसके साथ ऐसा भयंकर सलूक होता है कि लोग त्राहि-त्राहि कर उठते हैं ?"

"कैसा भयंकर सलूक ?"

"मुजरिम को सोन नदी की रेत पर ले जाकर बांध देते हैं। रायसाहब के गुण्डे पैरों से लेकर सिर तक थोड़ा-थोड़ा करके काटते रहते है। कटने वाला चीखता-चिल्लाता है तो खुद नशे मे धुत्त होकर उसका मज़ा लेते

हैं। बाद में सारे टुकड़ों को पत्थरों के साथ बोरी में भरकर नदी में डुबो देते हैं।"

श्यामा मुंह-हाथ धोकर बाहर निकली तो मां उसे देखकर दंग रह गई। दिनेश को भी थोड़ा अचम्भा हुआ। अब श्यामा के कानों में चांदी के दो चमकदार कांटे लटक रहे थे। ये कांटे श्यामा कलकत्ते से अपने साथ लाई थी और तभी से बेकार की चीज की तरह सन्दूक में कैद पड़े थे।

खिले हुए बड़े-से गुलाब के फूल के पास खिली हुई दो सफेद कलियों की तरह लग रहे थे कांटे। दिनेश उसे देखते ही फिर खड़ा हो गया लेकिन इस बार स्वागत और विदाई दोनों के लिए, "अच्छा तो अब मुझे इजाजत दीजिए।"

"खाना खाकर चले जाइएगा। बस अभी तैयार हो जाता है। अभी तो आपने कोई बन्दोबस्त भी नहीं किया होगा ?" सुचित्रा ने उसे रोकना चाहा।

"जी नहीं, शहर से मैंने एक छोटा-सा बत्ती वाला स्टोव खरीद लिया था। उसमें तेल भी भरवा लिया था। थोड़ा आटा-दाल भी साथ बांध ली थी। मुझे अंकल जी ने बता दिया था कि जहां मैं जा रहा हूं वहां कोई ढाबा या होटल नहीं होगा और लोग भी इतने हैण्ड-टू-माउथ हैं कि उनका अपना गुजारा भी मुश्किल से होता है।"

"अंकल जी कौन ?"

"मेरे पिताजी के पुराने दोस्त हैं। उन्होंने ही मुझे इस नौकरी पर बुलाया है। इसी शिक्षा विभाग में हैडक्लर्क हैं।"

इसी समय शैल भी पशुओं को सानी डालकर आ पहुंचा। शैल के साथ एक कुत्ता भी कुदालिया भरता हुआ आया और श्यामा की टांगों के साथ लिपटकर लाड़ लड़ाने लगा।

शैल ने दिनेश को नमस्ते की। श्यामा ने दिनेश को शैल का परिचय दिया, "यह मेरा छोटा भाई है शैल।"

दिनेश ने गौर से देखा—शैल का चेहरा नाथूराम के तसवीर वाले चेहरे पर गया था। अचानक उसके दिमाग में आया, क्या स्वभाव भी नाथूराम पर जाएगा ?

श्यामा ने आग्रह किया, "अब जाकर क्या बनाएंगे, खाना खाकर ही जाइएगा।"

शैल में भी आग्रह किया।
सुचित्रा ने फिर ज़ोर देकर कहा।
दिनेश को लगा जैसे वह इस घर का ही एक सदस्य है। वह बिना कोई प्रतिरोध किए बैठ गया।
श्यामा खाना तैयार करने अन्दर चली गई। शैल भी दिनेश के साथ तुरन्त ही खुल गया। सुचित्रा आज रसोई का काम श्यामा पर छोड़, ज़्यादा से ज़्यादा वक्त दिनेश के पास बैठकर गुज़ारने में रुचि लेती रही। दिनेश भी इलाके के बारे में अधिक से अधिक जानकारी लेने में रुचि दिखाता रहा। रायसाहब और उनकी इस नई किस्म की रियासत के साथ जुड़ी बहुत-सी बातें जानकर तो वह सन्न रह गया।

● ●

खाना खाने के बाद दिनेश स्कूल लौटने के लिए बाहर निकला तो जो कुत्ते पहले उसे देखते ही खाने को दौड़े थे, अब दुम हिलाकर स्नेह जता रहे थे। रात के स्वागत में आकाश चमक उठा था। दूर की हिमाच्छादित चोटियां कुछ ज़्यादा ही दमकने लगी थीं। एक मद्धम-सी लालिमा की आभा उनपर दिखाई देने लगी थी।
सब से स्नेह-भरी विदा लेकर वह थोड़ा आगे बढ़ा तो हवा के ठण्डे झोंके ने उसका स्वागत किया। उसे हवा में ठण्ड के साथ ताज़गी भी लगी। ताज़गी से उसने अपने अन्दर काफी स्फूर्ति अनुभव की। उसे लगा, उसमें बालपन का अल्हड़पन लौट आया है। उसने हाथ की छड़ी से गॉल्फ की स्टिक का काम लेकर पगडण्डी पर बिखरे छोटे-छोटे पत्थरों में से एक पर चोट की कि पत्थर नन्हें-से पक्षी की तरह उड़ता हुआ दूर झाड़ियों में लुप्त हो गया। इसी तरह उसने कई पत्थरों को उड़ाया। पत्थरों के झाड़ियों में से सर्राटे के साथ निकलने से पैदा होने वाली आवाज़ें उसे पक्षियों की आवाज़ों जैसी लगी। फिर सहसा यह ख्याल आ जाने पर कि छड़ी डा० दादा की भेंट की हुई है, उसने यह खेल खेलना बन्द कर दिया।
अब उसका ध्यान श्यामा द्वारा पकाए गए खाने पर था। आलू और

है। बाद मे सारे टुकड़ों को पत्थरों के साथ बोरी में भरकर नदी मे डुबो देते हैं।"

श्यामा मुंह-हाथ धोकर बाहर निकली तो मां उसे देखकर दंग रह गई। दिनेश को भी थोड़ा अचम्भा हुआ। अब श्यामा के कानों में चांदी के दो चमकदार कांटे लटक रहे थे। ये कांटे श्यामा कलकत्ते से अपने साथ लाई थी और तभी से बेकार की चीज की तरह सन्दूक में कैद पड़े थे।

खिले हुए बड़े-से गुलाब के फूल के पास खिली हुई दो सफेद कलियों की तरह लग रहे थे काटे। दिनेश उसे देखते ही फिर खड़ा हो गया लेकिन इस बार स्वागत और विदाई दोनो के लिए, "अच्छा तो अब मुझे इजाजत दीजिए।"

"खाना खाकर चले जाइएगा। बस अभी तैयार हो जाता है। अभी तो आपने कोई बन्दोबस्त भी नही किया होगा?" सुचित्रा ने उसे रोकना चाहा।

"जी नही, शहर से मैंने एक छोटा-सा बत्ती वाला स्टोव खरीद लिया था। उसमे तेल भी भरवा लिया था। थोड़ा आटा-दाल भी साथ बांध ली थी। मुझे अकल जी ने बता दिया था कि जहां मैं जा रहा हूं वहां कोई ढाबा या होटल नही होगा और लोग भी इतने हैण्ड-टू-माउथ हैं कि उनका अपना गुजारा भी मुश्किल से होता है।"

"अकल जी कौन?"

"मेरे पिताजी के पुराने दोस्त हैं। उन्होने ही मुझे इस नौकरी पर बुलाया है। इसी शिक्षा विभाग मे हैडकलर्क है।"

इसी समय शैल भी पशुओं को सानी डालकर आ पहुंचा। शैल के साथ एक कुत्ता भी कुदालिया भरता हुआ आया और श्यामा की टांगों के साथ लिपटकर लाड़ लड़ाने लगा।

शैल ने दिनेश को नमस्ते की। श्यामा ने दिनेश को शैल का परिचय दिया, "यह मेरा छोटा भाई है शैल।"

दिनेश ने गौर से देखा—शैल का चेहरा नाथूराम के तसवीर वाले चेहरे पर गया था। अचानक उसके दिमाग मे आया, क्या स्वभाव भी नाथूराम पर जाएगा?

श्यामा ने आग्रह किया, "अब जाकर क्या बनाएंगे, खाना खाकर ही जाइएगा।"

शैल में भी आग्रह किया।

सुचित्रा ने फिर जोर देकर कहा।

दिनेश को लगा जैसे वह इस घर का ही एक सदस्य है। वह बिना कोई प्रतिरोध किए बैठ गया।

श्यामा खाना तैयार करने अन्दर चली गई। शैल भी दिनेश के साथ तुरन्त ही खुल गया। सुचित्रा आज रसोई का काम श्यामा पर छोड़, ज्यादा से ज्यादा वक्त दिनेश के पास बैठकर गुजारने में रुचि लेती रही। दिनेश भी इलाके के बारे में अधिक से अधिक जानकारी लेने में रुचि दिखाता रहा। रायसाहब और उनकी इस नई किस्म की रियासत के साथ जुड़ी बहुत-सी बातें जानकर तो वह सन्न रह गया।

● ●

खाना खाने के बाद दिनेश स्कूल लौटने के लिए बाहर निकला तो जो कुत्ते पहले उसे देखते ही खाने को दौड़े थे, अब दुम हिलाकर स्नेह जता रहे थे। रात के स्वागत में आकाश चमक उठा था। दूर की हिमाच्छादित चोटियां कुछ ज्यादा ही दमकने लगी थी। एक मद्धम-सी लालिमा की आभा उनपर दिखाई देने लगी थी।

सब से स्नेह-भरी विदा लेकर वह थोड़ा आगे बढ़ा तो हवा के ठण्डे झोंके ने उसका स्वागत किया। उसे हवा में ठण्ड के साथ ताजगी भी लगी। ताजगी से उसने अपने अन्दर काफी स्फूर्ति अनुभव की। उसे लगा, उसमें बालपन का अल्हड़पन लौट आया है। उसने हाथ की छड़ी से गॉल्फ की स्टिक का काम लेकर पगडण्डी पर बिखरे छोटे-छोटे पत्थरों में से एक पर चोट की कि पत्थर नन्हें-से पक्षी की तरह उड़ता हुआ दूर झाड़ियों में लुप्त हो गया। इसी तरह उसने कई पत्थरों को उड़ाया। पत्थरों के झाड़ियों में से सर्राटे के साथ निकलने से पैदा होने वाली आवाजें उसे पक्षियों की आवाजों जैसी लगी। फिर सहसा यह ख्याल आ जाने पर कि छड़ी डा० दादा की भेंट की हुई है, उसने यह खेल खेलना बन्द कर दिया।

अब उसका ध्यान श्यामा द्वारा पकाए गए खाने पर था। आलू और

टमाटर को मिलाकर बनाई गई स्वादिष्ट तरकारी और पहाड़ी मकई की नर्म-नर्म चौड़ी-चौड़ी रोटियां। साथ पहाड़ी पोदीने की चटनी और उसपर लाल मलाई से भरी बड़ी-सी कटोरी। कितना संतुष्ट कर देने वाला खाना था वह, और उससे भी अधिक संतुष्ट करने वाला था पूरे के पूरे परिवार का व्यवहार। सबके अन्तर्मन से पहचान हो गई है पहली ही मुलाकात में। उसने महसूस किया था मानो भोजन के हर कौर में स्नेह और प्यार के अमृत का रस है। बिलकुल वैसा ही रस जो उसकी मां के हाथों बनाए गए भोजन में हुआ करता था।

कई वर्षों के बाद दिनेश ने दिन ढलने से पहले, इतना जल्द और इतना अच्छा खाना खाया था। जबसे मां मरी थी तबसे इस तरह का खाना उसे नसीब ही नही हुआ था। मां, जब तक वह खाना नही खा लेता था, एक दाना भी अपने मुंह मे नही डालती थी। उसके सिवा मां का था ही कौन ? दूर-दूर की रिश्तेदारी में बस अकेला वही था। बेटे का पेट भर जाना ही मा को अपना पेट भर जाना लगता था। मरते-मरते भी मां ने यही पूछा था, "तैंने दौर दी रोटी खाई कि नहीं ?"

चलते-चलते दिनेश के दिमाग में पूरे का पूरा वह दिन उतर आया, जिस दिन मा ने उसे अकेला छोड़, इस दुनिया से कूच कर दिया था। उस वक्त उसकी उम्र सिर्फ बारह साल की थी। ऐसी उम्र, जिसमें घटी घटनाएं सिर्फ धुधली-धुधली ही याद रहा करती हैं। लेकिन दिनेश को सब कुछ साफ-साफ याद है। अपना छोटा-सा, प्यारा-सा, पंजाबी गांव दसूहा। दसूहा में एक छोटा-सा हवादार घर। घर की छत पर से दिखाई देने वाला एक छोटा-सा खेत, और खेत के बीचों-बीच खड़ा एक बड़ा-सा डकैत का पेड़। मां कहा करती थी, "डकैत नाल सारा खेत निरोग रैंदै।..."

इसके साथ ही लछमनसिंह का बड़ी-बड़ी मूछों वाला भारी-भरकम चेहरा; और साथ ही डगरो के अस्पताल के साथ सटा सरकारी मिडल स्कूल। स्कूल के बूढ़े मास्टर सेवासिंह जी, जिनको साम्यवादी विचारो का प्रचारक होने के कारण तबादलों मे इधर-उधर भटकना पड़ता था और जो दिनेश की आठ वर्ष की स्कूली जिन्दगी में पूरे बाईस बार तबादला होकर आए और गए थे और अन्ततः नौकरी से छुट्टी पाकर जेल चले गए थे। जिन्दगी को एक नये ढंग से पहचानने की तमीज़ दिनेश को सेवासिंह जी से ही मिली थी। और फिर स्कूल के कुछ यार-दोस्त, हमजोली। इन्ही

हमजोलियों में सरपंच गिरधारी लाल जी की लड़की मीना। मीना के साथ और भी कुछ लड़कों-और-आदमीनुमा लडकियों के चेहरे। सबके सब एक-एक करके दिनेश के ज़हन में साकार होते चले गए। लेकिन इन सबके बीच कहीं-कहीं डा० दादा, श्यामा का परिवार और दमकड़ी गाव के लोग भी आ-आकर परेशान करते रहे। सुबह पढने आए बच्चों के चेहरे भी कौंधते रहे।

उसके दायें हाथ मे जली हुई सिगरेट थी और बायें में कटार वाली छड़ी। दोनों के सहारे वह घाटी की चढ़ाई तो चढ़-ही रहा था पर साथ ही अतीत की घाटियों में उतर भी रहा था। इस उतार और चढ़ाव को एक साथ झेलना उसे अच्छा लग रहा था। एकान्त मे किसी हमराज़ दोस्त की संगत जैसा अच्छा। और इस अच्छाई के हाथों मे उसने अपने आप को पूरी तरह से खुला छोड़ दिया था। घाटियों में भटकते हवा के झोंके की तरह आज़ाद।



इस साल फिर सूखा पड़ा है, इतना भयंकर कि कुओं और पोखरों का पानी भाप बनकर उड़ गया है। नहरों और नालों मे रेत के बगूले उड़ रहे है। आकाश, सूरज डूब जाने के बाद भी, जलते हुए तवे की तरह आंच छोड़ता रहता है। क्षितिज के किसी छोर पर बादलों के स्याह धब्बे ढूढ़ने वाली आंखें हार कर मन्दिरों, गुरुद्वारों या पीरगाहों की तरफ मुड़ गई हैं।

लेकिन सरदार लछमनसिंह के फार्म की धरती ऐसी विषम हालत में भी हरियाली का संगीत छेड़े हुए है। पैट्रोल से चलने वाली मशीन से निकलने वाली पानी की मोटी धार धरती के रेशे-रेशे को गीली किए हुए है। धार के बिलकुल पास ही, पूरे दो एकड़ की ज़मीन में, अच्छी किस्म के अगूरो का बगीचा फैला है। लछमन इस बगीचे मे जलती हुई दोपहरें गुजारता है और यहीं से फार्म में काम कर रहे मजदूरों की निगरानी भी करता है।

इसी फार्म के साथ सटा एक दूसरा छोटा-सा खेत है। दिनेश अपनी

और दोनो हथेलियों मे तम्बाखू की तरह मलता हुआ मां के सामने आ खड़ा होता है।

एक तरफ मां का मुरझाया हुआ हडियल चेहरा और दूसरी तरफ शीशे की तरह चमकता हुआ लछमन का चर्बीला चेहरा। दिनेश को लगता है जैसे मां लछमन से लड़ते-लड़ते हांफ गई है और आगे लड़ाई जारी रखने की हालत मे नहीं है।...और फिर मां की थरथराती हुई आवाज़, "एन्ने थोडे पैसयांच वी कदे खेत मिले नें सरदार जी, की लुट्ट मची होई है?"

"वेवे लुट्ट तां मची ही होई है। पर तू पैसयां दी की गल्ल करन डई है। अपने मुह तों ता आख, फेर देख! की ऐंदी ए?"

पर मां बिना कोई जवाब दिए खड़ी हो गई है। उसने घड़े का पानी तर्पण के पानी की तरह खेत मे डाल दिया है और घड़ा दिनेश के हाथों में रखकर घर की ओर चल दी है।

मा के मन की थाह पाकर लछमन भी साथ-साथ चल दिया है। वह बहुत ज्यादा नजदीक आकर, जैसे दिनेश से छुपाकर, मां से खुसर-फुसर करने लगा है। पर दिनेश को इस खुसर-फुसर से कुछ नहीं लेना-देना है। वह उस याद मे डूब गया है कि सवेरे लाला ने गुस्से में आगबबूला होकर पिछला हिसाब चुकता किए बिना आगे का सामान देने से मां को साफ इंकार कर दिया था। मां को गुस्सा तो बहुत आया था पर करती भी क्या? अब तो घर मे गिरवी रखने या बेचने के लिए कोई ज़ेवर भी तो नही बचा था।

अन्ततः गांव के गुहारों तक पहुंचते-पहुंचते लछमन मां का रास्ता रोककर खडा हो गया है। दिनेश का ध्यान भी उसकी तरफ गया है। फिर मुस्कुराहट से कपोलो के लट्टू चमकाते हुए लछमन ने कोई हिसाब की रकम बोली है। मां को रकम सुनकर चुप देख उसने जेब में हाथ डालकर नोटो का एक बंडल निकाला है और मां की हथेली पर रखकर, ना-ना करती मा के हाथ की मुट्ठी बन्द कर दी है। जाते-जाते वह कल सुबह शहर चलने के लिए तैयार रहने की बात भी कह गया है।

मां नोटों का बंडल लेकर सबसे पहले लाला की दुकान पर गई है और लाला पर निगाह पड़ते ही शब्दों को जैसे चबा-चबाकर बोली है, "अपना हिसाब चुक्ता कर लाला, अग्गे तों उधार बन्द!"

लाला मिमियाता हुआ अन्दर से वही निकाल लाया है। वही के पन्ने पलटते हुए उसने पूछा है, "कितने का सौदा निपटा?" पर मां कोई जवाब नहीं देती। मां का तपा हुआ मुंह देख लाला वही से हिसाब करता है और वही के हिसाब से बंडल के पूरे रुपये देकर भी मां कुछ रुपयों की देनदार रह जाती है। मां की गर्व से तनी गर्दन झुक जाती है और वह बाकी के रुपये एक-दो दिन में देने का वादा करके घर की तरफ चल पड़ती है।

रास्ते में दिनेश को लगता है जैसे मां गूंगी और बहरी हो गई है। मां को अपनी तेज चाल के कारण अपने और दिनेश के बीच पैदा हो गई दूरी का भी आभास नहीं रहा है। दिनेश के मन में एक बवंडर उठ खड़ा होता है और वह उस बवंडर के वशीभूत होकर घड़े को दोनों हाथों पर लेकर आसमान की तरफ उठाता है और एक क्षण बाद ही घड़ा जमीन के साथ टकराकर चकनाचूर हो जाता है।

घड़ा टूटने का धमाका सुनकर मां एक क्षण के लिए ठिठकती है। वह धरती पर बिखरे घड़े के ठीकरे भी देखती है और फिर जैसे कुछ हुआ हो न हो, मुड़कर पहले से भी ज्यादा तेज चाल से घर की तरफ बढ़ जाती है।

दिनेश इधर-उधर भटककर शाम को जब घर पहुंचता है तो मा को खाट पर निढाल पड़ी देखता है। उसे लगता है जैसे मां कोई चिता जलाकर श्मशान घाट से लौटी है। बापू की चिता जलाकर लौटने के बाद भी मा ऐसी ही हो गई थी। उस वक्त साथ में बहुत-सी दूसरी औरतें भी थीं लेकिन अब वह अकेली है। अकेली होने और वह भी भरे-पूरे गांव में अकेली होने का एहसास दिनेश को मां के रोएं-रोएं से फूटता हुआ दिखाई दे रहा है।

उस रात मां को नींद नहीं आई थी। सारी रात वह असाध्य रोग से पीड़ित औरत की तरह करवटें बदलती रही थी। बापू भी जब मरा था तब कई रातों तक इसी तरह करवटें बदलता रहा था। लेकिन मां बापू की तरह चुप नहीं है। बीच-बीच में धीमी-धीमी आवाज में बड़बड़ाने लगती है, "सड़क बनाने वास्ते जमीन खुस्सन नालों ते बेचना ही चंगा···हां बेचना ही चंगा।"

मां के इस बड़बड़ाते दर्द के बारे में भी दिनेश बहुत अच्छी तरह से

जानता है। बड़े-बड़े ज़मीदारों ने सिफारिशों या पैसों के बल पर नई निकल रही सड़क की जद से अपनी-अपनी ज़मीनें बचा ली हैं। गरीब आदमी के पास न पैसा है न सिफारिश। अब सड़क सीधी न निकलकर, सांप की तरह बल खाकर, छोटे किसानों के खेतों में से निकलेगी। मां का खेत भी सांप की इस कुण्डली का शिकार हो सकता है।

"हुन्दा तेरा बापू दिनेशा, तां ओ वी कुज ना कुज कर लैन्दा। मैं श्रीरत जात, वेवा किद्दर जावां?···की करां?" अचानक मां चीख मारकर रो पड़ती है।

मां की इस हालत पर दिनेश का भी मन कांप उठता है। कहीं बाप और मां दोनों के बिना भी किसी बच्चे का जीवन संभव है?···गाढ़ी गर्मी के दिनों में भी उसकी हड्डियों में पाला उतरने लगता है।

लेकिन पौ फटने से पहले ही जब मां ठीक-ठाक उठकर खड़ी हो जाती है तो दिनेश की खुशी का ठिकाना नहीं रहता। मा को रोज़ की तरह काम करती देखकर तो वह और भी पुलकित हो उठता है।

मां चक्की चलाकर आटा पीसती है, कुएं से पानी भरकर लाती है, घर-आंगन बुहारती है, प्याज़ डालकर मिस्सी रोटी बनाती है और रोटी के साथ के लिए लस्सी गुरमीत की मा के घर से मांग लाती है।

सूरज निकलने से पहले ही मां नहा-धोकर और धुले कपड़े पहनकर तैयार हो जाती है। दिनेश भी मा के कहने के मुताबिक तैयार हो जाता है। मां-बेटा रोटी खाने बैठते हैं तो बाहर अपने ट्रेक्टर की ट्राली में तीन-चार गवाह भरकर लछमन हार्न बजा-बजाकर अपने आने की सूचना दे देता है। रोटी बीच में ही छोड़ मा-बेटा दोनों जाकर ट्राली में बैठ जाते हैं और ट्रेक्टर बाहर से बाहर ही चक्कर लगाकर शहर की ओर चल देता है।

शहर पहुंचकर मां को दोपहर तक कचहरी में बैठकर इंतज़ार करना पड़ता है। आखिर एक काले साहब के सामने मां पेश होती है और बिना गिने ही पैसों के बारे में 'ठीक है गिन लिए' बोलकर तसवीरों वाले सरकारी कागज़ों पर अंगूठे लगा देती है।

आते वक्त मां को दिनेश के साथ बस पर बैठकर आना पड़ता है। लछमन ने नये खेत के लिए खाद और बीज की बोरियां लदवा कर ले जानी हैं, मां और उनके बेटे के लिए अब उसके ट्रेक्टर में कोई जगह नहीं

है। मां जाते हुए ट्रैक्टर को बहुत दूर तक पागलों की तरह देखती रही है, जैसे ट्रैक्टर में उसकी बिकी हुई ज़मीन लदी जा रही हो।

घर पहुंचते ही किसी ने कहा है, "पारो, ऐस नन्ही जी जान दे वास्ते इक छोटा जिहा ज़मीन दा टुकड़ा बचया सी तैं ओ वी।"

"पानी तेरे पयो तों लैंदे ओसं ज़मीन दे टुकड़े वास्ते?" मां उस औरत की बात पूरी होने से पहले ही भड़क उठी है और उसके साथ लड़-मरने को तैयार हो गई है। वह सबके साथ इसी तरह लड़-मरने को तैयार है। लोगों को उसके पागलपन का पता चल गया है, इसलिए अब उसको कोई कुछ नहीं कहता, कन्नी काटकर निकल जाते हैं।

इधर तीसरे ही दिन खेत को पानी मिल गया है। बीच की मेड़ काटते ही पंप का पानी खेत की नस-नस तक पहुंच गया है। पर लोग अब उसे खेत थोड़े ही कहेंगे, फार्म कहेंगे, लछमनसिंह का पंप वाला फार्म।

इसके बाद वह दिन भी आ गया जब पास का पैसा खत्म होते ही मा को लछमन के पंप वाले फार्म में मजदूरी करने के लिए मजबूर होना पड़ा। दिनेश के बाल-दिमाग को समझ मे न आता कि यह कैसी मजबूरी है। अपने ही पुरखों के खेत पर खुद अपने आप मजदूरी। मां दूसरों के खेत पर मजदूरी क्यों नही करती? उसके दिमाग मे बस यही आता कि मां शायद अब भी अपने खेत को लेकर भावुक है। उसे मां की भावुकता का प्रमाण मिल भी जाता।

वह स्कूल की छत पर खड़ा होकर मा को खेत मे काम करती देखता। देखता कि मां बापू के हाथ मे लगाए डकैत के पेड़ को हसरत-भरी निगाह से देख रही है। बापू भी डकैत के पेड़ के पास खड़ा होकर कहा करता था, "डकैत से पूरा का पूरा खेत निरोग रहता है।"

लेकिन मा निरोग नही रह सकी। लछमन के आसपास रहकर कोई भी निरोग नही रह सकता। फिर वह तो उसके ससर्ग मे चली गई थी। उसके फार्म का अन्न खाने का संसर्ग। आखिर वह दिन भी आया जब किसी ने स्कूल में आकर खबर दी, "दिनेश तेरी मां खेत विच बेहोश पयी है।"

वह भागा-भागा खेत तक पहुंचा था, पर मां को उठाकर घर पटक दिया था। इसके बाद मां कई रात तक बेचैनी में करवटें बदलती रही थी और बड़बड़ाती रही थी, "मेरा दिनेश पढ़-लिख के नौकरी करेगा, नौकरी

करके बहुत सारे रुपये कमाएगा। रुपये कमाके अपना खेत वी वापस लै लवेगा! जरूर लै लवेगा।"

वह मां को विश्वास दिलाता कि हां वह खेत को जरूर वापिस ले लेगा। पर मां को शायद उसके विश्वास दिलाने पर विश्वास नहीं बैठता था। वह खुद भी तो जानता ही था कि लछमनसिंह के पास गया खेत वापिस नहीं आता। अब तक कई खेत इसी तरह उसके कब्जे में गए पर एक भी वापिस नहीं आया।

आखिर एक शाम सास भारी होते-होते मा ने पूछा, "तैंने दुपैर दी रोटी खाई?"

दिनेश ने जवाब दिया, "हां खाई।"

मा ने फिर पूछा, "कित्थों आई?"

उसने जवाब दिया, "मीना के घर से आई।"

सुनते ही मां के चेहरे पर सकून की हल्की-सी चमक उभरी और फिर वह चमक धीरे-धीरे कालिमा मे बदलती चली गई। लोगों ने सांस और नब्ज़ देखकर बताया, "पारो मर गई।"

हा, मा सचमुच मर गई थी। जिस घर में कोई मर जाता है, उसमें लोग अपने बच्चों को नहीं जाने देते। मीना भी बहुत दिनों तक उसके घर नही आई थी। उसे आने ही नही दिया गया था। वह दूर खड़ी होकर ही दिनेश को देख जाती थी।

लेकिन एक था लछमनसिंह। भैसासुर राक्षस का अवतार लछमनसिंह। अभी मा की चिता की आग ठण्डी भी नहीं हुई थी, कि उसने किसी के हाथ मकान की खरीद-फरोख्त की बात शुरू कर दी थी।

और फिर शुरू हुई इसके बाप की जलालत-भरी जिन्दगी की कहानी। इस जिन्दगी को जीते हुए किसी न किसी तरह मैट्रिक पास किया। मैट्रिक के बाद छोटी-छोटी नौकरियों के साथ जे० बी० टी०, इसके साथ ही छोटी-बड़ी, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित, पत्र-पत्रिकाओं में लेखन का प्रकाशन भी। और फिर···और फिर···और फिर···

अचानक दिनेश को लगा जैसे वह बहुत थक गया है। हाथ में पकड़ी छड़ी उसे भारी लगने लगी है और तेज हवा में से सांस का कोई टुकड़ा काटकर फेफड़ों तक ले जाने में भी परेशानी-सी महसूस हो रही है।

सामने गुलेल के हत्थे की शक्ल का तिराहा नजर आ रहा है। एक रास्ता सीधा दमकड़ी गांव को जाता है, जो डा० दादा के दवाखाने के पास से होता हुआ, कई घाटियों और नालों को पार करके, राय साहब के चिटमौला वाले डाक बंगले के पास पहुंचकर, शहर जाने वाली पक्की सड़क से जा मिलता है। दूसरा स्कूल की तरफ से होता हुआ, डा० दादा के दवाई खाने के पास शहर वाले रास्ते में ही विलीन हो जाता है। और तीसरे से वह आया है, जो नीचे के सुमेरु गाव के पास से होता हुआ जाने किन अनजानी घाटियों की तरफ चला जाता है। इन घाटियों के ऊपर की तरफ बहुत दूर हिमाच्छादित चोटियां दिखाई देती हैं। लोगों का कहना है कि इन चोटियो के बीच ही कहीं मानसरोवर है। सुमेरु के पास से बहकर जाने वाली सोन नदी उस मानसरोवर के ही कहीं आसपास से निकलकर आती है।

दिनेश थोड़ी देर के लिए रुककर उन चोटियों को देखने लगा, जो अब धीरे-धीरे हल्के नीले रंग में बदलती चली जा रही थी। उसे बहुत-सी दूसरी बातें भी याद आने लगी जो शहर से आते समय रास्ते में उसे डा० दादा ने बताई थीं। बहुत छोटे-छोटे संकेत थे, जो कुछ भी न कहकर बहुत कुछ कहते थे। वह उन संकेतों के अर्थ खोजने रास्ते के किनारे पड़े एक बड़े-से पत्थर पर पालथी मारकर बैठ गया।

अब उसके सामने था हरियाली घाटी का दृश्य, जिसके बीच से होकर वह ऊपर आया था। वह दादा के संकेतों के अर्थ खोजने की बजाय उस दृश्य में खो गया। दृश्य, पेंट किए घरों की तरह नजर आ रहा था। पहरुआ गांव, सिर्फ पन्द्रह घरो में रहने वाले पचपन हरिजनों का गाव। उसे लगा, जैसे श्यामा, सुचित्रा मां और शैल अभी भी पेड़ के नीचे रुके उसी की ओर ताक रहे हैं। शैल तो हाथ हिला-हिलाकर अब भी उसे विदा कर रहा है।

सहसा किसी की तीखी और खुरदरी आवाज ने उसका निजत्व भंग

कर दिया, "मास्टर जी।"

उसने चौंककर देखा तो सामने ओझा के अंगरक्षक चेतू को पाया, ऐसी थकावट के साथ-जैसे बहुत देर से वह उसका पीछा कर रहा हो।

चेतू ने उसी आवाज़ में उलाहना दिया, "डा० दादा आपको ढूंढते फिर रहे हैं,कहां चले गए थे आप ?..."

"बस यूं ही, ज़रा घूमने निकल गया था।" उसने चेतू से मुआफी-सी मांगी।

लेकिन चेतू उसका जवाब सुनकर अजीब-सी हरकत के साथ मुस्कराने लगा। वह उसकी हरकत का अर्थ नहीं समझ सका। हां, उसमें एक लिजलिजे भौंडेपन का एहसास उसे ज़रूर हुआ। उसे लगा, चेतू या तो पागल है या बहुत ज़्यादा चालाक। वह उठा और चेतू में ज़्यादा दिलचस्पी न दिखाते हुए स्कूल की तरफ चल दिया।

चलते-चलते उसे महसूस होता रहा कि चेतू अब भी उसका पीछा कर रहा है। कई बार उसने पीछे मुड़कर देखा भी पर चेतू उसे दिखाई नहीं पड़ा। फिर भी लगता यही रहा कि वह किसी चट्टान या दरख्त के पीछे छुपा है और उसकी हर हरकत पर निगाह रख रहा है।

● ●

स्कूल पहुंचकर दिनेश ने कोठरी का ताला खोला। अन्दर गहरा अंधेरा देखकर उसे याद आया कि दिये या लैंप का बन्दोबस्त करना तो वह भूल ही गया है। एक ख्याल आया कि डा० दादा के यहां चला जाए और वहां से रोशनी का कोई अस्थाई बन्दोबस्त करके लाया जाए। लेकिन बाहर उतर आए अंधेरे को देखकर उसने विचार बदल दिया और आज की रात बैटरी के सहारे ही निकालने का निश्चय करके उसने बैटरी की रोशनी में बिस्तर ठीक किया और किवाड़ बन्द करके लेट गया।

लेटते ही उसके अतीत ने फिर उसे आ दबोचा। वह सुचित्रा मां और स्वर्गीय मां और साथ ही श्यामा और मीना की तुलना करके, इन सबके बीच अपनी वास्तविकता को खोजने की कोशिश करने लगा।

कितनी निरीह थी मां और कितनी संतप्त। उसकी आंखों में सुचित्रा

मा जैसा तेज क्यों नहीं था ? क्या बंगालियों का खून पंजाबियों के खून से किसी मायने में उत्तम है ? नहीं-नहीं, पंजाबियों ने बंगालियों से कम बलिदान नहीं दिए है। फिर मां इतनी निहत्थी क्यों थी ?...इतनी पस्त दिल क्यों ?...

और मीना ?...मीना भी तो श्यामा की तरह नहीं है। समाज की आंखों का खयाल आते ही इतनी डर जाती है कि अंग-अंग कांपने लगता है उसका। कितनी मासूमियत है उसके चेहरे पर। हर हरकत बच्चों जैसी। दुनिया के बदलते हुए तेवरों का उसके संस्कारी जीवन पर रत्ती-भर भी असर नहीं है।

उसके कानों में मीना के कहे हुए शब्द पुराने चर्च के किसी पुराने घड़ियाल की तरह बजने लगे, "नहीं, औरत का धर्म विद्रोह करना नहीं है, समर्पण और त्याग है। उसका इतिहास ही समर्पण और त्याग से बना है। सामाजिक आदर्श और खानदान की इज्जत के लिए अगर ज़रूरत पड़े तो मैं अपनी तमाम सुख-सुविधाओं का, यहां तक कि अपने प्यार तक का भी बलिदान कर सकती हूं!"

दिनेश की छाती से उठकर हवा का एक गोला, मुंह के रास्ते बाहर आकर कोठरी की ठण्डक में जम गया। उसे लगा, उसकी कोठरी के अंधेरे कोने में बंधी एक खूबसूरत बछिया सूखे भूसे पर मुंह मार रही है, बाहर घाटियों में नर्म-नर्म दूब लहलहा रही है, लेकिन बछिया उन घाटियों में जाने के लिए तैयार नहीं है।

सहसा उसे लगा कि उसकी हथेलियों के बीच रखा मीना का नर्म-नर्म हाथ दिल जितनी ही तेज़ी से धड़क रहा है। उसने हाथ को अपने होंठों से सम्मानित करने के लिए सिर झुकाया है। पर मीना ने, होंठ हाथ तक पहुंचने से पहले ही, हाथ हथेलियों से बाहर खींचकर उसे पानी-पानी कर दिया है। मीना के लिए यह साधारण-सी घटना भी किसी अनहोनी से कम रुतबा नहीं रखती। उसके माथे पर अबरक के ज़र्रों जैसी पसीने की छोटी-छोटी बूंदें उभर आई हैं और वह हांफती हुई-सी आवाज़ में फुस-फुसाई है, "चलिए, बाहर खुले में चलेंगे...इस बरसाती में बहुत गर्मी लग रही है।"

सहसा दिनेश को लगा जैसे कोई कोठरी का दरवाजा खटखटा रहा है। उसने बैटरी जलाकर घड़ी देखी। दस बज रहे थे। पहाड़ी रात की

गाय द्वारा शेर का मुकाबला करने की बात लिखी गई थी। फिर आदमी न तो पक्षी है, न जंगल का घासखाऊ जानवर और न गाय-बैल। आदमी तो आदमी है। उसके रक्त में अनन्त शक्ति और ऊर्जा का भण्डार है। उस अनन्त शक्ति और ऊर्जा के बारे में उसे सचेत और वाखबर किया जाना चाहिए।

अपने आपसे सहमत होते ही उसके हाथों ने द्वार बन्द करके पहले की ही तरह सांकल चढ़ा दी। पेड़ों के साथ हवा के टकराने की आवाज अब उसे साफ सुनाई देने लगी। विचारों के रेले में बहते हुए उसने पहले उस आवाज की तरफ ध्यान ही नही दिया था। उसने सिगरेट सुलगाई और लेटे ही लेटे गहरे कश खींचने लगा। पर इस बार उसे अतीत ने नही घेरा। घेरा तो दमकड़ी गांव के लोगों की आदतों और चेहरों ने। वह उन लोगों के बारे में सोचता-सोचता सो गया।



सोते-सोते दिनेश तरह-तरह के सपने देखता रहा। सपने में ही उसे लगा जैसे कोई बड़ी देर से उसकी कोठरी का दरवाजा पीट रहा है। किसी के चिल्ला-चिल्लाकर पुकारने की भनक कानों में पड़ी तो वह सिर पर बंधा मफलर खोलकर ध्यान से सुनने लगा। कोई सचमुच मे किवाड़ों को पीट-पीटकर आवाजें लगा रहा था, "दिनेश! दिनेश तुम अन्दर हो? दरवाजा खोलो दिनेश?"

उसने हड़बड़ाकर कम्बल छोड़ दिया। दरवाजा खोला तो देखा, हाथ मे अजीब किस्म की लकड़ी की दातुन लिए दादा खड़े हैं और हैरत से उसे देख रहे है।

"ओऽऽऽ डा० दादा!" दिनेश ने मुस्कराकर उनका स्वागत किया। "रात सोने में थोड़ी देर हो गई थी, नहीं तो मैं सुबह पांच बजे से पहले ही उठ जाया करता हूं। आइए, आइए, अन्दर आइए?"

"क्यों, रात खाना खाया?"

"आप अन्दर तो आइए, सब बताता हूं।"

"क्यों अन्दर क्यों, बाहर क्यों नहीं? देख नहीं रहे, कुदरत किस

इस कड़ाके की सर्दी में कौन हो सकता है? उसने धीमी-सी आवाज़ दी, "कौन?" फिर ऊंची आवाज़ में पूछा, "कौन है?" जवाब नहीं मिला तो सोचा हवा होगी। लेकिन मन के किसी कोने में डरावने विचार ने करवट भी बदली। उसने टार्च बन्द कर दी और जुड़े हुए कम्बलों को जिस्म के नीचे दबाकर सोने की कोशिश करने लगा।

लेकिन दस-पन्द्रह मिनट बाद फिर उसे लगा जैसे दरवाज़े पर कोई गद्देदार चीज़ बज रही है। वह बिस्तर छोड़कर खड़ा हो गया। छड़ी में से धीरे-धीरे कटार बाहर निकाली और उसकी नोक दरवाज़े की चौड़ी झिरी पर रखकर दूसरी झिरी पर आंख गड़ाकर बाहर देखने लगा, ताकि अगर कोई जानवर हो तो अन्दर से ही कटार उसके पेट में उतार दे और बच्ची को उठाकर ले जाने का बदला चुका ले।

पर बाहर कोई नहीं था। तेज़ हवा चल रही थी और मद्धम चांदनी में पेड़ों की टहनियां मस्त होकर झूम रही थीं।

सवाल उठा कि अगर वह बन्द कमरे के अन्दर न होकर खुले मैदान में हो तो क्या इस छोटे से हथियार से किसी खूंखार जानवर का मुकाबला कर सकता है? उत्तर मिला, घायल तो कर ही सकता है। सवाल फिर आया कि क्या जानवर को मात्र घायल करने के लिए आदमी का अपनी जान का बलिदान देना उचित है? इस सवाल के जवाब में उसने दरवाज़ा खोल डाला और देहली पर उन्मुक्त खड़ा हो गया।

अब उसके आगे प्रकृति का बहुत बड़ा कैनवस था। सामने के पहाड़ की चोटी पर खिला चांद उसे बहुत आकर्षक लगा। चोटी से लेकर घाटी की हरीतिमा तक सफेद मच्छरदानी की तरह तनी हुई चांदनी उसे नशीली लगी। उसे लगा कि संसार बहुत खूबसूरत है और इस खूबसूरती को बिना किसी भय, आतंक और रोक-टोक के भोगने के लिए सही हालात पैदा करना आदमी की ही ज़िम्मेदारी है।

अब दिनेश की बुद्धि का यह निर्णय था कि बाज़ को घायल करने की इच्छा को लेकर बाज़ के साथ एक चिड़िया को लड़ाना, बहुत समझदारी नहीं है। उसके लिए पक्षियों के एक बहुत बड़े संगठन की आवश्यकता है। शेर से जंगल के जानवरों की रक्षा करने के लिए जानवरों को उनके आपसी संगठन को पैने सींगों की ताकत के बारे में जानकारी देना बहुत ज़्यादा ज़रूरी है। उसका ध्यान उन खबरों की ओर गया जिनमें किसी

गाय द्वारा शेर का मुकाबला करने की बात लिखी गई थी। फिर ग्रादमी न तो पक्षी है, न जंगल का घासखाऊ जानवर ग्रौर न गाय-बैल। आदमी तो आदमी है। उसके रक्त में अनन्त शक्ति ग्रौर ऊर्जा का भण्डार है। उस अनन्त शक्ति और ऊर्जा के बारे में उसे सचेत और वाखवर किया जाना चाहिए।

अपने आपसे सहमत होते ही उसके हाथों ने द्वार वन्द करके पहले की ही तरह सांकल चढ़ा दी। पेड़ों के साथ हवा के टकराने की आवाज़ अब उसे साफ सुनाई देने लगी। विचारों के रेले में बहते हुए उसने पहले उस ग्रावाज़ की तरफ ध्यान ही नहीं दिया था। उसने सिगरेट सुलगाई और लेटे ही लेटे गहरे कश खींचने लगा। पर इस बार उसे अतीत ने नहीं घेरा। घेरा तो दमकड़ी गांव के लोगों की ग्रादतों और चेहरों ने। वह उन लोगों के बारे में सोचता-सोचता सो गया।

● ●

सोते-सोते दिनेश तरह-तरह के सपने देखता रहा। सपने में ही उसे लगा जैसे कोई बड़ी देर से उसकी कोठरी का दरवाज़ा पीट रहा है। किसी के चिल्ला-चिल्लाकर पुकारने की भनक कानों में पड़ी तो वह सिर पर बंधा मफलर खोलकर ध्यान से सुनने लगा। कोई सचमुच में किवाड़ों को पीट-पीटकर आवाज़ें लगा रहा था, "दिनेश, दिनेश तुम अन्दर हो? दरवाज़ा खोलो दिनेश?"

उसने हड़बड़ाकर कम्बल छोड़ दिया। दरवाज़ा खोला तो देखा, हाथ में अजीब किस्म की लकड़ी की दातुन लिए दादा खड़े हैं और हैरत से उसे देख रहे हैं।

"ग्रोऽऽऽ डा० दादा!" दिनेश ने मुस्कराकर उनका स्वागत किया। "रात सोने में थोड़ी देर हो गई थी, नहीं तो मैं सुबह पांच बजे से पहले ही उठ जाया करता हूं। आइए, आइए, अन्दर आइए?"

"क्यों, रात खाना खाया?"

"ग्राप अन्दर तो आइए, सब बताता हूं।"

"क्यों ग्रन्दर क्यों, वाहर क्यों नहीं? देख नहीं रहे, कुदरत किस

तरह दोनों हाथों से अपना खजाना लुटा रही है ?"

दिनेश बाजू छाती पर बांधकर बाहर निकल आया। पर्वत की घाटियों में आसमानी रंग का कुहरा जमा खड़ा था, जैसे रात की चांदनी ठण्ड के मारे जम गई हो। हवा अब बन्द थी। पेड़ जैसे सारी रात जागने की वजह से थककर अब गहरी नींद में सो रहे थे। कोई पक्षी टहनी पर आकर बैठता तो सिर्फ टहनी ही कांपती, और कुछ नहीं। एक भूरी चोंच वाली चितकबरी चिड़िया उसके सामने की झाड़ियों पर ही फुदक रही थी। ऐसी स्वस्थ और सुन्दर चिड़िया उसने पहले कभी नहीं देखी थी। वह मुग्ध भाव से उस चिड़िया का चहचहाना सुनने लगा। लेकिन कुछ पल बाद ही उसके दांत कटकटाने लगे।

डा० दादा उसके कांपते जिस्म को देखकर तनिक मुस्कराए, "चलो, अन्दर ही चलकर बैठते हैं, अभी तुम सर्दी का आनन्द लेने के काबिल नहीं हुए हो।"

दोनों अन्दर चले आए।

डा० दादा ने कोने में पड़ी कुर्सी देखी तो उन्हें खुशी हुई। उन्हें विश्वास हो गया कि दिनेश इन विषम परिस्थितियों में गुज़र कर लेगा। उन्हें पता है कि पूरे स्कूल में एक ही कुर्सी है, स्कूल का समय खत्म होने के बाद दिनेश उसे अपने उपयोग के लिए कोठरी में उठा लाया है।

डा० दादा कुर्सी पर बैठे तो दिनेश फिर कम्बलों में घुस गया और सिगरेट सुलगाकर गर्म होने की कोशिश करने लगा।

"हां, तो कल शाम का खाना कहां खाया ?" डा० दादा ने उसे याद दिलाया कि उसने इस सवाल का जवाब नहीं दिया है।

दिनेश ने सुचित्रा मां के घर खाना खाने की सारी कहानी कह सुनाई।

कहानी सुनकर डा० दादा का चेहरा उदास हो गया। उदासी में ही उनके मुख से निकल गया, "चलो, जो होना था सो हो गया।"

"क्या होना था ?" दिनेश के माथे पर आशंका के बल पड़ गए।

"होना क्या था ? तुमने अछूत घर में भोजन कर लिया। लोगों को पता चलेगा तो वे तुमसे अपने बच्चे तक पढ़ाना पसन्द नहीं करेंगे।"

दिनेश के होंठों पर एक गाढ़ी-सी मुस्कान फैल गई। "अच्छा, तो सुचित्रा मां अछूत हैं ?"

"सुचित्रा नहीं बंगालन मां कहो, लोग उसे इसी नाम से पुकारते हैं।"

"नहीं बंगालन मां अछूत नहीं है, पर नाथूराम अछूत था। अब भी उसकी छोटी बहन सन्ती पास के गांव पचकोटा में अछूतों के यहा ब्याही हुई है। पहरुआ पूरी की पूरी है ही अछूतों की बस्ती, वहा दूसरी जाति का एक भी घर नहीं है।"

"तब तो बहुत बड़ा पाप हो गया है दादा!"

"हां, पाप तो हो ही गया है।"

"क्या आप भी इस बात को मानते है?"

"किस बात को?"

"कि पाप हो गया है।"

"मानना ही पड़ता है। मैंने यहां के लोगो मे रहना है, उनमे रहने के लिए उनके समाज की मान्यताओ की इज्जत तो करनी ही पड़ेगी।"

"वह तो जरूर करनी पड़ेगी।"

"तो फिर ठीक ही तो कह रहा हूं?"

"लेकिन आपने ही तो श्यामा की तारीफ के पुल बांधे थे मेरे सामने।"

"वह और बात है, दूसरे के गुणों की तारीफ करना हर आदमी का फर्ज है। लेकिन मैंने श्यामा के घर का खाना कभी नही खाया। यहां तक कि उनके परिवार के किसी सदस्य को हाथ तक नही लगाया।"

"लेकिन मुझे तो एक पल के लिए भी नहीं लगा कि बंगालन मा का परिवार अछूतों का परिवार है। उन सब के चेहरो से भी नही लगता कि···"

"कहा तो कि बंगालन अछूत नहीं है। वह तो अच्छे घर की है। वह तो किस्मत ने धोखा दिया तो कलकत्ते मे···" दादा के कन्धे पर खुजली हो आई।

"क्यों, बताते-बताते चुप क्यों हो गए आप?"

"दरअसल मुझे भी पक्का पता नही है। सिर्फ सुना है। वह भी सन्ती के पति के मुख से। हो सकता है उसने झूठ ही बोला हो।"

"क्या झूठ बोला हो?"

"यही कि बगालन नाथूराम के पास आने से पहले कलकत्ता मे वेश्या का धन्धा करती थी।"

इस बार फिर दिनेश के होंठों पर मुस्कान फैल गई।

"तुम हंस रहे हो ?"

"नहीं दादा, रो रहा हूं। ऐसी बातें सुनकर भी कोई हंस सकता है ?"

"रो क्यों रहे हो ?"

"इसलिए कि आप जैसे समझदार आदमी भी इन दकियानूसी विचारों के शिकार हैं। और वह भी सुनी-सुनाई बातों के आधार पर।"

"हज़ारों बातें ऐसी हैं, जिन पर सुन-सुनाकर ही विश्वास करना होता है।"

"आप बजा फरमा रहे हैं, लेकिन गुजारिश तो सिर्फ यह है कि वेश्या-वृत्ति और छुआछूत जैसी खतरनाक बीमारियां, समाज के एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग पर किए जा रहे अन्याय और पाशविक अत्याचारों का ही नतीजा है। चेतनाहीन इंसान को जानवरी ज़िन्दगी जीने के लिए मजबूर किए जाने की भद्दी मिसालें हैं। आप जैसे लोग भी इन सब की पैरवी करेंगे तो समाज का उद्धार कैसे होगा ? आदिम युग की मायावी विचित्रताओं के गहरे गर्त से इंसान बाहर कैसे निकलेगा ? श्यामा जैसी लड़कियां कूड़े के ढेर की तरह खाद नहीं बनती रहेंगी, धर्म और समाज के ठेकेदारों के निहित स्वार्थों की ज़मीन की ?"

"लेकिन तुम यह भी अच्छी तरह से समझ लो कि श्यामा बगालन की, नाथूराम के यहां आने से पहले की संतान है।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि उसके असली पिता का नाम कोई नहीं जानता। वह धर्म और समाज का कोई ठेकेदार भी तो हो सकता है।"

अब दिनेश के चेहरे पर उदासी पुत गई। डा० दादा ने भी उसकी इस उदासी को पहचाना। डा० दादा को लगा जैसे अनजाने में उनसे कोई बहुत बड़ी भूल हो गई है। वे खिसियानी हंसी हंसकर खड़े हो गए, "मैं तो यह बताने आया था कि आदमखोर अभी इसी इलाके में है। रात कुछ घरों के दरवाज़े थपथपाता रहा, लेकिन किसी ने खोला नहीं। रात को दरवाज़ा ज़रा अच्छी तरह से बन्द करके सोया करो, नहीं तो मेरे पास ही चले आओ, उस झोंपड़ी में एक आदमी के सोने की जगह तो बन ही जाएगी।"

दिनेश ने कोई जवाब नहीं दिया तो दादा समझ गए कि लेखक का

लेखक जाग उठा है। इसी तरह शिकारी लेखक का लेखक जागता था तो वह भी किसी से घंटों बात नहीं करता था। डा० दादा ने अब वहां से चल देना ही ठीक समझा। वे चुपके से मुड़े और दिनेश को बिना कुछ कहे बाहर निकल गए।

दिनेश भी चुपचाप बैठा डा० दादा को पगडण्डी पर जाते देखता रहा। फिर दादा ढलान उतरते ही आंखों से ओझल हो गए। दिनेश के सामने अब बिछी थी सांप की तरह बल खाती हुई सूनी पगडण्डी। वह उस पगडण्डी पर संगठित इंसानों की लम्बी कतार की कल्पना करता रहा। विश्वास करता रहा कि इंसान के अन्दर के सूरज और चांद पर से धुएं के बनावटी बादल एक न एक दिन छंटकर रहेंगे और उसके अन्दर का अंधेरा कटकर रहेगा। लेकिन इसके लिए कोशिश करनी होगी। बहुत बड़ी कोशिश। साधारण इंसान को उसकी दशा के बारे में सचेत करना होगा।



बच्चों को पढ़ाने के लिए तैयार होते वक्त भी दिनेश साधारण इंसान को उसकी सही दिशा और दशा के बारे में सचेत करने की समस्या को लेकर ही उलझा रहा। सोचता रहा कि जब धरती के अधिकांश हिस्से नई रोशनी से पूरी तरह वंचित हैं तो इंसान का चन्द्रलोक तक पहुंच कर सभ्यता के एक नये युग में प्रवेश करने का दावा कहां तक उचित है? उसके दिमाग में सवाल उठता रहा कि क्या तराजू के एक पलड़े का आसमान छू जाना और दूसरे का पाताल में धंस जाना ही मानवीय सभ्यता के विकास या उत्कर्ष की निशानी है? उत्तर यही मिलता रहा कि नहीं, यह विकास नहीं, विकास का भौंडा नाटक है। इस नाटक का दर्शक बनकर मनोरंजन की लहर में खोए साधारण आदमी को सचेत होना ही चाहिए। उसे समझाया जाना चाहिए कि नाटक के नेपथ्य में बैठी काली ताकतें—उसका मजाक उड़ा रही हैं। उस पर खिल खिलाकर हंस रही हैं। लेकिन साधारण आदमी सचेत होगा कैसे? उसको समझाया जाना चाहिए। उसको स्याह और सफेद के अर्थ बताए जाने चाहिएं। इसके लिए मुहिम

चलाई जानी चाहिए। अथक प्रयत्न किए जाने चाहिएं।

विचार और संकल्प आमने-सामने हुए तो दिनेश को लगा जैसे उसने पहली बार एक सार्थक ज्ञान हासिल किया है। साहित्य के नाम पर सिर्फ कागज काले करने से क्या होगा? साहित्य तब तक बेकार है, जब तक वह स्वयं साहित्यकार में और फिर पाठकों के जीवन और आचरण में नहीं घुलता। पहले अनुभव या ज्ञान, उसके बाद विचार, विचार के बाद संकल्प, और यह सिलसिला तभी सार्थक और पूर्ण हो सकता है जब इस द्वारा आदमी अन्ततः प्रयत्नवान हो। व्यावहारिक सक्रियता के बिना किसी भी प्रकार के परिवर्तन की आशा करना नाखूनों से पहाड़ तोड़ने की आशा करने जैसा है। रेत के बने महल किस काम के?

लेकिन क्या इतना बड़ा काम मुझ अकेले के [illegible]
के लिए उसे लगा कि नहीं इतने बड़े काम का ब[illegible]
उठा सकता। समय के तेज बहाव को तोडकर, [illegible]
मोडना, कि[illegible] के बस का काम

जिन्दगी गुजारी थी, उनके चेहरे और कारनामे याद करते ही उसका मन वितृष्णा से भर उठा। उसे लगा, जैसे सब के सब कपड़े की दुकान पर, शोरूम में खड़े किए गए मिट्टी के बेजान पुतले हैं। कीमती पोशाकों में सजे गोबर के माधो। दुकान से घर और घर से दुकान, और ज्यादा से ज्यादा क्लब या खेल का मैदान, इस वित्त-भर की जिन्दगी पर गर्व करने वाले परजीवी जानवर। सूखी हड्डी की नोकों की चुभन से रिसते अपने ही घावों के खून के स्वाद को अलौकिक आनन्द मानकर जीने वाले पिल्ले।

पर उसके अपने, स्कूल से बाहर की जिन्दगी के साथी? ···हरजिन्दर, केशो, मोहन सबके सब ·? उसे लगा जैसे ये भी नाम नहीं है, नम्बर है, उन घोड़ों के जो रेसकोर्स के घोड़ों की तरह दूसरों के लिए भाग रहे है। अपना खून-पसीना एक करके कोई आगे का स्थान ले आते है तो चन्द प्यार के बोल नसीब हो जाते हैं, नही तो मन-मन भर की गालियां। तिजोरियों की एक खास किस्म की आंख-मिचौनी और मनोरंजन के खेल के साधन है सब के सब। शतरंज के बेजान मोहरो की तरह दूसरों के हाथों की कठपुतलियां।

उसके दिमाग में एक नया सवाल कौंधा कि पूरी की पूरी कौम इस वैचारिक निहत्थेपन और सांस्कृतिक दिवालिएपन की अंधेरी गुफा में क्यों पहुंच गई है? सादा जीवन उच्च विचार की पूजा करने वाले देश को यह क्या से क्या हो गया है कि भड़कीला जीवन नीच विचार के घिनौने आकर्षण की तरफ अंधा होकर मुड़ गया है? लगने लगा है जैसे तमाम के तमाम दिमाग किसी साजिश का शिकार हो गए है।···

लेकिन इस साजिश की जड़ें कहां हैं? यही अनास्था में तो नहीं? व्यवस्था की गलत नीतियों द्वारा पैदा हो गई इस मानसिकता मे कि चाहे कैसे भी पापड़ बेल लिए जाएं, कुछ भी होने वाला नहीं है?··· किसी भी प्रकार का, कोई भी परिवर्तन असम्भव है?···

इस अनास्था और निहत्थेपन के एहसास से आदमी को छुटकारा मिलना ही चाहिए। उसकी चेतना में फैलाया गया कुहरा छटना ही चाहिए। उसको खुद अपने 'आप' और दूसरों की असलियत से बाखबर होना ही चाहिए। बड़ी से बड़ी चुनौतियों का सामना करते हुए भी आदमी को बाखबर करने का बीड़ा उठाया ही जाना चाहिए। इस पुनीत काम की शुरुआत के लिए इससे अच्छा इलाका कोई दूसरा नहीं

चलाई जानी चाहिए। अथक प्रयत्न किए जाने चाहिएं।

विचार और संकल्प आमने-सामने हुए तो दिनेश को लगा जैसे उसने पहली बार एक सार्थक ज्ञान हासिल किया है। साहित्य के नाम पर सिर्फ कागज़ काले करने से क्या होगा? साहित्य तब तक बेकार है, जब तक वह स्वयं साहित्यकार में और फिर पाठकों के जीवन और आचरण में नहीं घुलता। पहले अनुभव या ज्ञान, उसके बाद विचार, विचार के बाद संकल्प, और यह सिलसिला तभी सार्थक और पूर्ण हो सकता है जब इस द्वारा आदमी अन्ततः प्रयत्नवान हो। व्यावहारिक सक्रियता के बिना किसी भी प्रकार के परिवर्तन की आशा करना नाखूनों से पहाड़ तोड़ने की आशा करने जैसा है। रेत के बने महल किस काम के?

लेकिन क्या इतना बड़ा काम मुझ अकेले के बस का है? एक क्षण के लिए उसे लगा कि नही इतने बड़े काम का बीड़ा कोई अकेला नहीं उठा सकता। समय के तेज बहाव को तोड़कर, उसे नई दिशा की ओर मोडना, किसी अकेले आदमी के बस का काम नही है। तो फिर और कौन हो सकता है जो इस काम में उसका साथ दे?

सबसे पहले उसके ध्यान की नजर श्यामा पर गई, फिर डा० दादा पर, और उसके बाद शैल तथा बगालन मां पर। इस वक्त उसे जेल काट रहा जगतू भी याद आया और इस याद में एक क्षण के लिए मीना का चेहरा भी कौंधा। लेकिन मीना के भोले और सुन्दर चेहरे पर उसे थोथे और रूढ़ आदर्शवाद की परत पुती नज़र आई। मन के किसी कोने में सोई अनास्था जागी नही, वह लकीर से हटकर कुछ नही करेगी, रास को पकडकर आगे-आगे चल रहे संस्कार को धकेल कर, किसी अछूती ज़मीन पर पैरों के निशान बनाने की इच्छा तक उसके मन में नही है। परम्परा की गिज़ा बन जाना ही उसके रक्त की फितरत है। फिर इतने अमीर घर की लडकी ऐसा क्यों करेगी? उसे क्या ज़रूरत पड़ी है उस जैसे कंगाल आदमी के लिए कुछ करने की? उसे लगा कि उसकी सांसों में कडवा धुआ भर आया है। वह छाती पर हाथ रखकर खासने लगा।...

तो फिर अतीत में से किसे चुना जा सकता है, जो इस महत्त्वपूर्ण काम में उसका हाथ बटाए? उसने दूर-दूर तक ख्याल दौड़ाया पर एक भी चेहरा उसे ऐसा नही लगा जो किसी भी तरह का बलिदान देने के लिए तैयार होने का मादा रखता हो। जिन लड़कों के साथ उसने स्कूली

ज़िन्दगी गुज़ारी थी, उनके चेहरे और कारनामे याद करते ही उसका मन वितृष्णा से भर उठा। उसे लगा, जैसे सब के सब कपड़े की दुकान पर, शोरूम में खड़े किए गए मिट्टी के बेजान पुतले हैं। कीमती पोशाकों में सजे गोबर के माधो। दुकान से घर और घर से दुकान, और ज़्यादा से ज़्यादा क्लब या खेल का मैदान, इस वित्ते-भर की ज़िन्दगी पर गर्व करने वाले परजीवी जानवर। सूखी हड्डी की नोकों की चुभन से रिसते अपने ही घावों के खून के स्वाद को अलौकिक आनन्द मानकर जीने वाले पिल्ले।

पर उसके अपने, स्कूल से बाहर की ज़िन्दगी के साथी?···हरजिन्दर, केशो, मोहन सबके सब ··? उसे लगा जैसे ये भी नाम नहीं है, नम्बर हैं, उन घोड़ों के जो रेसकोर्स के घोड़ों की तरह दूसरों के लिए भाग रहे है। अपना खून-पसीना एक करके कोई आगे का स्थान ले आते है तो चन्द प्यार के बोल नसीब हो जाते हैं, नहीं तो मन-मन भर की गालियां। तिजोरियों की एक खास किस्म की आंख-मिचौनी और मनोरंजन के खेल के साधन है सब के सब। शतरंज के बेजान मोहरों की तरह दूसरों के हाथों की कठपुतलियां।

उसके दिमाग में एक नया सवाल कौंधा कि पूरी की पूरी कौम इस वैचारिक निहत्थेपन और सांस्कृतिक दिवालिएपन की अंधेरी गुफा में क्यों पहुंच गई है? सादा जीवन उच्च विचार की पूजा करने वाले देश को यह क्या से क्या हो गया है कि भड़कीला जीवन नीच विचार के घिनौने आकर्षण की तरफ अंधा होकर मुड़ गया है? लगने लगा है जैसे तमाम के तमाम दिमाग किसी साजिश का शिकार हो गए हैं।···

लेकिन इस साजिश की जड़ें कहां है? यहीं अनास्था में तो नहीं? व्यवस्था की गलत नीतियों द्वारा पैदा हो गई इस मानसिकता में कि चाहे कैसे भी पापड़ बेल लिए जाएं, कुछ भी होने वाला नहीं है?··· किसी भी प्रकार का, कोई भी परिवर्तन असम्भव है?···

इस अनास्था और निहत्थेपन के एहसास से आदमी को छुटकारा मिलना ही चाहिए। उसकी चेतना में फैलाया गया कुहरा छंटना ही चाहिए। उसको खुद अपने 'आप' और दूसरों की असलियत से बाखबर होना ही चाहिए। बड़ी से बड़ी चुनौतियों का सामना करते हुए भी आदमी को बाखबर करने का बीड़ा उठाया ही जाना चाहिए। इस पुनीत काम की शुरुआत के लिए इससे अच्छा इलाका कोई दूसरा नहीं

हो सकता। कोरे कागज़ पर साफ-साफ लिखना आसान होता है। सफेद कपड़े पर कोई भी रंग चढ़ाया जा सकता है। मुझे इसके लिए तैयार होना चाहिए और अगर कोई दूसरा साथ नहीं देता, तब भी। जितना हो सके अकेले ही प्रयत्न करना चाहिए।

आत्म-चिन्तन से मिली ताक्त के जोश मे दिनेश खड़ा हो गया और अंगोछे के साथ तौलिया उठाकर बरसाती नाले के किनारे वाले जलप्रपात की तरफ उतर गया।

चलते-चलते भी उसके दिमाग मे विचारों का तूफान चलता रहा। योजनाएं आकार लेती रही। स्याह और सफेद पक्ष आपस में टकराते रहे। लेकिन हर टकराहट का नतीजा यही निकलता रहा कि जन-शक्ति से बड़ी कोई दूसरी शक्ति नही है। पर इस शक्ति को जगाना होता है। जगाकर सही दिशा की तरफ मोडना होता है। गंगा और जमुना की उद्दाम जलधार की तरह। इस काम मे खतरे भी मोल लेने पड़ सकते हैं। खतरे मोल लेने चाहिएं। खतरे मोल लेकर ही इंसान सार्थक काम कर सकता है।

जोश ही जोश मे वह कपड़े उतार कर, पहाड़ की कोख से निकलती निर्मल जलधार के नीचे जा बैठा। उसे हैरानी हुई कि कड़ाके की ठण्ड में भी पानी की ठण्डी धार उसे आनन्द दे रही है। उसने जलधार में शरीर मल-मल कर धोया और विचारों के ही जोश मे वापिस भी लौट आया।

कोठरी मे पहुंचकर उसने इन नये विचारो को नोट बुक पर नोट किया। कपड़े पहनकर तैयार हुआ। कुर्सी उठाकर बडे कमरे मे रखी और उसपर एक आदर्श अध्यापक की तरह बैठकर बच्चों की प्रतीक्षा करने लगा।



जब प्रतीक्षा करते-करते पूरा एक घण्टा बीत गया तो दिनेश का माथा ठनका। तो क्या एक ही दिन मे जोश ठंडा पड़ गया इन देवताओ के सुपुत्रों का ?

सूरज माथे तक पहुंचने तक भी जब कोई नही आया तो उसके मन

में निराशा और पस्तदिली ने डेरा डालने की तैयारी शुरू कर दी। जिस इलाके के लोग इतने डरपोक और नपुंसक है, उस इलाके में चेतना जागृत करने का बीड़ा उठाना रेत में मछलियों की खेती करने जैसा नही होगा क्या ? खूंखार जानवरों और आदमी के वेश में दरिन्दों के बीच रहकर, भेड़-बकरियों की तरह जिन्दगी जीने वाले लोगों को एक शक्तिशाली जन-सेना के रूप में तैयार करने का विचार थोथा और निराधार विचार नहीं है क्या ?

सवालों की क्रूरता से परेशान होकर दिनेश खड़ा हो गया और कमरे में ही टहलने लगा। टहलते-टहलते ज्यादा परेशानी महसूस की तो बाहर निकल आया। आज फिर उसकी नजर उन चित्रों पर जा टिकी जो पत्थरों पर कोयले से उकेरे गए थे। तो क्या राक्षसों के ये डरावने चेहरे ही आदमी की मानसिकता का सत्य है ? नरक के डर की ताकत से ही आदमी की जिन्दगी का पहिया चलता है ? महाशक्ति या महाकाली की यह तसवीर धोखा है, छल है ?

उसे इन सवालों मे से किसी का भी स्पष्ट जवाब नही मिला। उसे लगा कि स्पष्ट जवाब वह अपने आपसे पा भी नही सकता। पल-भर में ही उसके मन में अपनी अन्तश्चेतना की क्षमता पर सन्देह उग गया। तो फिर इन सवालों का स्पष्ट जवाब किससे मिलेगा ?

इस अन्तिम सवाल के जवाब में उसके सामने बंगालन मां के घर के मन्दिर मे सजी महाकाली की प्रतिमा साकार हो उठी। लगा, जैसे अगर-बत्तियों की सुगन्ध अब भी उसके आसपास मंडरा रही है। हां, उस घर से इन सवालों का जवाब जरूर मिल सकता है। मुझे इनका जवाब पाने के लिए वहीं जाना चाहिए।

निश्चय होते ही वह बड़े कमरे का ताला बन्द करके कोठरी में आया और कटार वाली छड़ी उठाकर पहरुआ गाव की तरफ चल दिया।



दिनेश गुलेल के हत्थे वाले चौराहे को पार करके आगे बढ़ा ही था कि सामने श्यामा के साथ शैल को आता देख उसका मन पुलकित हो उठा।

इस तरह श्यामा उसे रास्ते में ही मिल जाएगी, इसकी तो उसने कल्पना तक नही की थी। श्यामा और शैल भी उसे देखते ही खिल उठे।

पास आते ही श्यामा ने अपनत्व का परिचय दिया, "अच्छा हुआ आप मिल गए, नहीं तो हम सोच रहे थे कि आधी छुट्टी में आप डा० दादा के यहां चले गए होंगे और हमारा खाना उठाकर लाना बेकार ही जाएगा।"

शैल ने भी थोड़ा मुस्कराकर हाथ की पोटली थोडी आगे करके दिखा दी।

दिनेश को शैल की इस भोली हरकत पर हंसी आ गई। दिल मे आया कि बच्चों को खाने-पीने का कितना शौक होता है और श्यामा भी इस मामले मे शायद बच्चों से पीछे नही है। पर वह कुछ बोला नहीं।

दिनेश की ठण्डी प्रतिक्रिया ने श्यामा को भी प्रभावित किया, अपने नये प्रस्ताव में उसने उसकी झलक भी दे दी, "चलिए अब घर पर ही चलते हैं, वही खाना खा लीजिएगा। स्कूल की निसबत घर, यहा से ज्यादा नजदीक है। क्यों ठीक है न ?"

दिनेश, सूरज की तरफ उठा, श्यामा का दमकता हुआ श्यामल चेहरा देखने लगा। तेज चमक से श्यामा की आखें अधमुंदी-सी हो आई थी और कपोलो पर गाढ़े सुर्ख गुलाब पसीज गए थे। उसने स्कूल की तरफ मुड़ते हुए सवाल किया, "श्यामा, क्या तुम खाने और खाने का सामान जुटाने के अलावा भी कुछ सोचती हो ?"

अब श्यामा संभली। उसका स्नेह के कारण सहज हो आने का यह अर्थ लिया जा सकता है, इसकी ओर तो उसका ध्यान ही नही गया था। वह आगे बढ़कर दिनेश की बगल मे आ गई और बोली, "क्यों आपको खाने और खाने का सामान जुटाने के बारे मे चिन्ता नही होती ?"

"इन हालातो में नही।"

"किन हालातो मे ?

"जिनमे एक-एक पल मौत के खूनी पजो और जबड़ो मे से होकर गुजरता हो।"

"समझी, आप मौत को इतनी महत्त्वपूर्ण चीज मानते है कि उसके बारे मे हर समय चिंतित रहते है, लेकिन मैं तो उसे एक साधारण चीज समझती हूं, इतनी साधारण कि वह साधारण से साधारण आदमी को

भी आसानी से हासिल हो जाती है।"

दिनेश के पांव रुक गए। वह रुककर श्यामा के चेहरे पर देखने लगा। अब श्यामा की आंखें चुंधियाई हुई नहीं थीं। कपोलों के गुलावों पर भी नमी नहीं थी। लम्बी-सुडौल गर्दन में, किसी जानवर का तीखा नाखून, काले डोरे में बंधा लटक रहा था। कानों में अब सफेद कलियां नहीं थीं।

दिनेश को इस तरह देखता देख श्यामा की उंगलियां बरबस जानवर के नाखून पर चली गईं। "रीछ का नाखून है, डा० दादा ने ही कण्ठा बनवाकर दिया था। खाल उनके दवाईखाने में टंगी है। हम तो मौत को इस तरह गले में बांधकर घूमते हैं।" श्यामा ने नाखून तनिक ऊपर उठाकर ऐसे छोड़ा कि वह हंसिए की हड्डियों के बीच के स्थान पर ऐसे चिपक गया जैसे वहां गोंद से चिपका दिया गया हो।

"तुम ठीक कह रही हो श्यामा। मैं ही अभी इन परिस्थितियों का अभ्यस्त नहीं हुआ हूं। मैंने" मैंने सचमुच में मौत को कभी इस तरह की साधारण चीज नहीं समझा, जिस तरह की तुम समझ रही हो। मेरा इस तरफ ख्याल ही नहीं गया। सचमुच मौत तो नितान्त साधारण चीज है। हवा और मिट्टी की तरह हर जगह बिना किसी प्रयत्न के उपलब्ध। जबरदस्ती झोली में आ पड़ने वाली। मौत को महत्त्व देना बेमानी है, बिलकुल बेमानी।"

श्यामा के होंठों पर मुस्कान फैल गई। उसे समझ नहीं आया कि इतनी छोटी-सी बात को इतना बड़ा बनाकर क्यों लिया जा रहा है? फिर भी उसने दिनेश के इस विचार का सम्मान किया, "आप बात को बहुत गहराई में ले गए, मैंने तो साधारण-सी भाषा में एक साधारण-सी बात कही है।"

"यह साधारण बात नहीं है। एक साधारण आदमी अपने विचारों में इतनी ऊंचाई का जीवन जी सकता है, यह तो मेरी कल्पना में भी नहीं था।"

"केवल मैं ही क्यों, मां भी तो ऐसा ही समझती है। आप उनसे बात तो करके देखें।"

"लेकिन मुझे लगता है कि मौत के बहाने आदमी जिन्दगी को महत्त्व देता है, उस जिन्दगी को, जो उसके सामने जिन्दगी बनाकर परोसी गई

है। उसे तो ज्ञान ही नहीं होता कि परोसी गई जिन्दगी, जिन्दगी नही होती बल्कि मौत से भी बदतर चीज़ होती है। फिर मौत से भी बदतर चीज़ को जीने वाला आदमी मौत से क्यों डरता है ? क्यों डरता है मौत से वह ?"

अब दिनेश का सवाल सचमुच मे श्यामा की समझ मे नही आया। वह भौचक्की-सी शैल का मुह ताकने लगी। शैल ने भी मुंह बिगाड़ा और कन्धे उचकाकर नासमझी जाहिर कर दी।

श्यामा की तरफ से कोई जवाब न पाकर दिनेश फिर रुक गया और दोनों का रास्ता रोककर बोला, "तुम लोग इस सवाल का जवाब दो कि यही बात, यही महत्त्वपूर्ण बात, तुम लोगों ने इस इलाके के दूसरे लोगों को क्यों नही बताई ?"

"किन लोगों को ?"

"इन खरगोशो, कछुओं और केंचुओ की तरह निष्क्रिय जिन्दगी जीने वाले आदिवासियों को।"

"इन लोगो को !" श्यामा मुक्त हंसी हंस पडी और दिनेश के कन्धे के साथ कन्धा भिडाकर आगे निकल आई, "जानवरों को सिर्फ दो ही भाषाएं समझ मे आती है, एक चारे की भाषा और दूसरी डण्डे की। चारा मेरे पास नही है और अपने डण्डे की कीमत मैं इनकी गलीज़ जिन्दगी से कहीं ज्यादा ऊंची समझती हूं।"

"आपको इन निरीह और भटके हुए लोगो को जानवर नही कहना चाहिए श्यामा जी।"

"क्या मतलब !...एक पल मे मै तुम से आप और श्यामा जी कैसे हो गई ?" अब उलटे श्यामा दिनेश का रास्ता घेरकर खड़ी हो गई।

"अच्छा तो बताओ खाने मे क्या-क्या बनाकर लाई हो ?" दिनेश ने टालने की गरज़ से शैल के हाथ की पोटली अपने हाथों मे ले ली।

"अच्छा तो भूख सता रही है जनाब को ? लेकिन पानी तो उस नाले वाले झरने के कब्ज़े मे है। नही तो यही बिठाकर खिला देते ब्राह्मण की तरह।"

"तो फिर झरने के पास ही चलते है। यही से उतर जाते हैं नीचे।" दिनेश रास्ता न होते हुए भी पोटली हाथ में लिए ढलान उतरने लगा। श्यामा और शैल उसे सधे हुए पहाड़ी की तरह बेधड़क पत्थरों को पार

करते देखते रहे। जब दिनेश का इरादा पुख्ता दिखाई दिया तो वे दोनों भी उस गलत रास्ते से उसके पीछे-पीछे हो लिए।



कुछ देर बाद ही दिनेश, शैल और श्यामा प्रपात के पास की दूब भरी धरती पर बैठे थे। तीनों के बीच शैल द्वारा लाया गया खाना सजा था। वही मकई की चौड़ी-चौड़ी रोटियां, आलू और गोभी की भाजी, पुदीने की चटनी और मक्खन का बनाया हुआ हलुआ।

श्यामा ने हलुए की चिकनाहट को हथेलियों में गरमाते हुए कहा, "लीजिए, खाइए।"

"मैं अकेला ?" दिनेश ने शैल को घूरा।

शैल जवाब देने की बजाय बहन की तरफ देखने लगा। उसकी समझ में नहीं आया कि क्या जवाब दे।

"इतना सारा खाना मैं अकेले कैसे खा सकता हूं ?" अब दिनेश ने श्यामा से ही पूछा।

"नहीं खा सकते ?" श्यामा तनिक मुस्कराई।

"बिलकुल नहीं।" संयत-सी हंसी के साथ दिनेश का हाथ पेट पर चला गया।

"अच्छा तो हम लोग आपका साथ देते हैं।" बोलकर श्यामा ने एक रोटी उठाकर दिनेश की ओर बढ़ा दी और दूसरी शैल की तरफ। खुद आधी रोटी लेकर, नन्ही गौरैया की तरह, उसके नन्हे-नन्हे किनके करके चखने लगी।

दिनेश भी हाथ पर रोटी रखकर चुपचाप खाने लगा। क्षण-भर के लिए उसको डा० दादा के कहे शब्द याद हो आए, "लोगों को पता चलेगा तो वे तुमसे अपने बच्चे तक पढ़ाना पसन्द नहीं करेंगे।" उसने गोभी में से एक बड़ा-सा आलू का टुकड़ा उठाकर श्यामा की हथेली पर पड़े रोटी के टुकड़े पर रख दिया और साथ ही निर्णय ले लिया कि लोगों की नासमझी जो भी ज्यादती बरतेगी, वह उसे खुशी से सहन करेगा।

अभी निर्णय पका भी नहीं था कि सामने लाठी टेककर किसी बूढ़े

आदमी को आते देख दिनेश के हाथ रुक गए। श्यामा भी जैसे अनमनी-सी हो गई, "सरपंच जी है।"

दिनेश को लगा जैसे वह किसी धार्मिक जगह पर पेशाब करता पकड़ लिया गया है। "कौन सरपंच जी?"

"इस इलाके के गावों की पंचायत के सरपंच। बेचारा बहुत भला आदमी है लेकिन रायसाहब का पूरा हनुमान। रायसाहब की बुराई नही सुन सकता और न ही सरकार की।"

"ओ! ऽऽऽऽ"

सरपंच दूर से ही कसमसा उठा, "तो आप यहां विराजमान है?" और पास आते ही बनावटी हंसी होंठों पर पोतकर पहले श्यामा के हाथों की तरफ घूरता रहा और फिर परोसे हुए खाने की तरफ।

"जी, श्यामा जी मेरे लिए खाना लेकर आई थी, सोचा क्यो न अमृत को प्रकृति की गोद मे ही बैठकर पान किया जाए।"

"क्यों नही, क्यों नही, तो यह खाना श्यामा जी लेकर आई है?"

श्यामा स्वीकृति सूचक सिर हिलाकर सरपंच को टिटर-टिटर देखने लगी। शैल ने भी जैसे अजीब-सा अनुभव करते हुए हाथ खीच लिया। लेकिन मुंह का ग्रास वह चबाता रहा—धीरे-धीरे।

"लीजिए आप भी थोडा-सा लीजिए···जी आपका नाम?"··· दिनेश ने रोटी से भरे हाथ जोड़कर पूछा।

"अं···रामदास। मैं आप सब लोगों का दास हूं। मैं जरूर लेता, लेकिन अभी भोजन करके ही निकला हू।"

"तो लीजिए, थोडा हलुआ ले लीजिए।" दिनेश ने आग्रह किया।

"जी नही, मैं हलुआ नही खाता। पेट खराब होने की वजह से डा० दादा ने मना किया हुआ है। उनका बनाया हुआ परहेज न करता तो पता नहीं अब तक···ही ही ही ही···आप तो उन्हें अच्छी तरह से जानते हैं।"

"जी, इन थोड़े-से दिनों मे उन्होंने अपना काफी परिचय दे दिया है।"

"तुम लोग रुक क्यों गए?···भोजन कीजिए। मैं तो डा० दादा को ही स्कूल मे देखने चला आया था। अं ··घर पर नहीं मिले तो जगतू की औरत ने बताया कि मास्टर जी के पास···"

"हा, आए तो थे लेकिन सवेरे। बस थोड़ी देर बाद ही लौट गए थे।

अब शायद शाम को आएं। क्यों क्या कोई खास बात है ?"

"खास तो नहीं···सरकार की एक चिट्ठी आई है, उनको दिखानी थी।"

"कैसी चिट्ठी ?"

"पता नही कैसी। मैं तो पढ़ा-लिखा हूं नही।" सरपंच रामदास ने चिट्ठी जेब से निकालकर उलट-पलटकर देखी।

"अगर आपको कोई एतराज़ न हो तो मैं पढ़कर सुना दू ?"

"पढ़ दीजिए। सरकारी चिट्ठी मे एतराज़ कैसा ?" सरपच ने झुककर चिट्ठी दिनेश के हाथ पर रख दी।

दिनेश ने लिफाफे से सरकारी कागज़ बाहर निकाला और पढकर अग्रेज़ी का अनुवाद करके सरपंच को समझाया—"सरकार कोई राबर्ट नाम का शिकारी भेजने का बन्दोबस्त कर रही है, आदमखोर को मारने के लिए। इस इलाके का सरपंच होने के नाते आपसे उस शिकारी के रहन-सहन और खान-पान का बन्दोबस्त करने की प्रार्थना की गई है।"

"अच्छा अच्छा, तो रायसाहब की कोशिश कामयाब हो गई। पिछली बार जब वे राजधानी गए थे तब मुख्यमत्री महोदय ने उन्हें आश्वासन दिया था कि सरकार जल्द ही इस समस्या की तरफ ध्यान देगी। सो सरकार ने ध्यान दिया है। हमें क्या एतराज़ हो सकता है ? हमारे लिए तो वह सरकार का भेजा हुआ देवदूत होगा। क्यों, नही ?"

"जी, जी, बिलकुल-बिलकुल।" दिनेश ने बिना सोचे-समझे कोई प्रतिक्रिया देना मुनासिब नही समझा।

दिनेश का रवैया भांप सरपंच मुड़ा, "अच्छा तो मैं चलता हूं। ज़रा रायसाहब की तरफ सूचना पहुंचा दू। नमस्ते !"

"नमस्ते !" दिनेश, शैल और श्यामा ने एक साथ हाथ जोड़ दिए।

पर सरपंच रुक गया, "मैं आपको भी एक बात कहना चाहता हूं, वह यह कि इन मुसीबत के दिनो मे अगर आप स्कूल बन्द ही रखें तो अच्छा हो। इन खतरनाक दिनो मे छोटे-छोटे बच्चे घरों मे ही रहने चाहिएं। देखिए, मैं भी तो आदमियों को साथ लेकर निकला हूं।" बोलकर वह बिना जवाब की प्रतीक्षा किए फिर मुड़ा और ऊपर स्कूल के पास इतज़ार कर रहे साथियों की तरफ बढ़ गया।

काफी देर तक दिनेश, शील और श्यामा, पहले अकेले सरपंच को, फिर उसके पीछे-पीछे चल रहे उसके साथियों को, पगडण्डी की चढ़ाई चढ़ते देखते रहे। पूरी चढ़ाई चढ़कर जब वे आंखों से ओझल हो गए तब श्यामा ने ही मौन भंग किया, "सरकार का भेजा हुआ विदेशी शिकारी तो जानवरों को न मारने का कानून भंग करने का अधिकारी है लेकिन जिन लोगों की जान पर बनी है वे लोग जानवरों को हाथ भी नहीं लगा सकते।"

"विदेशी शिकारी को सरकार शायद स्पेशल परमीशन देकर भेजेगी।" दिनेश ने श्यामा को समझाना चाहा।

"स्पेशल परमीशन सिर्फ सरकारी शिकारी को ही क्यों, हमें क्यों नहीं?" श्यामा ने तर्क किया।

"तुम्हें मिल जाए तो तुम क्या करोगी?"

"मैं चाहे कुछ भी न करूं, लेकिन आप तो कर सकते हैं। और यहां के दूसरे लोग भी बन्दूक चलाना जानते हैं। ओझा के पास तो दो-दो बन्दूकधारी हैं और वह भी पक्के निशानेबाज, फौज के रिटायर सिपाही!"

"हां, इसके लिए सरकार में लिखा-पढ़ी की जानी चाहिए।"

"लिखा-पढ़ी से क्या होगा? सब लिखा-पढ़ी रायसाहब की ही मानी जाती है। साधारण आदमी के लिखे का तो सरकार जवाब तक नहीं देती।"

"तुमने लिखकर देखा है कभी?"

"कई बार।"

"इस इलाके के बहुत-से लोगों के दस्तखत नहीं करवाए होंगे।"

"न, वो तो नहीं करवाए।"

"और दर्खास्त अंग्रेज़ी में न लिखकर हिन्दी में लिखी होगी?"

"हां, अंग्रेज़ी इधर किसी को आती ही नहीं।"

"तभी तो।"

"लेकिन दस्तखत कौन करेगा? किसी को दस्तखत करने आए तब ना।"

"अंगूठे तो लगा सकते हैं।"

"हां अंगूठे जरूर लगा सकते हैं, अपने खुरों के। इस बार अगूठे

आप लगवा दीजिएगा और अर्ज़ी मैं तैयार कर दूंगी।"

"लेकिन अर्ज़ी अंग्रेज़ी में होनी चाहिए।"

"तब तो वो भी आप ही कीजिएगा।"

"लेकिन अंगूठे लगवाने के लिए इलाके के सब लोगों को पूछना पड़ेगा।"

"पूछ लेंगे।"

"कैसे?"

"सबसे मिल-मिलकर और कैसे?"

"नहीं, ऐसे नहीं।" दिनेश के होंठों पर बरबस हंसी खेल गई।

"और कैसे?" श्यामा के होंठों पर भी शरारत-भरी हंसी बिखर गई।

"सरपंच साहब को कहकर सब लोगों को एक जगह इकट्ठा करवाएंगे, और फिर सबके सामने खोलकर प्रस्ताव रखा जाएगा, ऐसे।"

"अच्छा ऽऽऽऽ, सबको समझा बुझाकर अर्ज़ी लिखने की बात सोच रहे हैं आप।"

"जी।"

"दिनेश भइया, क्या मेरे जैसे लड़के भी उस वक्त वहां हो सकेंगे?" शैल ने अपने मतलब की बात पूछी।

"क्यों नहीं, तुम लोगों के बिना भविष्य कैसे चमकेगा इस अंधेरे इलाके का?" दिनेश ने उसे खींचकर बाजुओं में भर लिया और धीरे से उसका माथा चूम लिया।

इसी समय सबने औरतों के हंसने की आवाज़ें सुनीं। देखा तो सामने सिरों पर घड़े उठाए औरतें और किशोरियां कतार बांधे उधर ही आती दिखाई दीं।

दिनेश को लगा जैसे आसमान से भरी-पूरी घटाएं उतर आई हैं। अंग-अंग पर आम्रबौर के गुच्छों की तरह का महकता भरपूर गौवन और यौवन पर लिपटे हुए चिथड़े। गुदड़ियों में लिपटा ऐसा ताजगी भरा अछूता सौन्दर्य···उसने तो इसकी कल्पना तक नहीं की थी। श्यामा का सौन्दर्य अब उसके लिए अपवाद नहीं रहा था। अपवाद रह गया था श्यामा का व्यक्तित्व। श्यामा की आंखों के अन्दर की तेजस्विता। यह तेजस्विता उसे

दिनेश ने दादा का कथन "सत्य वचन है" की तरह बिना किसी तर्क के शिरोधार्य कर लिया। दरअसल दिनेश के पास अब कुछ और पूछ कर उसका उत्तर पाने की फुर्सत ही नहीं बची थी। बल्लियों को बीच से चीरकर बनाया गया फाटक बिलकुल सामने था, जिसकी विरलों में से अन्दर का दृश्य साफ नज़र आ रहा था और वह उस दृश्य में बुरी तरह उलझ गया था।

वे तीनों फाटक के सामने कुछ क्षण ही खड़े हुए थे कि ओझा का अंग-रक्षक खलवा बन्दूक हाथ में लिए मकान के अन्दर से बाहर आया और फाटक की तरफ बढ़ने लगा। शायद उन तीनों को उतराई उतरते देख वह बन्दूक लेने अन्दर चला गया था।

खलवा को प्रणाम करके डा० दादा ने पूछा, "श्री बागपत जी है?"

खलवा ने पहचान की-सी मुस्कान चेहरे पर लाकर स्वीकारात्मक सिर हिला दिया।

"कहां हैं?" डा० दादा ने इधर-उधर झांककर दूसरा सवाल किया।

"पूजा में बैठे है।" बोलकर खलवा ने फाटक खोल दिया और आश्वस्त होकर अन्दर चला गया।

थोड़ी देर बाद, मुरझाए सफेद फूल-सा चेहरा लिए एक बुढ़िया बाहर निकली। बुढ़िया को देखते ही डा० दादा और बाकर ने कमर से झुककर प्रणाम किया। दिनेश ने भी हाथ जोड़ दिए। बुढ़िया ने डा० दादा को पहचानकर आशीर्वाद का हाथ उठाया और बांस के मूढ़ों पर बैठने का इशारा करके वापिस लौट गई।

दिनेश जब मूढ़े पर बैठा तो उसकी नज़र मकान की बगल के एक और दृश्य पर जा पड़ी। काले पत्थरों की शिलाओं से बनी छत के नीचे लाल पत्थरों का एक मन्दिर-सा बना था। मन्दिर की दिखाई दे रही बगल की दीवार पर बहुत ही डरावने रंग-बिरंगे चित्रों के चेहरे चमक रहे थे। अपने अंगों को कई किसम के गूढ़ रंगों से सजाए उन चेहरों के सामने ओझा समाधिस्थ बैठा था। मन्दिर से थोड़ा हटकर, बन्दूक को दोनों हाथों में मजबूती से पकड़े बड़ी ही चौकस और समर्पित मुद्रा में दूसरा अंगरक्षक चेतू पहरा दे रहा था।

"पूजा की हालत में ओझा की जान को बड़ा खतरा होता है।" डा०

दादा फुसफुसाती आवाज में दिनेश को समझाने लगे, "सुना है, अगर कोई आदमी पूजा करते किसी ओझा की हत्या कर दे तो ओझा की सारी शक्ति और तमाम सिद्धियां हत्या करने वाले के हाथ में आ जाती है। इसीलिए पूजा के वक्त ओझा की रक्षा के कड़े प्रबन्ध किए जाते है! देखा नहीं था, ओझा की पत्नी ओझन हमें पहचानने के लिए बाहर आई थी? हमारे साथ तुम हो ना, परदेसियों पर ये लोग बिलकुल भी विश्वास नहीं करते। इसीलिए थोड़ी घबराहट हुई होगी। समझ गए ना?"

दिनेश का ध्यान तब भंग हो गया, जब दो आदमी टंगी हुई भेड़ को खोलकर पेड पर से उतारने लगे। उतारकर वे भेड़ को आंगन के कोने में छोटी-सी झोंपड़ी में ले गए। फिर एक आदमी लौट आया और जिस कड़ाही में खून इकट्ठा किया गया था, उसे उठाकर मकान के बगल वाले कमरे में ले गया।

बाकर को पता नहीं क्या हुआ कि वह मुंह में आई लार को गुटककर पुलकित हो उठा, "अब देउता का परसाद लोखद बनेगा।"

सचमुच में थोड़ी देर बाद ही कमरे के अन्दर से मादक गन्ध उठने लगी और बाकर उस गन्ध को नाक के ज़रिए ज्यादा से ज्यादा पेट में खींचने की कोशिश करने लगा। लेकिन इस बात का ध्यान रखकर कि सांस खींचने से कोई अभद्र आवाज़ न निकले।

इसी बीच ओझा समाधि तोड़कर आम हाल में आ गया। उसने सामने जल रही धूनी से धुआं छोड़ती लकड़ी उठाई, उसके सुलगते हुए सिरे से धरती पर एक षटकोण-सा बनाया और तपता हुआ चेहरा लिए उन तीनों की तरफ मुड़ा।

ओझा को अपनी ओर आते देख डा० दादा जी और बाकर खड़े हो गए। ओझा के निकट आते ही उन्होंने ओझा से विधिवत आशीर्वाद लिया। दिनेश ने भी कर्त्तव्य पूरा किया। ओझा आशीर्वाद देकर बैठने का इशारा करके अन्दर चला गया।

थोड़ी देर बाद एक सेवक ओझा के लिए बांस की बनी आराम कुर्सी रख गया। जब ओझा वापस आया तो उसके चेहरे के रंग धुल चुके थे और उसने लाल चोगा पहन रखा था। सिर के बाल सुखाए जाने के लिए इधर-उधर बिखर गए थे।

ओझा ने बैठते ही, अपनी शायद नशे के कारण लाल हुई आंखें पूरी

खोलकर दादा की ओर देखा। दादा उस देखने का अभिप्राय समझ गए और सिर झुका कर आने का कारण बताने लगे, "मास्टर जी आपके दर्शन करना चाहते थे, इसीलिए आपको बेवक्त जहमत दी है।"

दिनेश का खयाल था कि डा० दादा ही पूरी बात समझा देंगे लेकिन जब उनकी टिप्पणी सुनकर ओझा की आंखें दिनेश की तरफ मुड़ी तो दिनेश को ही बात साफ करनी पड़ी।

"हम लोग इस इलाके की समस्याओं के बारे में विचार-विमर्श करने के लिए एक जगह इकट्ठे हो रहे है, आपसे निवेदन करने आए हैं कि आप भी हमारी इस मीटिंग में दर्शन दें !"

सुनते ही ओझा की आंखें और भी चौड़ी हो गई। इस इलाके में रायसाहब और उसकी अपनी इजाजत के बिना इस तरह का साहस करने की जुर्रत उसके लिए बिलकुल नई थी। वह छूटते ही गुर्राया, "कैसी समस्याएं?"

"यही, जंगल के आसपास के इलाके के लोगों के जीवन की समस्याएं।" दिनेश पर उसकी गुर्राहट का कोई असर नहीं हुआ।

"हम लोग से मतलब ?" ओझा ने दूसरा सवाल किया।

"सरपंच रामदास जी की पंचायत और इस सरक्षित जंगल के आस-पास बसने वाले गांवों के प्रायः सभी लोग।"

सुनकर ओझा के माथे की त्यौरियों की सख्या बढ़ गई और वह सिर के बालों को रस्सी की तरह बटा देकर जूड़े के रूप में समेटता हुआ कुछ सोचने में निमग्न हो गया। फिर सहसा मुंह में जो कुछ चबा रहा था, उस का थूक दायीं तरफ थूककर बोला, "रायसाहब से मिले ?"

"जी नहीं, उनसे तो अभी नहीं मिल सके!" दिनेश ने नम्रता से जवाब दिया।

"क्यों नहीं मिले ?...इतना बड़ा कदम उनको मिले बिना ही..." ओझा मन्दिर की दीवार पर बने चेहरों की तरफ घूरता हुआ कांपने लगा।

दिनेश के मन में आया कि कहे कि जिस दरिन्दे के शोषण के खिलाफ राय तैयार करनी है, उससे मिलने और उसकी राय पूछने का मतलब ? लेकिन डा० दादा ने उसके चेहरे का भाव समझकर इशारा करके उसे चुप करा दिया। दादा ने बीच में पड़कर बिगड़ती बात संभाली, "अजी

आपकी इजाजत के विना उनसे कैसे मिल सकते थे ?"

डा० दादा की बात सुनकर ओझा थोड़ा शान्त हुआ और बाँधे गए बालों को खोलकर उंगलियों से सुलझाने की कोशिश करने लगा। जैसे-जैसे बाल सुलझते जा रहे थे, ओझा का चेहरा और भी भयावना होता जा रहा था और वह जुगाली करने की तरह मुह में रखी कोई सुगन्धित चीज चबाता जा रहा था।

इसी समय रसोई के अन्दर से पहले वाले आदमियों में से एक निकला और बांस की बनी एक तिपाई चारो के बीच रखकर लौट गया। थोड़ी देर बाद दूसरा आदमी आया और पत्तों के दोनों में पनीर की तरह जमा हुआ, कत्थई रंग का लुखारू सबके सामने परोस गया। लुखारू को देखते ही वाकर के मुह में फिर पानी भर आया। दिनेश को लगा जैसे लुखारू में से झुलसे हुए खून की बू आ रही है। वह समझ गया कि अभी-अभी जो भेड़ का खून इकट्ठा किया गया था, यह उसी का बना हुआ पकवान है।

ओझा ने पकवान परोसे जाने पर आसमान की तरफ मुंह करके, दोनों हाथ जोडकर प्रणाम किया और हाथ से सबको चालू हो जाने का इशारा करके खुद लुखारू पर भूखे भेडिए की तरह टूट पड़ा। उसने तीन-चार ग्रास में ही दौना खाली कर दिया। वाकर ने भी ओझा की तरह ही उसे निगल लिया। पर डा० दादा उसे धीरे-धीरे खाते रहे। दिनेश ने उसे बिलकुल नहीं छुआ।

ओझा ने भौंहें टेढ़ी करके दिनेश की तरफ देखा, जैसे पूछ रहा हो—देउता के इस प्रसाद का अनादर क्यों ? दादा ने—"मास्टर जी शुद्ध शाकाहारी है," कहकर ओझा की भौहें सीधी करवा दी।

ओझा का इशारा पाकर पास खड़ा परोसने वाला आदमी अन्दर गया और पतले कागज जैसी दो चौड़ी-चौड़ी रोटियां और लाल रंग का हलुआ लाकर दिनेश के सामने रखकर फिर पहले की ही तरह बाजू छाती पर समेटकर खड़ा हो गया।

डा० दादा ने, दिनेश को समझाया, "चावल के आटे से बने परांठे हैं और मकई के आटे से बना मीठा हलुआ। तुम इसे शुद्ध आहार समझकर बेझिझक खा सकते हो।"

दिनेश ने पराठें का टुकड़ा सब्जी की तरह हलुए के साथ मिलाकर

मुंह में रखा तो वह उसे बुरा नहीं लगा। उसने बाकी के पराठे भी खुशी से खा लिए।

आदमी ने लुखारू एक बार फिर ओझा, डा० दादा और बाकर को परोसा। तीसरी बार डा० दादा ने हाथ जोड़कर मना कर दिया। चौथी बार वह सिर्फ ओझा को ही परोसा गया। ओझा ने उसे पांचवी बार भी लिया। इसके बाद सबको बिना दूध की अदरक वाली चाय परोसी गई। चाय के साथ एक-एक गुड़ का टुकड़ा भी।

चाय खत्म होते ही ओझा ने हुक्म सुनाया, "पहले रायसाहब से मिलो और जो वे हुक्म दें मुझे बताओ, उसके बाद सोचेंगे कि समस्याएं क्या हैं और क्यों हैं।" हुक्म सुनाते ही वह खड़ा हो गया और बिना किसी उत्तर की प्रतीक्षा किए अन्दर चला गया।

"आओ अब चलें।" बोलकर डा० दादा फाटक से बाहर आ गए। दिनेश और बाकर भी उनके पीछे-पीछे चलने लगे। चेतू की नजरें उनका काफी दूर तक पीछा करती रहीं। पेड़ों का झुरमुट पार करते ही डवरू गांव आंखों से ओझल हो गया। लेकिन उसका सम्मोहन सब पर कायम रहा। ऐसा सम्मोहन जो दादा के शब्दों में सिर्फ जादू-टोने का ही हो सकता है, किसी दूसरी चीज का नहीं।

गहरी खाई की उतराई उतरते वक्त दिनेश को लगा जैसे पहाड़ की चोटियां और पेड़-पौधे उसके इर्द-गिर्द घूम रहे हैं। डा० दादा की आंखें चढ़ने लगीं और बाकर के भी पांव लड़खड़ाने लगे।

डा० दादा समझ गए कि इस बार प्रसाद का प्रभाव बहुत जल्द शुरू हो गया है। उन्होंने सबको एक पेड़ के नीचे रुक जाने के लिए कहा। रुकते ही बाकर खिलखिलाकर हंसने लगा। डा० दादा भी उसे हंसता देख आपे से बाहर होकर ठहाके लगाने लगे। लेकिन दिनेश उनकी हरकतें देखकर गम्भीर हो गया।

दिनेश को गम्भीर देखकर डा० दादा ने हंसी-हंसी में उसे समझाया, "इस बार देवता के प्रसाद में भांग बहुत ज्यादा तेज है। तुम्हारे प्रसाद में भी थोड़ी-बहुत जरूर होगी। थोड़ी देर यहीं विश्राम करना होगा, नशा थोड़ा कम होगा तब चलेंगे।"

नशा सचमुच में ही अजीब था। डा० दादा और बाकर तो पहाड़ी बोली में चीख-चीखकर किसी को गालियां भी बकने लगे थे। दिनेश को

भी लगने लगा था जैसे पहाड़ों के घूमने के साथ-साथ पास ही कोई पनचक्की चल रही है। जिसकी आवाज़ ट्रेक्टर के इंजन की आवाज़ की तरह सारी घाटी में गूंज रही है।

इसके बाद तीनों को गहरी नींद आ गई। वह नींद तब जाकर टूटी जब सरपंच रामदास ने उन्हें झकझोर कर जगाया।

जागने के बाद सबने देखा—सूरज चोटियों के पीछे ढलने की तैयारी कर रहा है और पंछी अपने बसेरों को लौट रहे हैं।

वे सब भी सरपंच के संरक्षण में दमकड़ी की तरफ चल पड़े। रास्ते में सरपंच ने दिनेश को समझाया कि ओझा का प्रसाद तो मात्र चखना चाहिए, पेट भरकर खाना बिलकुल नहीं, क्योंकि उसमें परियां स्वर्ग से लाकर सोमरस डाल जाती हैं और इसका सेवन करने वाला आदमी इन्द्र महाराज की सेवा में सीधा स्वर्ग में पहुंच जाता है।



जगतू के दोनों बच्चे सूरज और रूपा अब दिनेश के साथ भी डा० दादा की ही तरह घुल-मिल गए हैं। इन बच्चों को देखते ही दिनेश को निराला की 'दो लड़के' शीर्षक कविता याद हो आती है और वह निराला के इस तर्क से सहमत होने लगता है कि इन भूखे-नंगे और अभिशापित इंसानों के लिए ही यह धरती बनी है, आत्मा को महत्त्व देने वालों के लिए नहीं।

पहले तो दिनेश को यही लगा था कि ये दो ही बच्चे हैं जो अभागे हैं, जिनकी किस्मत में सुअर के बच्चों की तरह पल-पुसकर अन्ततः छुरी के नीचे आने के सिवा दूसरा कुछ नहीं लिखा है। लेकिन मीटिंग बुलाने के सिलसिले में जब उसे गांव-गांव घूमकर लोगों से मिलना पड़ा तो पता चला कि यहां तो अस्सी प्रतिशत बच्चे इन्हीं जैसे हैं। इन बच्चों को पौष्टिक भोजन मिलने की तो बात भी नहीं सोची जा सकती, दो जून पेट भरने के लिए मोटे अनाज की रोटी भी मुश्किल से नसीब होती है। कड़कड़ाती ठंड में भी इनके शरीर आधे से ज्यादा नंगे रहते हैं। पचास प्रतिशत के पास तो लंगोटी तक नहीं है। जूतों या चप्पलों के नाम पर

तलवों की चमड़ी है जो सूखा पड़ जाने के कारण ध्यान में फट गई धरती की तरह जगह-जगह से फटी रहती है। सिर्फ पैरों पर ही निगाह डाली जाए तो पैर इंसान के बच्चों के न लगकर, किसी बूढ़े वन-मानुष के पंजों जैसे लगते हैं, जिन्हें देखकर कोई भी डर सकता है।

हरिजनों के बच्चों की हालत तो और भी बदतर है। उनके तो हाथ और मुंह भी पैरों जैसे हो गए हैं। लेकिन आदतें देवताओं जैसी हैं। अपनी इस जलालत-भरी जिन्दगी से भी शिकायतहीन और दूसरी सुविधाओं से भरी जिन्दगी से पूरी तरह से बेखबर, हिम-मानवों जैसी सन्तुष्ट आदतें। इनके अग्रज या तो भेड-बकरियां चराते हैं या जंगल में लकड़ी काटने की मजदूरी करते हैं। जो बीस प्रतिशत से भी कम, थोड़े-बहुत खुशहाल हैं, वे या तो अपने खेतों में काम करते हैं या रायसाहब के सेब के बगीचों, खेतों और फैक्टरियों में मजदूरी करते हैं। खुशहाली का मतलब है, उनकी दो वक्त रोटी चल जाती है। तन और सिर भी थोड़े ढके हुए रहने लगते हैं। लेकिन ये बातें बन्धक मजदूरों पर लागू नहीं होतीं। बंधकों को तो दिन-रात परिश्रम करते रहने पर भी, रायसाहब के हाकिमों से, भद्दी गालियां और हंटर ही नसीब होते हैं। छोटी-छोटी गलतियों पर उनको इतने कड़े दण्ड झेलने पड़ते हैं कि कई बार तो इन दण्डों के कारण वे पागल तक हो जाते हैं।

दिनेश डा० दादा से मिलने जाता है तो जगतू के बच्चों के लिए कोई न कोई खाने की चीज़ ज़रूर साथ ले जाता है। दोनों आसपास मिल गए तो ठीक, नहीं तो वह उनकी झोपड़ी तक भी पहुंच जाता है। स्कूल खुलते ही जमना दोनों बच्चों को स्कूल में भरती करवा देगी, दिनेश ने उसे मना लिया है। थोड़ा पढ-लिख लेंगे तो दोनों को अपने पैरों पर खड़ा होने में मदद मिलेगी। यह बात जमना की समझ में तो नहीं आई है, फिर भी वह मान गई है; यही सोचकर कि जो आदमी बच्चों से इतना प्यार करता है, वह उनके भले की ही सोच रहा होगा। फिर बच्चे कौनसा कोई दूसरा काम करते हैं। घर में कोई जानवर न होने की वजह से निठल्ले घूमा करते हैं। जमना भी दूसरों के ही घरों का गोबर आदि थापती है। पन-चक्कियों वाले कूल का पानी रायसाहब के खेतों की तरफ मुड़ जाने पर, हथचक्की में आटा पीसती है और छोटे-छोटे घरेलू काम भी अपने घर की बजाय दूसरों के घरों में ही करती है। उसका अपना घर है ही कहां?

जगतू के जेल जाते ही जैसे घर भी उसके साथ जेल चला गया। जेल काटते लोगों में से अपने घर में रोटी कौन बनाता है भला ? अपना कपड़ा कौन पहनता है और अपनी मर्जी के मुताबिक ज़िन्दगी कौन जीता है ? रात को ठण्ड लगती है तो बच्चे मां की छाती के साथ बन्दरी के बच्चों की तरह लिपटकर सो जाते हैं। इस जेल में इतनी आज़ादी ज़रूर है कि मां-बच्चे एक साथ रह सकते हैं। जेल के अधिकारियों को धन्यवाद। बहुत सुविधा वाली और बहुत ही अच्छी किस्म की जेल है यह।

आज दिनेश अपने साथ बच्चों के लिए एक पुराना कमीज़ और एक स्वेटर लेता आया है। पैरों तक लटक आने वाली कमीज़ पहनकर सूरज बाबा लगने लगा है और स्वेटर पहनकर रूपा मेम साहब। गांव की जवान लड़कियां उन्हें देख-देखकर मज़ाक उड़ाती हैं। दिनेश भी उस मज़ाक को सुनता है, "लो भई अब दोनों की शादी कर दो। दोनों दुल्हा-दुल्हन बन गए हैं, दुल्हा-दुल्हन।" दिनेश सोचता है, चलो, तन तो ढक गए, अगली तनखा आए तो लड़कियों की शिकायत भी दूर हो जाएगी। दोनों के लिए उनके मेच की कमीज़ें बन जाएंगी और पैरों के लिए जूतियां भी।

लेकिन इन दो जनों के लिए कमीज़ें और जूतियां आ जाने से क्या इलाके के सब बच्चों के तन और पैर ढक जाएंगे ? सवाल सामने आते ही उसे जगतू के बच्चों के प्रति अपना व्यवहार बड़ा ही बेवकूफ़ाना लगा। उसे लगा कि इन बच्चों को भी अपनी आम ज़रूरतों के लिए संघर्ष करना चाहिए। संघर्ष ही आदमी के सोए हुए ज्ञान और चेतना को जगाता है। वह अनुभव प्रदान करता है। और अनुभव से बढ़कर कीमती चीज़ कोई दूसरी नहीं है। इस कीमती चीज़ को प्राप्त करने के लिए युद्ध लड़ना होता है। उसकी कीमत चुकानी होती है। जितनी ज़्यादा कीमत उतना ही बड़ा अनुभव। कीमत चुकाने के लिए इनको भी संघर्ष करना चाहिए, युद्ध लड़ना चाहिए।

पर तुरन्त ही दिनेश के ज़हन में सवाल उभरा कि युद्ध लड़ें तो किसके साथ ? पहाड़ों की चट्टानों के साथ ? बीहड़ जंगलों के साथ ? जंगल में रहने वाले जानवरों के साथ या इलाके के रायसाहब फतेहसिंह के साथ।

दिनेश को लगा जैसे इन सब के पीछे कोई ताकत है, सब कुछ अपने लिए, मात्र अपने लिए सुरक्षित रख लेने की ज़हनियत पैदा करने वाली ताकत। इस ताकत को परास्त किए बिना वर्गों के बीच की इस असमानता

की गहरी खाई को पाटना संभव नहीं है।

लेकिन इस ताकत को परास्त कैसे किया जा सकता है ? उसके इस सवाल का बिलकुल सीधा और बिना किसी मिलावट के जवाब था—नरभक्षियों का सफाया करके। इन नरभक्षियों से पूरे के पूरे जंगलों और उपवनों को नजात दिलानी होगी। इन हिंसक पशुओं के खिलाफ आवाज उठानी होगी। आवाज़ ही क्यों, जान हथेली पर रखकर इनसे जूझना होगा। उत्सर्ग और बलिदानों का एक नया इतिहास लिखना होगा, बहुत बड़ा इतिहास।

दिनेश विचारों की तूफानी लहरों से टकरा ही रहा था कि सामने किसी बूढ़े आदमी का हाथ थामे डा० दादा आते दिखाई दिए। दिनेश को देखते ही दादा का चेहरा खिल उठा, "कब आए। चाभी उठाकर, ताला खोल लिया होता ! यहां ऊपर ही रखी थी !"

दिनेश उनके सम्मान में खड़ा हो गया, "यहां धूप में ज़्यादा अच्छा लग रहा था। सोचा, आप कहीं पास ही गए होंगे, नहीं तो यह खाट बाहर न होती।"

"हां, पास ही गया था। टेकचन्द का छोटा लड़का बीमार है। रास्ते में नानकचन्द जी मिल गए, मेरी तरफ ही आ रहे थे। इनको ज़रा दवाई दे दूं, बस तीन मिनट में फारिग होता हूं !"

डा० दादा ने चौगाठ पर विरल में छुपाकर रखी चाभी निकालकर ताला खोला और नानकचन्द को लेकर अन्दर चले गए। अब अन्दर से उनकी आवाज़ सुनाई दे रही थी, "प्यारे भाई, रत्ती-भर भी फिकर मत करो, बहुत मामूली-सा बुखार है, बुखार की वजह से ही जोड़ों में दर्द हो रहा है, बस ये तीन पुड़िया खाते ही सब ठीक हो जाएगा।...रहने दो, पैसे तो लेते ही रहते हैं।...अच्छा लो, बीस पैसे दे दो।"

दवाई लेकर नानकचन्द चला गया। डा० दादा बर्तन में कोई खाने की चीज़ लेकर दिनेश के पास खाट पर ही आ बैठे, "लो देखो तो कैसे बने हैं।"

दिनेश ने देखा, गुड़ में लिपटे भुने हुए चने और थोड़ी अखरोट की गिरी थी। उसने एक दाना उठाकर मुंह में डाला और बोल दिया, "अच्छे बने हैं।" साथ ही पूछ लिया, "स्कूल के कमरे में तो जगह बहुत थोड़ी रहेगी, मेरे विचार में लोगों के बैठने का बन्दोबस्त कमरे के बाहर की

खुली जगह पर किया जाना चाहिए।"

डा० दादा कुछ क्षण दिनेश के चेहरे की तरफ देखते रहे। उनके दिमाग में आया, एक जनून सवार हो गया है इस लड़के के सिर पर। लोगों की मीटिंग को छोड़कर पता नहीं दूसरा कुछ सूझता भी है या नहीं? न खाना, न पीना बस सिर्फ मीटिंग। अब सामने शानदार मिठाई पड़ी है, पर इसके लिए बस वही मीटिंग। उनको थोड़ी खीझ हो आई, "मीटिंग की तुम इतनी चिंता मत करो। इन लोगों का तो यह भी नहीं है कि ये आ भी जाएंगे। ओझा और रायसाहब की मर्जी के खिलाफ बहुत कम लोग हैं जो कदम उठाने का साहस करते हैं। जो करता है उसकी गत पहले जगतू जैसी और अगर फिर भी न मानें तो अन्ततः नाथूराम जैसी होती है। और बाद में पूछने वाला भी कोई नहीं होता। पुलिस, कानून, सरकार सब धरे के धरे रह जाते हैं। आते भी हैं तो बस रायसाहब के पक्की सड़क के किनारे बने डाक बंगले तक। आदिम जातियों का जंगली इलाका है ना और ये तीनों चीजें शहर में रहती हैं, राजधानी की ऊंची-ऊंची बिल्डिंगों में।"

"अगर लोग नहीं आएंगे तो हम घर-घर जाकर उन्हें सचेत करेंगे।" दिनेश की खाली मुट्ठी डा० दादा की नाक के पास तन गई।

डा० दादा ने उस मुट्ठी को पहले गौर से देखा फिर मुस्कराकर अपनी हथेलियों में भर लिया, "बस फिर समझो कि अगले सप्ताह तुम्हारा तबादला हो जाएगा।"

दिनेश ने दादा की हथेलियों से मुट्ठी मुक्त कर ली, "तबादला ही होगा न, मुझे यहां से कोई निकालेगा तो नहीं।"

"नहीं, निकालने की बात शायद अभी कोई न सोचे। तुम पंजाब से आए सरकारी आदमी हो ना!"

"तो बस; मेरा आन्दोलन जारी रहेगा।"

"तुम नौकरी खोकर भी यहां रहना पसन्द करोगे?"

"क्यों नहीं, नौकरी खोजने के बाद मैं जाऊंगा कहां?"

"क्यों, तुम्हारा घर-बार, मां-बाप, भाई-बहन, मेरा मतलब है..."

"नहीं डा० दादा, इस तरह का कोई बोझ मेरे दिमाग पर नहीं है। मैं अकेला जीव हूं, नितान्त अकेला।"

"ओऽऽऽ!" डा० दादा ने दिनेश के कन्धे पर अपनत्व से भीगा हाथ

रख दिया। दिनेश को लगा जैसे दादा की आंखों में कुछ पिघल-सा गया है। उसने दादा के हाथ को हथेलियों में लेकर चूम लिया। बिलकुल वैसे ही जैसे वह आवेग में आता था तो अपनी मां का हाथ चूम लेता था।

इसी समय दोनों के कानों में किसी की हांफती हुई आवाज आकर पड़ी, "डा० दादा, सरकार की सवारी चली आ रही है और आप हैं कि यहां मास्टर के साथ···"

दोनों ने गर्दनें मोड़कर देखा तो चाकर का छोटा बेटा देवा हांफ रहा था। डा० दादा चौंके, "तुम्हें कैसे पता?"

"मैं नदी वाली बड़ी पनचक्की पर आटा पिसवाने गया था। वहां सब तैयारियां हो चुकी हैं। मकई वहीं छोड़ भागकर आया हूं सबको खबर करने। अब तक तो सवारी चल भी चुकी होगी।"

"जल्दी में कोई फैसला हुआ होगा!" बोलकर डा० दादा ने माथे पर उभर आए अभरक के सितारों जैसे पसीने के छोटे-छोटे कण आस्तीन से पोंछ डाले और फिर पूछा, "सरपंच जी को भी शायद इत्तला नहीं होगी?"

"मैं उनको अभी जाकर बता देता हूं।" देवा दौड़ता हुआ सरपंच के घर की तरफ चला गया, जैसे बहुत बहादुरी का काम कर रहा हो और उसे डर हो कि उसके ढील बरतने में यह काम कोई दूसरा न हथिया ले।



थोड़ी देर बाद ही पूरे गांव में हलचल-सी मच गई और देखते ही देखते शहर जाने वाले रास्ते के किनारे रायसाहब की रियाया कतार बांधकर खड़ी हो गई। जो लोग खेतों और जंगल में काम करने निकल गए थे वे भी काम छोड़ सवारी की अगवानी करने वापस पहुंच गए। चिथड़ों में लिपटे ताजे-बासी गुलाब, नंग-धड़ंग बच्चे और अधनंगी ठठरियां लिए इन बच्चों के संरक्षक जवान-बूढ़े आदमी। सब के सब निराश, पस्त और डरे हुए। जैसे कोई तूफान आने वाला हो या ज्वालामुखी फटने जा रहा हो और इस प्राकृतिक आपदा पर इनका कोई बस न चलता हो।

दिनेश भी डा० दादा और सरपंच के साथ कतार में खड़ा हो गया, जैसे वह भी अब रायसाहब की जागीर का एक टुकड़ा हो, उसे भी अंग्रेजों ने इनाम में रायसाहब को बख्श दिया हो।

सहसा सामने की पहाड़ी की बगल से घोड़ों और खच्चरों का एक छोटा-सा काफिला उगता हुआ नजर आने लगा। बिलकुल वैसा ही क़ाफिला जैसा मध्यकाल के डाकुओं या लुटेरों का होता था या अंग्रेजों के वक्त की रियासतों के राजाओं और नवाबों का।

धीरे-धीरे वह काफिला नज़दीक आने लगा। आगे-आगे दो बन्दूक-धारियों के घोड़े। उसके बाद चार सादे घोड़े। सादे घोड़ों के बाद अश्वमेध यज्ञ जैसा स्वस्थ सफेद घोड़ा। घोड़े के साथ-साथ बड़ा-सा सोने-चादी के तारों से मढ़ा छत्र लिए सेवक चल रहा है, जिसे घोड़े की चाल का अनुसरण करते हुए कई बार भागना भी पड़ता है। बिलकुल वैसे ही जैसे शादी के मौके पर सजे-धजे दूल्हे के साथ-साथ छतरी लिए कारिन्दा चलता है। उसके बाद फिर दो बन्दूकधारियों के घोड़े। फिर सामान से लदी कुछ खच्चरें और उसके बाद पीठों पर नाज़ुक सामान लादे पैदल चलने वाले बन्धक मजदूरों के पीछे धूल। धूल के पीछे पेड़-पौधे। उसके पीछे घास-फूस और पहाड़। सब का सब जैसे रायसाहब के साहिबज़ादे के साथ-साथ चल रहा है—जो स्थिर है, वह है दमकड़ी गांव के लोगों का झुण्ड। चलती हुई सड़क के किनारे लगे मील के पत्थरों की तरह जमा हुआ, बेजान, बेसोच; जैसे सब के सब धागों से बंधी कठपुतलियां हों, जो चाहे जिस तरह नचा ले।

काफिला दमकड़ी गांव के पास से गुजरने लगा तो कठपुतलियों ने कमर तक झुककर उसका इस्तकबाल किया। पर दिनेश कठपुतली नहीं बन सका। वह देखता रहा कि गर्दन अकड़ाकर चलने वालों की झुके हुए लोगों के बारे में क्या प्रतिक्रिया है।

सहसा चलते-चलते छत्र वाला सफेद घोड़ा तनिक मुड़ा और दिनेश के सामने आकर खड़ा हो गया। घोड़े के रुकते ही डा० दादा और सरपच कमर सीधी करके खड़े हो गए। डा० दादा ने रायसाहब की जगह पर उनके छोटे साहबजादे किशोर को दिनेश की तरफ आग बरसाती आखों से घूरते देखा तो वे कांपती हुई आवाज़ में दिनेश का परिचय देने लगे, "हुजूर, दमकड़ी के स्कूल का नया मास्टर है। पंजाबी है हुजूर। जनाब

बहुत अच्छा साहित्यकार है और मेहनती भी।"

"साहित्यकार!" छोटे रायसाहब ठहाका मारकर हंस पड़े और उनके माथे की भवें सीधी हो गईं, जैसे सोच लिया हो—तब कोई बात नहीं।

साहित्यकारों के बारे में किशोर की धारणा बहुत फुसफुसी है, इनका ज्ञान डा० दादा को नहीं सरपंच को है। सरपंच जानता है कि छोटे रायसाहब साहित्यकारों को निकम्मे, स्वार्थी और नपुंसक जीव समझते हैं। समझते हैं कि दुनिया में स्थायी शान्ति कायम करने के लिए साहित्यकारों को किसी पुराने किले में बन्द करके किले को आग लगा दी जाए और पूरा किला जल जाने के बाद उसकी राख को किसी गहरे से गहरे समुद्र में फेंक दिया जाए, बस इसके बाद न कोई झगडा रहेगा न झंझट। सारी दुनिया चैन की जिंदगी गुजारेगी। सरपंच डा० दादा को इशारे से यह समझाना चाहता है लेकिन दादा हैं कि उसकी तरफ देख ही नहीं रहे।

छोटे रायसाहब ने सरपंच से सवाल किया, "तुम इस तरह गुमसुम क्यों खड़े हो रामदास?"

"नहीं जनाब, कोई बात नहीं, कुछ तबियत ढीली-सी है मेरी।" सरपंच ने हाथ जोड़ दिए।

छोटे रायसाहब के पास ज्यादा वक्त नहीं है। उसने राजधानी जाकर आगे के लिए हवाई-जहाज पकड़ना है। उसने सरपंच को वरुश कर डा० दादा को हुक्म सुनाया, "इस साहित्यकार मास्टर को समझा दीजिए कि इस इलाके में रहने का भी एक सलीका है!"

मुड़ते-मुड़ते किशोर ने ऊपर की तरफ निगाह दौड़ाकर पूछा, "और वो उस पेड़ के नीचे कौन लोग बैठे हैं?"

डा० दादा और सरपंच ने मुंह उठाकर ऊपर देखा—जमना अपने बच्चों के साथ, मुंह पर घृणा के भाव लिए तमाशा देख रही थी। सरपंच ने उसका परिचय दिया, "हुजूर जगतू की अपाहिज बीवी है और उसके बच्चे हैं हुजूर!"

"अच्छा-अच्छा, वो शिकारी जगतू?"

"हां हुजूर।"

"अभी उसकी सजा में कितने दिन बाकी हैं?"

"साल-भर से ऊपर का वखत बाकी है हुजूर।"
"जब छूटने को एक हफ्ता बाकी रह जाए तो हमें याद दिलाना।"
"जो हुक्म हुजूर।"

छोटे रायसाहब ने लगाम खींची और उनके चंचल घोड़े के साथ काफिला आगे बढ़ गया। काफिले के उतराई उतरते ही लोग छोटे-छोटे झुण्ड बनाकर कानाफूसी में जुट गए। बिलकुल वैसे ही जैसे पंखकटे पक्षी चिड़ियाघर के पिंजरे को अपना घर समझकर समूहों में गीत गाने लगते हैं और गीतों में यह भाव प्रकट करके फूले नहीं समाते कि यह धरती और आसमान उन्हीं का है, उनके सिवा किसी दूसरे का नहीं।



दिनेश यह देखकर बहुत परेशान हुआ कि दमकड़ी गांव के लोगों के अलावा, स्कूल में रखी गई मीटिंग में दूसरे गांव का एक भी आदमी उपस्थित नहीं था। श्यामा और दौल जरूर थे, लेकिन इनको वह दूसरे गांव का नहीं समझता था। एक आदमी और था जिसे दिनेश पहचानने की कोशिश कर रहा था लेकिन पहचान नहीं पा रहा था। लग यही रहा था कि उसे कहीं देखा है, पर पक्की तौर पर याद नहीं आ रहा था कि कहां देखा है।

डा० दादा कुछ कहने के लिए उठे तो दिनेश का ध्यान उस आदमी की ओर से हट गया। दादा ने पहले निराश-सी नज़रों से दिनेश की तरफ देखा, फिर वे गला साफ करते हुए आवाज़ को तनिक ऊंची करके बोले, "बुलाए तो पहरुआ, सुमेरु, डवरू, पचकोटा आदि सभी गांवों के लोग थे; पर लगता है कि किसी के पास अपनी तकलीफों के बारे में सोचने की फुर्सत ही नहीं है। आप सब लोग जानते ही हैं कि आज की यह मीटिंग इस पूरे इलाके की समस्याओं पर राय-मशविरा करने के लिए रखी गई है, लेकिन जब लोग आए ही नहीं तो मेरे विचार में हमें इसे मुलतवी कर देना चाहिए। फिर किसी दिन जब पूरे लोग इकट्ठे होंगे तब ही बातचीत करना मुनासिब होगा।"

डा० दादा की बात सुनकर सबने स्वीकारात्मक सिर हिला दिए।

एक आदमी ने तो बोल भी दिया, "ठीक कह रहे हैं आकधर साहब। जब लोग ही नही है तो बात करने का क्या लाभ ! मेरे विचार में यह मीटिंग किसी ब्याह-शादी के मौके पर रखनी चाहिए, तभी सारे लोग इकट्ठे होते है।"

पर दिनेश को मीटिंग मुल्तवी करने का विचार ठीक नहीं लगा। उसने अथक परिश्रम करके किस तरह से मीटिंग का होना संभव किया था, यह वही जानता था या उसके पैरों के छाले। खून ने जोर मारा तो दिनेश खड़ा हो गया और उठकर जाने के लिए तैयार हुए लोगों को हाथ के इशारे से बिठाकर बोला, "सब लोग अपने कीमती-धंधो को छोड़कर आए ही है तो हम लोगो को आज भी थोड़ा-बहुत विचार-विमर्श कर लेना चाहिए। मेरे विचार मे इस मीटिंग को इस तरह स्थगित करना उचित नही है, इससे विरोधी ताकतो के हौसले बुलन्द होगे। लोग जब सुनेंगे कि उनके बिना भी मीटिंग का काम नही रुका और फैसले किसी एक के नही सबके पक्ष मे लिए गए हैं तो अगली मीटिंग मे वे खुद-बखुद चले आएगे।"

श्यामा ने भी खडी होकर दिनेश के सुझाव का समर्थन किया। कुछ दूसरी औरतो ने भी श्यामा का साथ दिया तो लोगों के सिर इस बात पर भी स्वीकार की मुद्रा मे हिलने लगे। अब पहले वाले आदमी की आवाज भी उलटी होकर उभरी, "ठीक ही तो कह रहे हैं मास्टर जी, जब सब लोग काम-धंधे छोड़कर आ ही गए हैं तो थोड़ी-बहुत बातचीत तो हो ही जानी चाहिए।"

हवा का रुख बदला देखकर डा० दादा ने भी हामी भर दी। उन्होने सब औरतों और मर्दों से प्रार्थना की कि एक-एक करके इलाके की समस्याओ को सबके सामने रखा जाए ताकि उन पर खुलकर विचार-विमर्श किया जा सके।"

सुनते ही एक मरियल-सी औरत अपनी देह के एक मात्र मैले-कुचैले वस्त्र के फटे-से टुकड़े को अपने बूढ़े वक्ष पर संभालती हुई खड़ी हो गई और एक हाथ से आंखो पर छाया करके देखती हुई जो कुछ गूढ़ पहाड़ी बोली में बोली, उसका मतलब दिनेश को इस तरह समझ मे आया, "पास के गाव पहरुआ के फत्तू ने परले साल मेरे से दो बकरियां उधार ली थी पर पैसे अभी तक नही दिए, या तो मेरे पैसे दिलाए जाएं या बकरिया

वापिस दिलाई जाएं।"

औरत के बैठते ही एक बूढ़ा आदमी खड़ा हो गया और झुकी रीढ़ को सीधी करने की कोशिश करता हुआ उसी पहाड़ी बोली में बोला, "मेरे आड़ू और अलूचे के पेड़ों पर जो मधुमक्खी के छत्ते लगे थे, कोई चुपके से उनका शहद निकाल ले गया और छत्ते उजाड़ गया। सरपंच जी शहद निकालने वाले का पता लगाकर मुझे हरजाना दिलवाएं और मुजरिम को दण्ड दें।"

आदमी बैठा तो एक हट्टी-कट्टी युवती खड़ी हो गई और छाती तानकर बोली, "मेरा पति हर रोज़ दारू पीकर आता है और मुझे बेमतलब पीटने लगता है और चाहता है कि मैं भी उसकी तरह दारू पीने लगूं। मेरी सौत से भी वह ऐसा ही व्यवहार करता है। इस बात से मेरे पति को रोका जाए और मेरे बच्चों को भी···"

युवती की बात अभी पूरी भी नहीं हुई थी कि एक मरियल-सा आदमी खड़ा हो गया और चीखकर बोला, "झूठ बोलती है सरकार! ये खुद भांग पीती है और उसके नशे में अपने बच्चों को पीटती है।" आदमी ऐसे बोल रहा था जैसे उसने अभी भी शराब पी रखी हो।

आदमी अभी बैठा भी नहीं था कि एक ठिगने से कद की गोल-मटोल औरत खड़ी हो गई और बोली, "मेरे टमाटर और आलू के पौधों को एक भूरा-सा कीड़ा खाए चला जा रहा है। सारी फसल चौपट हो रही है। सरपंच जी, इस कीड़े को मारने की तरकीब बताएं और मेरी फसल को चौपट होने से बचाएं।"

पांचवां युवक अभी खड़ा ही हुआ था कि उसे बोलने से रोककर दिनेश ने समझाया, "देखिए, आज की यह मीटिंग हमने इस तरह की व्यक्तिगत समस्याओं पर विचार करने के लिए नहीं बुलाई, हमें आज ऐसी समस्याओं पर विचार करना है जो सबकी सांझी समस्याएं हैं। मेरा मतलब है जिनसे आदमियों का पूरा वर्ग या समूह प्रभावित हो रहा है। इसलिए कृपया वर्गगत समस्याएं ही उठाएं। व्यक्तिगत समस्याओं के हल पंचायत में ढूंढ़े जाते हैं, यह पंचायत नहीं है।"

दिनेश की बात सुनकर सब लोगों में सन्नाटा छा गया। वर्गगत समस्याएं नाम ही लोगों ने पहली बार सुना था। जब कुछ देर कोई भी कुछ नहीं बोला तो दिनेश ने भी समझ लिया कि उनको उसकी बात

एक आदमी ने तो बोल भी दिया, "ठीक कह रहे हैं, डाकधर साहब। जब लोग ही नहीं है तो बात करने का क्या लाभ! मेरे विचार में यह मीटिंग किसी ब्याह-शादी के मौके पर रखनी चाहिए, तभी सारे लोग इकट्ठे होते हैं।"

पर दिनेश को मीटिंग मुल्तवी करने का विचार ठीक नहीं लगा। उसने अथक परिश्रम करके किस तरह से मीटिंग का होना संभव किया था, यह वही जानता था या उसके पैरों के छाले। खून ने ज़ोर मारा तो दिनेश खड़ा हो गया और उठकर जाने के लिए तैयार हुए लोगों को हाथ के इशारे से बिठाकर बोला, "सब लोग अपने कीमती-धंधों को छोड़कर आए ही हैं तो हम लोगों को आज भी थोड़ा-बहुत विचार-विमर्श कर लेना चाहिए। मेरे विचार में इस मीटिंग को इस तरह स्थगित करना उचित नहीं है, इससे विरोधी ताकतों के हौसले बुलन्द होंगे। लोग जब सुनेंगे कि उनके बिना भी मीटिंग का काम नहीं रुका और फैसले किसी एक के नहीं सबके पक्ष में लिए गए हैं तो अगली मीटिंग में वे खुद-बखुद चले आएंगे।"

श्यामा ने भी खड़ी होकर दिनेश के सुझाव का समर्थन किया। कुछ दूसरी औरतों ने भी श्यामा का साथ दिया तो लोगों के सिर इस बात पर भी स्वीकार की मुद्रा में हिलने लगे। अब पहले वाले आदमी की आवाज़ भी उलटी होकर उभरी, "ठीक ही तो कह रहे हैं मास्टर जी, जब सब लोग काम-धंधे छोड़कर आ ही गए हैं तो थोड़ी-बहुत बातचीत तो हो ही जानी चाहिए।"

हवा का रुख बदला देखकर डा० दादा ने भी हामी भर दी। उन्होंने सब औरतों और मर्दों से प्रार्थना की कि एक-एक करके इलाके की समस्याओं को सबके सामने रखा जाए ताकि उन पर खुलकर विचार-विमर्श किया जा सके।"

सुनते ही एक मरियल-सी औरत अपनी देह के एक मात्र मैले-कुचैले वस्त्र के फटे-से टुकड़े को अपने बूढ़े वक्ष पर संभालती हुई खड़ी हो गई और एक हाथ से आंखों पर छाया करके देखती हुई जो कुछ गूढ़ पहाड़ी बोली में बोली, उसका मतलब दिनेश को इस तरह समझ में आया, "पास के गांव पहरुआ के फत्तू ने परले साल मेरे से दो बकरियां उधार ली थीं पर पैसे अभी तक नहीं दिए, या तो मेरे पैसे दिलाए जाएं या बकरियां

वापिस दिलाई जाएं।"

औरत के बैठते ही एक बूढा आदमी खडा हो गया और झुकी रीढ़ को सीधी करने की कोशिश करता हुआ उसी पहाडी बोली मे बोला, "मेरे आड़ू और अलूचे के पेड़ों पर जो मधुमक्खी के छत्ते लगे थे, कोई चुपके से उनका शहद निकाल ले गया और छत्ते उजाड़ गया। सरपंच जी शहद निकालने वाले का पता लगाकर मुझे हरजाना दिलवाएं और मुजरिम को दण्ड दें।"

आदमी बैठा तो एक हट्टी-कट्टी युवती खड़ी हो गई और छाती तानकर बोली, "मेरा पति हर रोज दारू पीकर आता है और मुझे बेमतलब पीटने लगता है और चाहता है कि मैं भी उसकी तरह दारू पीने लगू। मेरी सौत से भी वह ऐसा ही व्यवहार करता है। इस बात से मेरे पति को रोका जाए और मेरे बच्चों को भी…"

युवती की बात अभी पूरी भी नही हुई थी कि एक मरियल-सा आदमी खड़ा हो गया और चीखकर बोला, "झूठ बोलती है सरकार! ये खुद भाग पीती है और उसके नशे मे अपने बच्चों को पीटती है।" आदमी ऐसे बोल रहा था जैसे उसने अभी भी शराब पी रखी हो।

आदमी अभी बैठा भी नही था कि एक ठिगने से कद की गोल-मटोल औरत खड़ी हो गई और बोली, "मेरे टमाटर और आलू के पौधों को एक भूरा-सा कीड़ा खाए चला जा रहा है। सारी फसल चौपट हो रही है। सरपंच जी, इस कीड़े को मारने की तरकीब बताए और मेरी फसल को चौपट होने से बचाएं।"

पांचवां युवक अभी खडा ही हुआ था कि उसे बोलने से रोककर दिनेश ने समझाया, "देखिए, आज की यह मीटिंग हमने इस तरह की व्यक्तिगत समस्याओं पर विचार करने के लिए नही बुलाई, हमे आज ऐसी समस्याओं पर विचार करना है जो सबकी सांझी समस्याएं है। मेरा मतलब है जिनसे आदमियों का पूरा वर्ग या समूह प्रभावित हो रहा है। इसलिए कृपया वर्गगत समस्याए ही उठाएं। व्यक्तिगत समस्याओं के हल पंचायत मे ढूढ़े जाते है, यह पचायत नही है।"

दिनेश की बात सुनकर सब लोगों मे सन्नाटा छा गया। वर्गगत समस्याएं नाम ही लोगों ने पहली बार सुना था। जब कुछ देर कोई भी कुछ नही बोला तो दिनेश ने भी समझ लिया कि उनको उसकी बात

समझ नहीं आई है। वह फिर खड़ा हो गया और बात को स्पष्ट करता हुआ बोला, "हमें ऐसी बातों पर विचार करना चाहिए ,जो सारे इलाके के लिए दहशत का कारण बनी हुई हैं और जो हम सब की उन्नति तथा स्वतन्त्रतापूर्वक जिन्दगी जीने मे बाधक हैं, यानी कि मैं, आप, हम सब और हमारे बच्चे जिनके चंगुल में हैं। जिन पर हमारे बिलराव का कोई बस नही चलता और जिन पर काबू पाने के लिए हमारे सगठित होने, यानी कि आपस मे मिलकर प्रयत्न करने की जरूरत है।"

दिनेश की बात सुनकर अब सरपंच रामदास खड़ा हो गया और अपने सिर पर बंधी पगड़ी को संभालता हुआ बोला, "हमे तो कोई भी ऐसी समस्या नजर नही आती जो सांझी हो, मेहरबानी करके आप ही किसी साझी समस्या पर रोशनी डालें।" पूरी भीड में दूसरे किसी भी आदमी के सिर पर पगडी नहीं थी। सरपच पगड़ी को दोनों हाथों से ऐसे सभालकर बैठ गया जैसे पगड़ी उसके सिर पर सजा बादशाहत का ताज हो और इस मीटिंग में उसके छिन जाने का अंदेशा पैदा हो गया हो।

डा० दादा ने भी सहमति ज़ाहिर की तो दिनेश फिर खड़ा हो गया, "देखिए, इस समय जो सबसे बड़ी और भयंकर सांझी समस्या हमारे सामने है, वह है आदमखोर से अपनी औरतो और बच्चों की जान की रक्षा करने की। हमे सबसे पहले इसी पर विचार करना चाहिए कि इस समस्या का हल हम लोग क्या तलाश कर सकते हैं।"

आदमखोर का नाम सुनते ही सब की आखों में दहशत का अधेरा छा गया। जमना के दोनों हाथ अपनी नकारा हो गई टांगों पर चले गए। चंदेरी पल्लू में मुंह छिपाकर सुबकने लगी। उसके पास बैठी औरतों ने उसे बड़ी मुश्किल से चुप कराया। सहसा ज़मीन पर दोनों हाथ टिका-कर हुंकार-सी भरती हुई एक बुढ़िया खड़ी हो गई। इस बुढ़िया के पास मात्र इतना ही वस्त्र था जिससे वह अपनी कमर को ही बड़ी मुश्किल से ढक पा रही थी। उसके झुर्रियों वाले स्तन नाभी तक लटक रहे थे। कोशिश करने पर भी उसकी रीढ़ सीधी नही हो रही थी। वह झुकी रह-कर ही हाथ मटका-मटकाकर बोलने लगी, "पर मैं कहूं, किसी दैवी ताकत से हम लोग कैसे लड़ सकते हैं? कभी किसी प्रेत ने भी कोई आदमी लड़ा है? इसके लिए तो कोई सयाना या समझदार ओझा चाहिए, जो अपने जादू-टोने से प्रेत को वस मे कर सके। वह प्रेत भी तो सुन रहा

होगा इस वखत तुम्हारी बातें। उसे गुस्सा नहीं आ रहा होगा क्या ?",
दिनेश ने सबको समझाया, "दादी मां आप बहुत पुराने ज़माने की बातें कर रही हैं। आज के विज्ञान के युग में इन बातों का कोई महत्त्व नहीं है। आदमखोर को वस में करने के लिए किसी सयाने या ओझा के जादू-टोने की कतई कोई ज़रूरत नहीं है। सिर्फ हम सब लोगों के संगठन की आवश्यकता है। जनता के संगठन के आगे कोई नहीं टिक सकता। पंचों के सामने तो परमेश्वर भी घुटने टेक देता है।"

दिनेश की बात सुनकर बाकर खड़ा हो गया और गर्दन पर खुजली करता हुआ बोला, "जब सरकार ने जानवरों को मारने के लिए इतनी बड़ी सज़ा रख दी है, सरकार का कानून आदमखोर जानवरों की रक्षा कर रहा है तो जनता और उसका संगठन यहां क्या करेगा ?"

दिनेश ने इस सवाल का जवाब दिया, "देखिए कानून कहीं आसमान से बनकर नहीं आता। जनता के चुने हुए प्रतिनिधि लोकसभा, राज्य सभा या विधान सभा में बैठकर इसे बनाते हैं। हो सकता है कानून बनाने वालों को इस बीहड़ इलाके की इन भयकर समस्याओं का इलम ही न हो। हमें संगठित होकर उनको इलम करवाना चाहिए। एक आवाज़ होकर सरकार का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहिए।"

"यहां इलम क्या करेगा ? सरकार को तो फॉरेन करसी चाहिए। इन जानवरों को विदेशों में भेजकर सरकार डालर कमाती है और विदेशी सरकारों को खुश करती है।" इस बार बोलने वाला शायद कोई रिटायर हुआ फौज का सिपाही था, क्योंकि उसकी कमर में कपड़े की जगह खाकी पैंट को काटकर बनाई गई निकर बंधी थी, जिन पर जगह-जगह सफेद कपड़े के पैबन्द चमक रहे थे।

दिनेश ने जवाब दिया, "यह सब इसलिए हो रहा है कि आप लोग सगठित नहीं हैं। आप लोगों के मुंह में ज़बान नहीं है। नहीं तो लोगों की जान की कीमत पर व्यापार करने की हिम्मत सरकार कर ही नहीं सकती। सरकार आप लोगों को भेड़-बकरियां समझती है कि जब जी चाहे, जिस किसी को बूचड़खाने भेज दे, कोई कान भी नहीं फटकारेगा।"

"हम लोग भेड़-बकरियां नहीं हैं। हमें भेड़-बकरियां समझना सरकार की सरासर हिमाकत है।" अब की बार श्यामा बोली।

"मास्टर जी, आप जो कह रहे हैं, सब ठीक है, लेकिन हम लोग कर

ही क्या सकते है ?" यह सवाल घबराते हुए सरपंच का था।

"हम यह कर सकते है रामदास जी कि जिस समस्या के समाधान मे सरकार हमारी मदद नही करती, उस समस्या का समाधान खुद खोजें।" दिनेश ने जवाब दिया।

"आखिर इन भयकर जानवरों का हम क्या बिगाड़ सकते हैं, जो चुपके-से रात के अधेरे मे आते है और कमज़ोर बच्चो और औरतों को उठाकर भाग जाते है ?"

"हम इनका नामोनिशान मिटा सकते हैं।" श्यामा का बंधा हुआ हाथ हवा मे लहरा उठा।

"हा, हम लोग सगठन की शक्ति से सिर्फ इन जानवरों से ही नहीं, दूसरी किसम की खतरनाक आफतों से भी अपनी हिफ़ाज़त कर सकते है। हम जानवरो के दुश्मन नही है, लेकिन जो जानवर आदमखोर हो जाए, अपना स्वाभाविक भोजन छोडकर हमारे बच्चों और औरतो को खाने लगें, हमे उनका नामोनिशान तक मिटा देना चाहिए।" दिनेश ने भी श्यामा की मुट्ठी की तरह अपनी मुट्ठी हवा मे लहरा दी।

"दिनेश ठीक कह रहा है भाई, अगर सरकार कानून की रोक हटा ले और हमें इन आदमखोर जानवरों को मारने की छूट दे दे तो हम लोग खुद इनसे निपट सकते है। इनसे बचने का तरीका सिर्फ इनको मौत के घाट उतारना ही है। जो जानवर एक बार आदमखोर हो जाता है, उसे फिर से उसकी असली खुराक की तरफ मोड़ना सभव नहीं है। हम सगठन से इनके साथ निपट सकते है। क्या हमारे पूर्वज इनसे नही निपटते थे ? उनके पास तो बन्दूकें भी नही थी। वे सिर्फ तीर-कमान और छोटे-छोटे भालों से ही काम लिया करते थे। हम आज है, यह इसी बात का सबूत है कि हमारे पूर्वजों ने इन पर विजय हासिल की थी।" यह डा० दादा की आवाज़ थी।

"ठीक है, आप जो रास्ता दिखाएगे, हम उस पर चलने को तैयार हैं। लेकिन हम यह नही चाह सकते कि हमारी हालत भी वैसी ही हो जैसी बेचारे जगतू की हुई है या बहुत से दूसरे लोगों की होती रहती है।" अब की बार फिर खाकी निकर वाला आदमी बोला था।

"उस बेचारे की बुरी हालत तो एक दूसरे आदमखोर ने करवाई है। हम लोग इन जंगली आदमखोरों का तो इलाज ढूंढ़ सकते पर उस

आदमखोर का इलाज तो शायद भगवान के पास भी नहीं है।" यह श्यामा की आवाज़ थी।

"दूसरे किस आदमखोर की बात कर रही है आप?" दिनेश ने चाहा कि श्यामा अपनी बात को खुले रूप में कहे, ताकि दूसरों को भी बात खुले रूप में कहने की प्रेरणा मिले। ओझा या रायसाहब के भेजे भेदिये का वहां होना अब उसके लिए कोई मायने नहीं रख रहा था। लोगों का रुख देखकर उसे अपनी कल्पना सार्थक होती नज़र आ रही थी।

"अब नाम क्या लेना है, सब लोग जानते तो हैं।" श्यामा ने भीड़ की तरफ अविश्वास की नज़रों से देखते हुए जवाब दिया।

"मैं लेती हूं नाम!" औरतों में सबसे पीछे बैठी अपाहिज जमना ने अपना हाथ ऊपर उठा दिया। "वह आदमखोर है रायसाहब फतेसिंह। उसके दोनों बेटे भी दरिन्दे हैं। छोटे बेटे के डर से तो इलाके की बहू-बेटियों को नींद तक नहीं आती। खून पी लिया है इन बहशियों ने इस इलाके के गरीब लोगों का। हड्डियां तक चबा डाली हैं। हमारे पूरे परिवार को बरबाद कर दिया है इन जल्लादों ने।" बोलते-बोलते जमना को जैसे दौरा-सा पड़ गया और वह चीख मारकर धरती पर झुक गई और अपने सिर के रूखे बाल नोच-नोचकर भीख मांगने वाले कोढ़ियों जैसी विचित्र लेकिन सधी हुई आवाज़ में विलाप करने लगी।

जमना की यह दशा देख सारी सभा में सन्नाटा छा गया। सब लोग एक-दूसरे का मुंह ताकने लगे। सरपंच रामदास ने समझाने की-सी भाषा में थरथराते हुए लफ्ज़ उगल दिए, "पागल हो गई है, इसे पागलपन का दौरा पड़ गया है।"

"हां, मैं भी पागल हो गया हूं!" सहसा खाकी निकर वाला आदमी बीमार बाघ की तरह दहाड़कर खड़ा हो गया और ज़ोर-ज़ोर से "रायसाहब मुर्दाबाद, मास्टर जी ज़िन्दाबाद, बेटी श्यामा ज़िन्दाबाद!" के नारे लगाने लगा। लेकिन भीड़ में से सिर्फ जमना और डा० दादा ने ही उस आवाज़ का साथ दिया। बाकी भीड़ विटर-विटर मुंह बाए चुपचाप उसे देखती रही। जैसे सर्कस का कोई बहुत ही खतरनाक, जान को जोखिम में डालकर खेला जाने वाला खेल देख रही हो।

नारे खत्म हुए तो सभा में इलाके की कुछ दूसरी समस्याओं पर भी विचार होने लगा। लेकिन यह विचार भी दिनेश, श्यामा, डा० दादा,

चदेरी, जमना और निकर वाला, इन पांच-सात लोगों के बीच ही मंडराता रहा। बाकी लोग केवल दर्शक बनकर बैठे रहे। किसी का नाम लेकर कुछ पूछा जाता तो वह हां या ना में बस सिर्फ गर्दन हिला देता। जरूरत पड़ने पर सरपंच ही लोगों की पैरवी करता रहा। बाकर और उसके बेटे भी सरपंच का साथ देते रहे। गाव के आम लोगों की शायद समझ में ही नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है, क्योंकि इस तरह की सांझी समस्याओं पर विचार करने वाली और रायसाहब की खुले तौर पर खिलाफत करने वाली मीटिंग उन्होंने पहली बार देखी थी।



अभी अगली मीटिंग के लिए दिन निश्चित किए जाने का फैसला हो हो रहा था कि दिनेश ने पाया कि पूरी भीड़ मीटिंग की कार्रवाई से ध्यान हटाकर नीचे की घाटी की तरफ देखने लगी है। डा० दादा और श्यामा का ध्यान भी उसी तरफ बंट गया। दिनेश ने आगे बढ़कर देखा तो उसे तीन घोड़े और सामान से लदी कुछ खच्चरें अपनी ओर ही चढ़ती आ रही नजर आईं। भीड़ उन घोडों और खच्चरों को ऐसे देख रही थी जैसे पहाड़ पर हाथी या ऊंट जैसे नायाब जानवर आ चढ़े हों जो इन पहाड़ी लोगों ने सिर्फ तसवीरों में ही देखे हों।

घोड़े समतल पगडंडी पर साफ दिखाई देने लगे तो भीड़ मीटिंग के पूरे प्रभाव को कपड़ों की धूल की तरह झाड़कर खड़ी हो गई और आपस में कानाफूसी करने लगी। सरपंच ने पहले तो झुंझलाहट में इधर-उधर देखा, फिर वह दो आदमियों को साथ लेकर घोड़ों की तरफ चल पड़ा। दिनेश और श्यामा चुपचाप यह सब होता देखते रहे, उन्हें सारा का सारा तमाशा अपनी पकड़ से बिलकुल बाहर लगा।

थोड़ी देर बाद घोड़े भीड़ के पास आकर खड़े हो गए। सबसे आगे वाले घोड़े से एक मसखरा-सा लगने वाला आदमी उछलकर नीचे उतरा और डा० दादा के पास जाकर बोला, "इस इलाके का सरपंच रामदास कौन है ?"

हालांकि रामदास उनका स्वागत करके उनको यहां तक लाया था,

पर अभी तक उसे अपना परिचय देने का मौका नहीं मिला था। आगन्तुक का सवाल सुनते ही वह लपक्कर आगे आया और छाती पर हाथ रखकर बोला, "मैं हूं साब, मैं हूं!"

"सरकार ने आपके लिए राबर्ट साहब को भेजा है। ये दुनिया के माने हुए शिकारी हैं। इस इलाके में मैनईटर के आतंक की खबरें पढ़कर सीधे इग्लैंड से आ रहे है।"

शिकारी का इंग्लैंड से आना सुनते ही सब लोग अपनी-अपनी जगह पर ही उनके स्वागत में कमर तक झुक गए। बिलकुल वैसे ही जैसे रायसाहब या ओझा के सामने झुकते थे। राबर्ट ने भी सिर से हैट उतारकर उनका स्वागत कबूल किया। सरपंच ने सहारा देकर राबर्ट को घोड़े से उतारा। अपनी विचित्र चाल के साथ राबर्ट आगे बढ़ा तो डा० दादा ने उसके लिए कुर्सी खिसकाकर आगे कर दी। दिनेश ने भी उसके बढे हुए हाथ के साथ हाथ मिलाया। राबर्ट का विशेष अरदली घोड़े से उतरकर राबर्ट की बगल में आकर खड़ा हो गया।

पहले वाले सरकारी आदमी ने फिर राबर्ट का पूरा परिचय देना शुरू किया, "आपने आज तक लगभग तीन सौ खूंखार जानवरों का शिकार किया है। इनमें से आधे जानवर मैनईटर यानी कि आदमखोर थे। इंग्लैंड की सरकार ने पैसे की मदद देकर खासतौर से इनको हिन्दोस्तान के इस इलाके की सेवा के लिए भेजा है। हिन्दोस्तान की मरकजी सरकार और फिर मरकज़ी सरकार की सिफारिश से सूबाई सरकार ने भी इनकी मदद की है। इनको इस इलाके तक पहुंचने की इजाज़त दी है और किसी भी किसम की तकलीफ न होने देने का वादा किया है। ये आप लोगों के सिर पर बोझ नहीं बनेंगे। सिर्फ अपना टैण्ट लगाने के लिए थोड़ी-सी ज़मीन आपसे चाहेंगे और चाहेंगे कि इस इलाके के आदमखोर जानवरों को मारने या ज़िंदा पकड़ने के लिए आप इनकी मदद करें।"

सरकारी आदमी की बातें सुनकर सबके चेहरों पर रौनक पुत गई। सरपंच ने पुलकित होकर कहा, "आपका वैलकम है साहब जी, वैलकम। आप हमारे लिए खुदा हैं। क्यों नहीं, मेरे इलाके का हर औरत व मर्द आपकी हर तरह से मदद करेगा।"

सरपच ने जो कुछ कहा, पहले वाले सरकारी ग्रादमी रहीम ने उसका

अनुवाद करके रावर्ट को समझा दिया। रावर्ट ने फिर हैट उतारकर और अपनी घनी मूंछों के नीचे के चिकने होंठों को फैलाकर खुशी जाहिर की।

सरकारी आदमी ने आदेश दिया, "अच्छा तो फिर इनको अपना टैण्ट गाड़ने की कोई सुरक्षित जगह बताएं।"

सब लोगों में जगह बताने के मामले को लेकर कानाफूसी होने लगी। आखिर सरपंच ने निर्णय सुनाया, "सबसे ज्यादा ऊंचाई पर मेरा मकई का खेत है, आप चाहें तो वहां अपना तम्बू लगा सकते हैं।"

सबने सरपंच के बलिदान की मुक्त कण्ठ से सराहना की। बिना *रायसाहब और ओझा की सलाह लिए, इस तरह खेत देने का साहस सिर्फ* सरपंच ही कर सकता था।

फैसला होते ही घोड़ों और खच्चरों के मुंह दमकड़ी गांव की तरफ मुड़ गए और एक जलूस की शक्ल में रावर्ट को बीच में लेकर लोग सरपंच के खेत की तरफ बढ़ चले।

डा० दादा, जो अभी तक भौंचक-से खड़े सब कुछ देख रहे थे, अचानक चौकन्ने हुए और आगे बढ़कर रावर्ट से बोले, "अजी आप पहले कुछ चाय-पानी तो ले लेते।"

रहीम ने रावर्ट को डा० दादा का कहा अंग्रेज़ी में समझाया, इस अन्दाज़ में कि रावर्ट साहब हिन्दुस्तानी बिलकुल नहीं समझते। रावर्ट ने मुस्कराकर अंग्रेज़ी में जो जवाब दिया, उसका मतलब रहीम ने दादा को बताया कि हम लोगों के पास सब कुछ है। हमें सिर्फ जगह बता दीजिए और अपना प्यार दीजिएगा।

"अजी प्यार तो इस इलाके के लोगों की नस-नस में भरा पड़ा है।" बोलकर डा० दादा सरपंच के साथ हो लिए। चलते-चलते उन्होंने पीछे छूट गए दिनेश और श्यामा की तरफ देखा जो औरतों के साथ भौंचक-से खड़े रह गए थे। देखकर वे तनिक ठिठके भी पर उन्हें लगा कि वापस जाकर फिर जुलूस में शामिल हो पाना उनके लिए मुमकिन नहीं है। रहीम की बातों से वे बेहद प्रभावित हो गए थे। उन्हें लगा था कि आदमखोर की भयंकर समस्या का निदान सिर्फ रावर्ट ही है, और कोई नहीं।

जुलूस जब थोड़ा आगे निकल गया तो गांव की औरतें भी छोटे-से

झुण्ड की शक्ल में गांव की ओर चल पड़ी। दिनेश, श्यामा ओर शैल पहले रावर्ट और औरतों के जुलूसों को जाते देखते रहे, फिर श्यामा के मुह से निकल गया, "अपने आप अपने पैरो पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं गधे।"

श्यामा की आवाज सुनकर दिनेश की भी जडता टूटी, "कौन गधे ?"

"दमकड़ी गांव के ये मर्द और औरतें और कौन ?"

"इनको गाली देने से कोई लाभ नही। ये लोग मासूम और नासमझ हैं, बिलकुल बच्चों और किशोरों की तरह।"

"यही बात आपने पहले भी एक दिन मुझसे कही थी। लेकिन डा० दादा भी बच्चे हैं क्या ? उनको भी कुछ पता नही है ?"

श्यामा के इस सवाल पर दिनेश चुप हो गया। उसे भी समझ नही आ रहा था कि डा० दादा ने ऐसा क्यों किया है ? उन्होने ही तो इस मीटिंग को बुलाने मे उसके साथ मिलकर पूरी कोशिश की थी। तो क्या यह कोशिश बकवास थी ? फरेब थी ? धोखा थी ?

जमना भी राबर्ट के साथ आने वाली भीड़ और औरतों के झुड के साथ नही गई थी। वह झुझलाई-सी दिनेश के चेहरे की तरफ एकटक देखे जा रही थी। उसे दिनेश के माथे पर सुमेरु गाव के पास से बहती नदी लहराती दिखाई दे रही थी, और दिखाई दे रहा था जैसे नदी मे आई बाढ़ से, नदी के किनारे की दो नौकाएं औंधी होकर रेत मे धस गई है।

● ●

कुछ देर बाद ही, सरपंच के खेत के एक हिस्से के हरे-भरे मकई के पौधे बेरहमी से काटे जाने लगे और उनके स्थान पर गाढ़े पीले रग के वाटर-प्रूफ तम्बू गाड़े जाने लगे। एक तम्बू मात्र राबर्ट के लिए और दूसरा रहीम, सरकारी आदमी और साथ के दो अन्य सेवकों के लिए। तम्बुओं के पास ही, कई रगों की धारियों वाली, एक बड़ी-सी छतरी भी लग गई। छतरी के नीचे सज गईं दो फोल्डिग कुर्सियां और एक छोटा-सा टेबल। टेबल के अगल-बगल दो छोटी-छोटी तिपाइयां भी आ सजी। टेबल और तिपाइयों पर गाढ़े लाल रंग के चमकदार कवर भी बिछ गए और उनके ऊपर,

हवा से उड़ने से बचाने के लिए, छुरियों और कांटों से भरी कागज़ की बनी प्लेटें भी आ टिकीं। सारा प्रपंच इस तरह का रचा गया जैसे शहर के कुछ अय्याश लोग पहाड़ों पर पिकनिक मनाने आए हों और अब थोड़ी देर बाद ही टी० वी० पर कोला या कॉफी के विज्ञापन में या फिल्मों में दिखाया जाने वाला पॉप डांस बस शुरू ही होने जा रहा है।



राबर्ट ने बियर की बोतलों की पेटी खुलवाई और एक उफनता हुआ गिलास सरपंच की तरफ बढ़ाकर पूछा, "इदर इलाका में कौन-कौन जानवर हाय ?"

सरपंच को पहले तो अजीब लगा कि जब राबर्ट हिन्दुस्तानी बोल सकता था तो उसने आते ही अंग्रेज़ी में बातें क्यों की थी ? फिर समाधान भी उसने अपने आप ही निकाल लिया कि अंग्रेज़ी ऊंचे लोगों की भाषा है, उसके बिना बड़प्पन का इज़हार हो ही नहीं सकता। समाधान मिलते ही उसने बियर का गिलास लेकर गटागट पी लिया और लगभग एक दर्जन जानवरों के नाम गिना दिए, जिनमें भेड़-बकरियों और गाय-भैंसों के नाम भी शामिल थे।

"हू ऽऽऽ।" राबर्ट ने घूट-घूट करके खुद बियर पीनी शुरू की और रहीम को इशारा किया कि कुछ खाने के लिए भी लाए।

रहीम का इशारा पाते ही सेवक कुक ने एक बड़ा-सा डिब्बा खोला और दो बड़ी प्लेटों में सूखी मछली के साथ चमचमाते छुरी-कांटे और चमचे राबर्ट के सामने पेश कर दिए।

राबर्ट का इशारा पाते ही सरपंच भूखे बगुले की तरह मछली पर टूट पड़ा। खाते-खाते वह मछली के स्वाद की भी तारीफ करता जा रहा था और राबर्ट की भी। इस तारीफ में एक भद्दे ढंग का समर्पण था, पचतंत्र की कथाओं के चालाक सियार का खौसदार सूअर के सामने किए जाने वाले समर्पण जैसा समर्पण। लेकिन वह डर भी रहा था कि मछली का कोई कांटा उसके गले में न फंस जाए। एक बार राजधानी में मछली खाते वक्त ऐसा ही हुआ था जिससे सरकारी हस्पताल की शरण लेनी पड़ी थी।

रावर्ट की तीसरी बीयर खत्म हुई तो उसका पत्थर जैसा सख्त हाथ सरपंच के कंधे पर जा बिछा। अब रावर्ट अपने दिल की इच्छा सिर्फ अंग्रेज़ी में ही व्यक्त कर सकता था, सो उसने कहा, "विल यू सप्लाई अस यंग प्रिटी लैसिस ऑफ दिस एरिया ?"

सरपंच रावर्ट की भाषा नहीं समझा तो उसने याचना से भरी नज़रों से रहीम की तरफ देखा।

रहीम, जो थोड़ा हटकर खड़ा बोतल को ही मुंह से लगाकर घूट-घूट बियर पी रहा था, दो कदम आगे आया और रावर्ट के भाव में अपना भाव मिलाकर सरपंच को समझाने लगा, "साहब कह रहे हैं कि आपके इस इलाके की लड़कियां बहुत खूबसूरत हैं। खासकर उनका गठा हुआ जिस्म बहुत आकर्षित करता है। काले, अधखिले गुलाब के फूल की मानिन्द ताज़गी से भरा हुआ। आदमी तो उनके सामने केंचुए लगते हैं।"

सरपंच के नशे की गरमी से पैदा हुए पसीने से तर माथे पर मोटे-मोटे बल पड़ गए। उसके होंठ इस बार भी फैले, लेकिन इस बार उनके फैलाव में बनावटीपन था। उसे रावर्ट का भारी-भरकम शरीर एक पले हुए सांड जैसा लगा। उसे रावर्ट के शब्दों का मतलब बहुत घिनौना और शर्मनाक महसूस हुआ। तो क्या यह सुअर का बच्चा मुझे दलाल समझ रहा है ? उसका मन गहरी वितृष्णा से भर उठा। अपनी वितृष्णा का परिचय उसने इस बात से दिया कि वह तीसरी बार भरे गए गिलास में बची बियर को बिना पिए ही खड़ा हो गया और, "अच्छा साहब फिर मिलेंगे," बोलकर लड़खड़ाता हुआ घर की तरफ चल दिया।

रावर्ट सरपंच को झूम-झूमकर जाते बड़े गौर से देखता रहा। फिर अपने ही होंठों को अपने दांतों के बीच चबाकर वह रहीम से बोला, "टुम देखा ?···अम थाउज़ेण्ड किलोमीटर का जरनी करके इन डर्टी पिग्ज़ को बचाने आया। वट दीज़ डांकीज़···टुम देखा ? टुम देखा ?"

रहीम ने कोई जवाब नहीं दिया। वह जबड़े सख्त-नर्म करता रावर्ट के चर्बीले चेहरे की तरफ देखता रहा। उसे लगा, पूरे तीस साल कहीं गायब रहकर फिरंगी फिर इस देश पर अपना हक जता रहा है। उसे लगा कि रावर्ट ने इन भोले-भाले पहाड़ियों के साथ उसे भी सुअर और गधे की उपाधि दे दी है। उसका मन भी सरपंच की ही तरह वितृष्णा से भर उठा। पर एक क्षण के बाद ही उसके सामने खुले अपने देश के कुछ नेताओं



के चेहरे नाच उठे । बिलकुल रावर्ट जैसे ही चर्बीले और अय्याश चेहरे। उसने फिर वैसा ही निर्णय लिया, जैसा अक्सर ऐसे गैरत की चुनौती वाले क्षणों में वह लेता आया था, यही कि दुनिया की हर सरकार एक ही जैसी है। सरकार का मतलब है शोषण, सिर्फ शोषण। समझदार आदमी वही है जो अपना कम से कम शोषण होने दे और वह एक समझदार है। निर्णय लेते ही वह फिर अपनी उसी चापलूसी-भरी मानसिकता में लौट आया और आवाज में मिठास घोलकर बोला, "आप ठीक कह रहे हैं जनाव ! जो लोग अपनी रक्षा खुद न करके दूसरों के हाथों की तरफ देखते हैं, वे सुअर और गधे ही होते हैं। और सुअर और गधों के साथ आदमियों जैसा सलूक कतई नहीं किया जाना चाहिए। आप ठीक कह रहे है।"

रावर्ट को खुशी हुई कि अभी भी इस देश के खून में गद्दार खून की कमी नहीं आई है। लेकिन उसे दिनेश की चमकती हुई आखें और उसका गुम-सुम रहना ऐन इसी वक्त याद हो आया। शायद इसलिए कि गद्दार खून के साथ देश पर मर-मिटने वाले खून के किस्से भी उसने सुन रखे थे। सुने भी अंग्रेजों के ही मुख से थे, क्योंकि भारत को आज़ादी मिलते वक्त वह एक अंग्रेज़ फौजी के रूप में भारत में ही था और आज़ादी मिलने के एक वर्ष बाद ही भारत से गया था। उसने पेटी से निकालकर-एक बियर और खोलते हुए रहीम से अंग्रेज़ी में पूछा, "वो दाढ़ी वाला आदमी कौन था ?"

"कौन दाढ़ी वाला आदमी साहब ?" रहीम ने अंग्रेज़ी में ही सवाल किया।

"वो जो हमारे पहुंचने से पहले यहां के लोगों की भीड़ को भाषण दे रहा था ?"

"अच्छा वो ! हुज़ूर वो तो आपके स्वागत के लिए इकट्ठी हुई भीड़ को आपके आने की खबर सुना रहा था।"

"वह यहां का तो नहीं लगा। यहां क्या करता है ?"

"ये तो जनाव पता करके ही बताया जा सकता है। क्यों क्या कोई खास बात है ?"

"मुझे वह आदमी पागल भेड़िये जैसा लगा !"

"हां साहब, मुझे भी वह भेड़िया ही लगा था और उसके साथ खड़ी लड़की उसकी मादा भेड़िन। लेकिन साहब, सारी दुनिया के एक नामी-

करामी शिकारी के सामने इन भेड़ियों की क्या बिसात ?"

रहीम की इस तारीफ से राबर्ट आश्वस्त हो गया और उसने हुक्म दिया कि उसके हथियारों की पेटी उसके सामने लाई जाए।

पेटी सामने लाकर खोली गई तो उसमें से दूरबीन लगी राइफल निकालकर वह गांव के कच्चे मकानों और झोपड़ियों की तरफ निशाना साधने लगा। गांव के बीच से गुज़रते वक्त उसने दरवाज़ों की ओट में खड़े, चिथड़ों में लिपटे, काले-अधखिले गुलाब देखे थे। अब उसकी दूरबीन जहा तक जा सकती थी, नगे मकानों और झोपड़ियों के भीतर तक पहुंचकर उन्ही गुलाबों और उनकी महक की खोज कर रही थी।

● ●

दूसरे दिन लोग अभी बिस्तरो पर जमुहाइया ही ले रहे थे कि धाएं-धाएं के दो ज़ोरदार धमाकों ने पूरे गांव को चौंका दिया। बहुत से लोगों ने समझा, लो आदमखोर मारा गया। कुछ लोग तो उत्तेजना के मारे उठ भी खड़े हुए और देर से उठने की परम्परा को तोड़कर घरो से बाहर निकल आए।

बाहर आए लोग डा० दादा को साथ लेकर एक छोटे से झुण्ड के रूप मे शिकार किए जाने की जगह की खोज करने लगे। वे बरसाती नाले की गारों में भी घूमे और आसपास की खड्डों में भी, पर उन्हें कहीं कुछ दिखाई नही दिया। आखिर वे निराश होकर लौटने ही जा रहे थे कि सूखे पहाड़ की चोटी पर उन्हें राबर्ट खड़ा दिखाई दे गया।

हरी शिकारी वर्दी में राबर्ट गाढे हरे रग के झण्डे की तरह दिखाई दे रहा था और उसके हाथ मे पकड़ी हुई राइफल झुके हुए झण्डे के झुके हुए डण्डे की तरह लग रही थी। सिर पर रखी हैट ऐसे जान पड़ रही थी जैसे किसी शहीद हुए फौजी के टोप से झण्डे के ऊपरी सिरे को ढक दिया गया हो, जिस वजह से हवा लगने पर भी झण्डा लहराने मे पूरी तरह मे असमर्थ हो।

सब लोग तेज कदमों से पहाड़ी चढकर राबर्ट के पास पहुंच गए। पहुंचते ही सबको दिखाई दिया कि चोटी की दूसरी तरफ की ढलान पर

रावर्ट के साथी एक भारी-भरकम काले हिरन को घसीटकर ऊपर ल
की कोशिश मे लगे हैं। हिरन की टांगें किसी झाड़ी या पत्थरों की सं
मे फंस जाती है तो घसीटने वालों मे से एक झुंझलाकर उन्हें निकाल
है और गुस्से मे भरकर हिरन के पेट पर या पुट्ठे पर दो-चार ठुड्डे भी ज
देता है जैसे हिरन जान-बूझकर पैर फंसा रहा हो और वह उसे उसक
हिमाकत की सजा दे रहा हो।

हिरन को रावर्ट के सामने लाकर पटका गया तो पता चला कि वह
अभी पूरी तरह से मरा नहीं है। एक गोली उसकी जाघ पर लगी है और
दूसरी कान के चमड़े को छेदकर आरपार निकल गई है। गोली के जहर
मे उसका शरीर अकड गया है और आंखें स्थिर होकर आसमान की तरफ
घूर रही है। लेकिन फिर भी वह कभी-कभी सास टूटने की यातना से छट-
पटा उठता है और टागें छटकारने की कोशिश करता है। रावर्ट ने मरणा-
मन्न हिरन पर तरस खाया और एक गोली ठीक उसके माथे पर दागकर
उसे शान्त कर दिया।

यह वही सूखा पहाड़ था जिस पर दस-बारह साल पहले नाथूराम और
शिकारियों के बीच हत्याकाड हुआ था। रावर्ट के बेरहम रवैये को देख
डा० दादा के दिमाग में वह सारी घटना ताजा हो गई। घटना की याद आते
ही उनको खुद भी पता नही चला कि उनके अन्दर साहस कहा मे आ
गया। वह साथियों को चीरकर थोडा आगे बढ आए और रावर्ट से बोले,
"जनाव, यह हिरन तो नही मारा जाना चाहिए था! यह कस्तूरी मृग है
और इसके शिकार पर पाबन्दी है।"

रावर्ट दादा की बात सुनकर मुस्करा दिया और लाइटर से मुह का
सिगार सुलगाता हुआ इत्मिनान से बोला, "हम इसे ब्लैक टाइगर समझा।"

रावर्ट के झूठ ने डा० दादा को और गुस्सा दिला दिया। वे थोडा और
आगे बढ आए और अपनी आवाज की स्वाभाविक ठण्डक खोकर बोले,
"काला टाईगर तो इधर हिन्दुस्तान मे होता ही नही है। आप दुनिया के
मशहूर शिकारी हैं, इतना तो आपको पता होना चाहिए!"

दादा का सत्य सुनकर रावर्ट का चेहरा पीला पड़ गया। उसे लगा
कि यह पागल बूढा उस पर आक्रमण कर सकता है। उसने सावधान की
मुद्रा मे राइफल संभाल ली और गर्दन अकड़ाकर बोला, "बौत होता!
हाम इदर फाइव ब्लैक टाइगर हण्ट किया। टुम का मालुम।"

दादा ने राबर्ट का सफेद झूठ सुनकर घृणा से पीठ फिरा ली। इससे ज्यादा वे कुछ कर भी नहीं सकते थे। वर्षों से जिस सड़ियल माहौल में वे पल रहे थे उसमें यह भी काफी था। साथी दादा के साहस से गद्गद हो गए और परेशान दादा के इर्द-गिर्द घेरा बनाकर कानाफूसी करने लगे। जैसे किसी गूंगी भाषा में कोई गूंगी योजना तैयार कर रहे हों।

इधर राबर्ट का इशारा पाते ही, पेड़ से एक मोटी-सी लकड़ी काटकर साफ की गई। हिरन के चारों खुर उस लकड़ी पर बांध दिए गए। सब ठीक हो जाने के बाद राबर्ट ने जेब से पांच रुपये का चमकता हुआ नोट निकाला और कानाफूसी कर रहे लोगों को दिखाकर बोला, "इन जानवर को ले जाना मांगता?"

लोग कानाफूसी बन्द करके पहले दादा के चेहरे की तरफ देखने लगे। फिर दो आदमी, जो चेहरों से कुपोषण का शिकार दिखाई दे रहे थे, दादा से आंखें चुराकर बंधे हुए हिरन के पास जाकर खड़े हो गए। देखते ही देखते दो दूसरे आदमी भी उनके साथ हो लिए। पल-भर में ही दादा के तमाम साथियों में हिरन उठाकर ले चलने की मजदूरी के लिए होड़ मच गई और सब के सब अपना-अपना हक जताने के लिए एक दूसरे पर कांय-कांय करने लगे। उन्हें पता है कि पांच रुपये में पूरा साढ़े तीन किलो मकई का आटा आ सकता है, और यह उनके लिए छोटी बात नहीं है।

राबर्ट ने खुद दखल देकर इन भूखे लोगों की भूख के संघर्ष को खत्म किया। उसने चार हट्टे-कट्टे आदमियों को छांटकर बाकी को हटा दिया। छांटे हुए आदिवासियों के कन्धे हिरन को तम्बुओं तक ले जाने के लिए काफी मजबूत थे। लेकिन हटाए गए लोग भी इस आशा में, कि शायद रास्ते में कहीं उनकी जरूरत पड़ जाए, शिकारी काफिले के पीछे-पीछे चल दिए।

बचे रह गए अकेले डा० दादा, अपमानित, परास्त और निहत्थे। इस वक्त उन्हें अगर धरती फटकर देवी सीता की तरह आमंत्रित करती, तो शायद वे भी उसमें समा जाने के लिए तनिक भी विलम्ब न करते।

तम्बुओं में पहुंचने के तुरन्त बाद हिरन खाल खिंचकर और पेट साफ होकर, समूचा का समूचा एक घूमने वाली फिरकनी पर टंगकर तेज़ आंच पर भूना जाने लगा। इधर रावर्ट और उसके साथी छतरी के नीचे लगे टेबल पर क़ासिमी स्कॉच की बोतलें खोलकर उसे खाने और हज़म करने के सामान का बन्दोबस्त करने लगे।

दमकड़ी गांव के कुछ बेकार बूढ़े इस तमाशे को हैरत-भरी निगाहों से देख रहे हैं। सूरज और रूपा के साथ बहुत से दूसरे बच्चों की भीड़ भी इन बूढ़ों के साथ आ जुटी है। सरपंच इस समूचे ताम-झाम पर सरसरी नज़र डालकर सुमेरू की तरफ चला गया है। उसने सारी खबर रायसाहब तथा ओझा तक पहुंचानी है। यह उसकी नैतिक ज़िम्मेदारी है।

बूढ़ों में से एक बूढ़े ने दबी-दबी-सी आवाज़ में साथ के बूढ़े से कहा, "सरकार को पता चलेगा तो इस फिरंगी शिकारी को भी जगतू राम की तरह एक हज़ार रुपये जुर्माना और एक साल की सख्त कैद की सज़ा मिलेगी।" पर साथ वाले ने उसकी समझ को फटकारा, "पागल तो नहीं हो गए हो क्या? यही तो सरकार है, इसे कैद कौन कर सकता है! ये ही तो सब को कैद करती है। गांधीजी और जवाहरजी को इसी ने तो कैद किया था।" दूसरे की बात सुनते ही तीसरे ने दखल दिया, "लो जी, इसे सरकार कहता है। सरकार तो सिर पर सफेद टोपी रखती है, जैसे बड़े रायसाहब रखते हैं। इसको इतना भी नहीं पता।" पहले ने इस तीसरे की जानकारी में इज़ाफा किया, "नहीं, अब सरकार सिर पर काली टोपी या हरा रूमाल भी रखती है। पेड़ों पर लगी तसवीरों में तुमने नहीं देखा क्या?" तीसरे ने बात खत्म करने की गरज से स्वीकार कर लिया, क्योंकि अब बच्चे भी उनकी बातचीत में रुचि लेने लगे थे और बात रायसाहब तक पहुंच जाने का अन्देशा था, "तुम ठीक कह रहे हो, हर सरकार किसी न किसी रंग की टोपी रखती है। जैसे पुराने ज़माने की सरकार मुकुट या ताज रखती थी। इस अंग्रेज़ शिकारी के सिर पर भी खाकी टोपी है, इसलिए यह भी सरकार ही होनी चाहिए! तुम्हारा विचार सही है, इस सरकार को सज़ा नहीं दी जा सकती।"

इसी दौरान सुबह के घरेलू कामों से निवटकर कुछ किशोरियां भी

बूढ़ों और बच्चों के बीच आ मिली और रावर्ट तथा उसके साथियों को मजे ले-लेकर खाते-पीते देखने लगी।

रावर्ट ने उंगली के इशारे से एक बच्चे को अपने पास बुलाया। बच्चा झिझकता-सिमटता उसके पास पहुंच गया। उसने गोश्त का एक छोटा-सा टुकड़ा बच्चे के हाथों मे थमा दिया और बोला, "खाना सकता !"

बच्चा टुकड़ा लेकर अपने साथियों के बीच पहुंच गया। बूढ़ों और लड़कियों ने उसके हाथ में पकड़े टुकड़े को हसरत-भरी निगाहों से देखा। बच्चा एक तरफ खड़ा होकर उस टुकड़े को थोड़ा-थोड़ा कुतरकर खाने लगा, साथ ही चौकसी भी बरतने लगा कि कोई झपट्टा मारकर उसका टुकड़ा छीन न ले।

इसके बाद रावर्ट ने लड़कियों के झुण्ड में से ज्यादा जवान और खूबसूरत दिखाई देने वाली लड़की को इशारा करके बुलाया। सब लड़कियों ने अपनी-अपनी छाती पर हाथ रखकर समझना चाहा कि वह किसे बुला रहा है। जब बुलाई गई लड़की ने हाथ रखा तो रावर्ट ने मुस्कराकर स्वीकारात्मक गर्दन हिला दी और हाथ के इशारे से कहा, "हां, तुम ही चली आओ।"

लड़की सिकुड़ती-सकुचाती और अपनी फटी-पुरानी धोती में बड़ी मुश्किल से अपने वक्ष को छुपाती रावर्ट के पास पहुंच गई और गर्दन झुकाकर उसकी बगल में खड़ी हो गई।

लड़की के यौवन की सुगन्ध बिलकुल पास से सूंघकर रावर्ट की आंखें भूखे भेड़िए की आंखों की तरह चमकने लगी। उसने गोश्त का एक बड़ा-सा टुकड़ा लड़की की तरफ बढ़ा दिया। लड़की ने हड़बड़ाकर टुकड़े को पकड़ना चाहा पर रावर्ट ने एक भद्दी नजाकत के साथ परे हटा लिया। दूर खड़े बच्चे रावर्ट की इस हरकत पर खिलखिलाकर हंस पड़े। बच्चों को मजा लेते देख नशे में खोए रावर्ट ने लड़की के साथ ऐसा तीन-चार बार किया। लड़की हलकान होकर जब लौटने को तैयार हुई तो उसने टुकड़ा लड़की को थमा दिया और उसकी कमर पर जलता हुआ हाथ रखकर उसे समझाया, "आगर रात को आएगा टब हम टुम का बहुत बरी-बरी चीज प्रेजेण्ट देगा !"

लड़की गोश्त लेकर अपनी साथिनों में न पहुंचकर सीधी घर को

चली गई। रावर्ट की नजरें घर तक उसका पीछा करती रहीं। उसका घर बिलकुल सामने ही था, कतार के पहले घर को छोड़कर दूसरा।

लड़की के जाने के थोड़ी देर वाद ही उससे भी कुछ बड़ी लड़कियां सकुचाती-शरमाती बच्चों के उस झुण्ड में आ मिलीं और प्रतीक्षा करने लगीं कि शिकारी गोमा की तरह उन्हें भी बुलाए और गोश्त का टुकड़ा घर ले जाने के लिए दे ताकि उनके घर भी आज शाम हिरन का गोश्त बने।

इधर रावर्ट ने भी जब बच्चों के झुण्ड में पहली लड़की से भी कई गुना ज्यादा जवान और खूबसूरत लड़कियों को सम्मिलित होते देखा तो उसकी खुशी का ठिकाना न रहा। उसने हिरन की देह से बड़े-बड़े टुकड़े कटवाकर अपने सामने की प्लेटों मे रखवा लिए और जांच करने लगा कि सबसे ज्यादा सुन्दर लड़की कौन-सी है ताकि इशारा करके वह उसे बुलाए। आखिर एक लड़की को उसने चुन लिया। उसने उस लड़की को इशारा करने के लिए हाथ ऊपर उठाया ही था कि उसकी नजर अपनी ही तरफ आते डा० दादा पर पड़ गई। दादा को देखते ही रावर्ट का चेहरा पीला पड़ गया और उसका हाथ दूसरे हाथ को मसलने लगा—"दिस ब्लडीफूल विल स्पॉयल दि होल ब्रॉथ।"

डा० दादा ने पहले लड़कियों, बच्चों और बूढों को डपटकर वहां से भगाया फिर रावर्ट के पास पहुंचकर वे शिकायत-भरे लहजे मे बोले, "आपको दिन मे ही यहां इस तरह सरेआम शराब नही उड़ानी चाहिए। आप देख नही रहे हैं कि इन मासूम बच्चों और लड़कियो पर इसका बुरा असर पड़ रहा होगा। आप इस देश मे आए हैं, कम से कम इस देश की सभ्यता और संस्कृति के बारे मे तो कुछ सीखकर आते!"

फटकार सुनकर रावर्ट अपनी हाथी जैसी छोटी आंखों से डा० दादा को घूरने लगा। यह सब उसके लिए बिलकुल अप्रत्याशित था, दूसरे, वह अपने मन के पाप की वजह से 'गिल्टी कॉन्शियस' भी था। उसकी समझ मे एकदम कुछ नही आया। बस उसने यही किया कि ह्विस्की का गिलास लवालव भरकर डा० दादा के सामने कर दिया, "टेक इट! फास का ओल्डेस्ट स्कॉच हाय। सीधा इंग्लैंड से आया। इण्डिया मे बिलकुल नाई मिल सकता। टेक इट! टेकइट!!"

डा० दादा ने, "नही मैं शराब नहीं पीता," कहकर रावर्ट की स्कॉच

की भेंट ठुकरा दी, "अगर आप लोग सरकार की तरफ से इस इलाके के आदमखोर जानवर मारने आए है तो आपको जंगल के सरकारी आराम घर मे ठहरना चाहिए, इस तरह तम्बू तानकर गांव के पास के उपजाऊ खेतों मे नहीं !"

डा० दादा की नई फटकार सुनकर राबर्ट का चेहरा लाल हो गया, पर उसने अपने आप पर काबू रखा और संयमित आवाज़ में ही तर्क करके डा० दादा को समझाने लगा, "देको ! मैन ईटर मैन का शिकार करने इदर होगा, जंगल में रेस्ट हाउस में नाईं होगा। आम इदर उसको शिकार करेगा, समजा ?"

"लेकिन आप लोगों को यहां शरीफ आदमियों की तरह रहना चाहिए। हमारी यह बस्ती शरीफ लोगों की बस्ती है, कोई रण्डी खाना नहीं है।" बोलते-बोलते डा० दादा की सांस फूल आई, जैसे उन्होंने जबान से नहीं बल्कि अपने बूढ़े शरीर से बोलने का काम लिया हो।

जब राबर्ट ने उनकी बात का कोई जवाब नहीं दिया तो वे रहीम और बाकी लोगों के चेहरे पर हिकारत की नज़र फेंककर चल दिए।

दादा के यहां से हिलते ही राबर्ट को ऐसा गुस्सा आया कि उसने राइफल उठाकर एक गोली उड़ते पक्षी पर दाग दी।

गोली की आवाज़ सुनकर डा० दादा ने मुड़कर देखा तो राबर्ट उन्हें बायां हाथ कमर पर रखकर खड़ा दिखाई दिया। उन्हें लगा—राबर्ट ने अपनी वहशी ख्वाहिशों को गोली मारी है और मरती हुई ख्वाहिशों की चीख घाटियों में गूंज रही है।

● ●

दूसरे दिन सूरज निकलने से पहले ही डा० दादा दिनेश के पास पहुंचे और दिनेश को कुछ लिखने में तल्लीन पाकर बहुत खुश हुए। पता चला कि दिनेश ने अपना प्रस्तावित उपन्यास शुरू कर दिया है और नाम रखा है—जंगल के आसपास।

दादा ने छूटते ही दिनेश से पूछ लिया, "जंगल के आसपास क्यों, जंगल के बीच क्यों नहीं ?"

दिनेश ने अभी नामकरण को लेकर बहुत ज्यादा नहीं सोचा था। उसे सिगरेट की तलब महसूस हुई। सिगरेट सुलगाकर दो-तीन गहरे कश खींचे और फिर वह बोला—"दरअसल जंगल इसमें प्रतीक है।...आज के जंगल तंत्र या व्यवस्था का।" साधारण आदमी की ज़िन्दगी उसमे शरीक नहीं है।...वह आसपास रहकर उसकी भयंकरता और बर्बरता को झेलने के लिए मजबूर है।" इसी बात को ध्यान मे रखकर मैंने बीच की बजाय आसपास शब्द को ज्यादा सही माना है।"

"समझ गया, हम सब लोग जंगल के आसपास रहते हैं, बीच तो जानवर रहते हैं। तुम आदमियों पर उपन्यास लिख रहे हो जानवरों पर नहीं। इसीलिए तुमने जंगल के आसपास नाम रखा है।"

दादा द्वारा बात को इस तरह बहुत सरल बनाकर लेना दिनेश को अच्छा नहीं लगा। उसका खयाल था कि दादा तंत्र या व्यवस्था शब्दों को लेकर कोई महत्त्वपूर्ण बहस शुरू करेंगे। उसने अपनी निराशा को प्रकट भी कर दिया, "मुझे यह समझ नहीं आता दादा कि हम लोग व्यवस्था की असलियत से इतने बेखबर क्यों है और उसके बारे में कुछ भी जानने और समझने से क्यों कतराते है!"

डा० दादा दिनेश के दर्द को समझ गए। पर इस वक्त उनके पास दिनेश की तकलीफ से भी बढ़कर कोई तकलीफ थी। उस तकलीफ से छुटकारा पाना उनके लिए बहुत जरूरी था। सारी रात वे उस तकलीफ से ही लड़ते रहे थे। उन्होंने दिनेश के लेखन और शुरू होने जा रही इस बहस को बीच में ही रुकवाकर आग्रहपूर्वक दिनेश को तैयार होने के लिए कहा और तैयार होते ही श्यामा के घर की तरफ ले चले।

रास्ते में दादा ने राबर्ट के चरित्र को लेकर अपनी परेशानी पर रोशनी डाली और बताया कि वह आदमखोर जानवरों से यहां के लोगों की क्या रक्षा करेगा, वह तो खुद एक बहुत ही खतरनाक किसम का आदमखोर है।

दिनेश को बात ज्यादा स्पष्ट नहीं हुई तो दादा ने कल की काले टाइगर के बहाने कस्तूरी हिरन मारने और गांव की भोली-भाली लड़कियों को फुसलाने की सारी कहानी कह सुनाई। साथ ही यह भी कह सुनाया कि गई रात उसने किस प्रकार नशे में धुत्त होकर बिलबा के घर के दरवाज़े पटपटाये। जब किसी ने नहीं खोले तो उन्हें तोड़कर अन्दर घुस गया और

वितवा की छोटी बेटी गोमा के साथ… ?

सुनते ही दिनेश के दांत भिच गए। उसने उबलते हुए कण्ठ से सवाल किया, "क्यों गोमा का बाप नहीं था घर में ?"

"बाप तो था लेकिन उस भैंसे के सामने वह अकेला क्या करता। इस भैंसे के पास अपने पक्ष में तर्क भी था कि गोमा ने गोश्त के टुकड़े के बदले उसके तम्बू में आने का वादा किया था, उसकी वादाखिलाफी की सजा उसको देने आया हूं। और साथ ही उसके पास हथियार था। हथियार के बल पर वह गोमा को अपने तम्बू में ले गया और वहीं…"

"और गांव के दूसरे लोग ?"

"सब दरवाजे बन्द करके अपने-अपने घर में कैद हो गए थे। जिसने भी शोर-शराबा सुना, यही समझा कि आज फिर आदमखोर दमकड़ी की तरफ निकल आया है। तुम्हें पता ही है कि रात को आदमखोर के डर से कौन घर से निकलने की हिम्मत करता है। मेरा दवाईखाना बहुत दूर है, बिलकुल अलग-थलग, एक किनारे, वहां तक तो कोई आवाज ही नहीं पहुंचती। नहीं तो शायद…"

"नहीं तो शायद क्या ?" दिनेश के नथुने फड़क उठे।

"अब मैं तुम्हें क्या बताऊं। दिल करता है उस सांड के बच्चे को पकड़कर पेड़ से बांध दू और सारे गांव के सामने गर्म लोहे से उसके…"

"तो फिर छोड़ो डा० दादा, हम बंगालिन मां के पास जाकर क्या करेंगे, मुझे राबर्ट के पास ले चलो।"

"क्यों राबर्ट के पास जाकर क्या करोगे ?"

"यह तो वहीं जाकर बताऊंगा, क्या करूंगा। आओ वापस चलो, इसी वक्त !" दिनेश ने डा० दादा की कलाई पकड़ ली।

दादा को दिनेश की पकड़ बहुत मजबूत लगी। लगा कि उसके इरादे भी इतने ही मजबूत होंगे। पर उनके अनुभवी मन ने मना किया तो उन्होंने दिनेश के हाथ से कलाई छुड़ा ली, "इस तरह भावुकता में आकर ऐसी समस्याओं के हल नहीं ढूंढ़े जा सकते। और फिर राबर्ट एक थोड़े ही है इस इलाके में। तुम अकेले किस-किस राबर्ट के साथ लड़ोगे ?"

"जो-जो सामने पड़ेगा, सब के साथ लड़ूंगा। डा० दादा, मैं यहां के लोगों की तरह भेड़-बकरी नहीं हूं।"

"माना कि तुम भेड़-बकरी नहीं हो, लेकिन सवाल है कि किस चीज

से लड़ोगे ?"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यह कि तुम्हारे पास कौन-सी शक्ति है जिसके सहारे तुम लड़ोगे ?"

"आत्मविश्वास।"

"नहीं, अकेला आत्मविश्वास यहां कुछ नहीं कर सकता। यह कोई नौटंकी नहीं है जहां एक हीरो को बीस-बीस हथियार बन्द दुश्मनों से मुकाबला करते दिखाया जाता है और अन्त में जीत भी हीरो की ही होती है। वास्तविकता यह है कि अगर रावर्ट ने तुम पर गोली चला दी तो तुम्हें पहचानने वाला भी इस पूरे इलाके में एक भी आदमी नहीं निकलेगा। तुम्हारा महकमा पूछेगा तो बता दिया जाएगा कि तुम आदमखोर का शिकार हो गए। फिर तुम्हें ढूंढ़ने की भी जरूरत महसूस नहीं की जाएगी।"

"उफ, कितनी यातनापूर्ण स्थिति है।" दिनेश के दोनों हाथ उसके माथे पर पहुंच गए और वह सच्चाई की क्रूर आग से झुलसकर तिलमिला उठा।

डा० दादा ने आगे बढ़कर हाथ उसकी पीठ पर रख दिया, "जोश बहुत अच्छी चीज है, क्योंकि उसके बिना जवानी बुढ़ापा हो जाती है, लेकिन जोश के साथ होश का होना भी बहुत जरूरी होता है। होश के बिना जोश सिर्फ मूर्खता बनकर रह जाता है।

"मुझे मुआफ करना डा० दादा, मैं सचमुच में भावुक हो उठा था। आपने ठीक कहा है कि यह लड़ाई फिल्मी लड़ाई नहीं है, जिन्दगी के यथार्थ की लड़ाई है। इसे लड़ने के लिए मुझे और भी बहुत से लोगों को साथ लेना होगा। यथार्थ अकेले आदमी के ढोने की चीज नहीं है, इसके लिए जनशक्ति चाहिए, बहुत बड़े संगठन की शक्ति।"

दिनेश का यह रवैया डा० दादा को बहुत अच्छा लगा। अब दोनों के पैर बंगालिन मां के घर की तरफ बढ़ चले। चलते-चलते दोनों ने जनता को जागृत करने के तरीकों के बारे में विस्तार से विचार-विमर्श किया। दिनेश को लोक-नृत्य करियाला के माध्यम से लोगों में जागृति पैदा करने की सलाह बहुत पसन्द आई। निर्णय हुआ कि कल ही करियाला के लिए जरूरी सामान खरीदने दोनों शहर जाएंगे। दिनेश अपनी पहले महीने की

तनखा भी डी० ई० ओ० के दफ्तर से प्राप्त कर लेगा और साथ ही राजधानी के कुछ राजनेताओं से भी मुलाकात हो जाएगी।

● ●

बंगालिन मां, श्यामा और शैल ने भी जब करियाला को नया रूप देकर उसके माध्यम से जन-जागरण की स्कीम सुनी तो उन्हें भी बहुत प्रसन्नता हुई। श्यामा ने तो जरूरत पड़ने पर नारी पात्रों का अभिनय करने की भी हामी भर दी। कलकत्ता के स्कूल में उसने एक-दो बार अंग्रेज़ी के बाल नाटकों में भाग लिया था। कुछ इनाम भी हासिल किए थे। करियाला में लोक-नृत्य के साथ छोटे-छोटे खुले एकांकियों के समावेश की योजना उसे बहुत पसन्द आई।

पर बंगालिन मां ने एक आशंका भी जाहिर की। वह यह कि, "जब रायसाहब और ओझा को पता चलेगा कि सब तामझाम उन्हीं के मुखौटे उतारने के लिए किया जा रहा है, तो क्या वे लोग हरकत में नहीं आएंगे? और उनके हरकत में आने का मतलब इतना सरल नहीं है जितना कि समझा जा रहा है।"

—डा० दादा ने बंगालिन मां को समझाया, "जब लोगों में जागृति पैदा करने का इतना बड़ा बीड़ा हाथ में लिया जाना है तो इस तरह के खतरे तो मोल लेने ही पड़ेंगे!"

श्यामा ने भी डा० दादा के साथ सहमति जाहिर की।

अन्ततः दिनेश ने अपना नया विचार रखा, "कल राजधानी जा ही रहे हैं, वहां किसी ऐसी पार्टी के दफ्तर के साथ संपर्क स्थापित किया जाए जो गरीब लोगों के हकों के लिए लड़ी जाने वाली लड़ाइयों को सक्रिय सहयोग देना अपना कर्तव्य समझती हो। इसके अलावा गाहे-बगाहे ऐसी पार्टियों के अपने समाचारपत्रों और पत्रिकाओं में भी इस पिछड़े इलाके की दशा पर रिपोर्टें छपनी चाहिएं जिससे केन्द्रीय सरकार का भी इस ओर ध्यान आकर्षित किया जा सके।"

दिनेश के इन दोनों सुझावों की मुक्त कंठ से प्रशंसा की गई। डा० दादा ने भी इस बात को माना कि राजनैतिक प्रभाव की सहायता के

बिना किसी भी प्रकार के ठोस परिवर्तन की कल्पना करना सचाई से दूर भागना है।

दिनेश ने भी स्वीकार किया कि साहित्य और कला सामाजिक परिवर्तन की भूमिका तो तैयार कर सकते हैं लेकिन वास्तविक परिवर्तन राजनैतिक क्षमताओं के आधार पर ही लाया जा सकता है। और भारत जैसे देशों में, जहां प्रजातंत्र शासन प्रणाली प्रचलित है वहां जनता को सचेत और जागरूक करके ही राजनैतिक क्षमताओं को हासिल किया जा सकता है, कोरे विप्लववाद से नहीं।

निर्णय लिया गया कि कल श्यामा और शील भी दिनेश और दादा के साथ राजधानी जाएंगे। दिनेश की तनखा के पैसे सबसे पहले प्राप्त किए जाएंगे और करियाला के लिए कुछ नया सामान खरीदने, किसी पार्टी के दफ्तर में जाने और किसी मंत्री और किसी समाचार पत्र के सपादक के साथ मुलाकात करने जैसे महत्त्वपूर्ण काम समय और सुविधा को देखते हुए बाद में किए जाएंगे।

● ●

पहरुआ गाव से लौटते हुए डा० दादा और दिनेश दोनों ही बहुत खुश थे। उन्हें लग रहा था कि अब वह वक्त दूर नहीं है जब जंगल के आसपास का पूरा इलाका आदमखोरों के आतंक से मुक्त होगा। लोगों के अन्दर जन-शक्ति को लेकर भरोसा जागेगा और वे संगठन तथा आत्म-विश्वास के बल पर अपने हर तरह के शोषण तथा जानवरी जिन्दगी जीने की मजबूरी से छुटकारा हासिल करेंगे।

दोनों दमकडी गाव के पास की ढलानों पर और दो पहाड़ियों के बीच की समतल धरती पर बनी छोटी-छोटी खतैलियों के पास से गुजरने लगे तो डा० दादा की निगाह अपनी क्यारियों में से खर-पतवार निकाल रहे बाकर के परिवार पर जा पड़ी। उन्होंने क्षण-भर के लिए ठिठककर चुटकी ली, "इस तरह सुबह से शाम तक खेतो में पसीना बहाने का क्या फायदा बाकर, जब कि आज नहीं तो कल सबको आदमखोर का शिकार तो होना है !"

वाकर ने आवाज़ सुनकर मुंह ऊपर उठा लिया और निराने का काम बीच में छोड़ उतनी ही ऊंची आवाज़ में जवाब दिया, "डाक्टर दादा, क्या कह रहे हो, कुछ समझा नहीं।"

डा० दादा ने अपनी बात फिर दुहरा दी और रास्ता छोड़ दिनेश को साथ ले पगडंडी पर बाकर की क्यारियों की तरफ उतरने लगे।

डा० दादा को दिनेश के साथ अपनी ओर उतरा देख बाकर खड़ा हो गया। पिता को काम से अलग होता देख सगुआ और देवा भी खड़े हो गए। चन्देरी भी खुरपा सिर के साथ सटाकर तनिक विश्राम करने की मुद्रा में घुटने खोलकर बैठ गई। अपनी-अपनी खतैलियों में काम कर रहे दूसरे लोग भी थोड़े चौकन्ने हो गए।

डा० दादा पानी से भरी जलकूप के किनारे पर संभल कर चलने लगे। पर दिनेश को फिसलन के कारण काफी दिक्कत पेश आई। कूल वाला हिस्सा लांघने के बाद डा०.दादा चलते-चलते दिनेश को समझाने लगे, "यह वही कूल है, जिसका पानी जब ऊपर से काटकर राय साहब की घाटी वाली जमीन की तरफ मोड दिया जाता है, तब दमकड़ी और कई छोटे-छोटे दूसरे गांवों के सारे खेत प्यास के मारे सूखकर सगर होने लगते हैं। कृषकों की बौराई फसलें तबाह होने लगती हैं और पीने के पानी की भी भारी किल्लत हो जाती है। ऐसा साल मे एकाध बार जरूर होता है, ताकि लोगों को अपनी रीढ़ की हड्डी रायसाहब की मुट्ठी मे होने का एहसास रहे और कोई भी उनके सामने सिर उठाने की जुर्रत न करे।"

पास पहुंचते-ही बाकर ने दादा से पूछा, "मैं तो सोच रहा था कि आप ओझा के पास गए होगे?"

"क्यों, ओझा के पास किसलिए?"

"वही गोमा के साथ हुए कुकर्म को लेकर।"

"नही, मैं तो मास्टरजी के साथ था।" डा० दादा ने जूतियों पर लग आए कीचड़ को पत्थरों पर रगड़ कर साफ करते हुए दिनेश की तरफ घूरा। दिनेश समझ गया कि यहां भी दादा बगालिन मा के यहां जाने के विषय में नही बताना चाहते।

बाकर ने मुह बिचका लिया, "तो फिर समझो कि बात आई-गई हो गई।"

इसी समय डा० दादा की पीठ पीछे चदेरी व
रहे हैं, इससे बहू-बेटियों की इज्जत बचाना
इसके रायसाहब या ओझा को बीच में घसीटने
हुए लोगों को।"

चदेरी की लताड़ सुनकर डा० दादा खेत
करगी पत्थरों से बनी मेड़ पर बैठ गए। वा
उनके साथ जम गए। पर दिनेश और चदेरी

जब डा० दादा ने कोई जवाब नहीं दिया
उन्मुख हुई, "देखो मास्टरजी! एक तो
गई, अब दूसरे रायसाहब और ओझा के
खिलाफ जलाने का पलीता बना रहे हैं ये म-
र्द।"

ही खोल सकती अग्निपरीक्षा के डर से।"

"यहां इस तरह की राक्षसी बातें होती ही कहां हैं," चंदेरी बोली, "जो भी होती है नीचे से आने वाले परदेसियों के हाथों होती हैं। करने वाले या तो नीचे के शिकारी होते है या रायसाहब के कारिन्दे और इनसे भी सब कुछ वह रण्डी दारू करवाती है।"

"हां ऽऽऽ, दारू बहुत बुरी चीज है। यह सब शिकारी से दारू ने ही करवाया है। नही तो शिकारी बहुत भला आदमी है।" बहुत देर खामोश रहकर सब सुनने-गुनने के बाद सगुआ ने बहुत सोच-समझकर अपने मन की बात कही।

"हां ऽऽऽ, सगुआ बिलकुल ठीक कहता है। दारू पीने वाले पर फौरन डाकनी सवार हो जाती है। वही यह सब कुछ करवाती है। इसमें शिकारी-विकारी कोई कुछ नही कर सकता।" सगुआ को बोलता देख देवा ने भी अपनी जानकारी सबके सामने रखी।

डा० दादा इन दोनों की तरफ ध्यान न देकर अपना रुख प्रकट करने लगे, "औरत के साथ ज्यादती होने के बारे मे बनाया गया यह कानून तो सरासर नाइंसाफी है। लेकिन क्या किया जा सकता है। पुरखों के काल से ही यही होता आ रहा है। लोग इसमें दिल और दिमाग से रमे हुए हैं।"

डा० दादा की यह पस्त बात दिनेश को पसन्द नही आई। वह थोड़ा झुंझलाया, "आपको तो ऐसी बात नही करनी चाहिए डा० दादा! अगर पुरखों ने कोई गलत परम्परा डाल दी है तो हमें उसका अंधानुकरण करने की बजाए उसमें सुधार लाने की कोशिश करनी चाहिए। दूसरे, पुरखों के जमाने में जो बातें फायदेमंद थी यह जरूरी थोड़े ही है कि वे आज भी फायदेमंद हों। जो बातें फायदेमंद न होकर नुकसान देने वाली साबित हो रही हैं, उनको भी बुजुर्गों के नाम पर बन्दरी के मरे हुए बच्चे की तरह छाती से चिपकाए रखे रहने मे क्या तुक है? इधर जमाना चांद तक पहुंच गया है और आप हैं कि इन बाबा आदम के जमाने के जानवरी सवालों की पैरवी कर रहे हैं।"

'पैरवी न करूं तो और क्या करूं? इस सबको सिर झुकाकर मानने के अलावा ये लोग कर ही क्या सकते हैं?"

'क्या नहीं कर सकते? ये लोग अदालत में जा सकते है।"

इसी समय डा० दादा की पीठ पीछे चंदेरी कड़क उठी, "तुम लोग मर्द हो, अपनी बहू-बेटियों की इज्जत बचाना तुम लोगों का धर्म है, इनमें रायसाहब या ओझा को बीच में घसीटने की जरूरत क्या पड़ गई तुम लोगों को।"

चंदेरी की लताड़ सुनकर डा० दादा खेत को दूसरे खेत से अलग करती पत्थरों से बनी मेढ़ पर बैठ गए। वाकर, देवा और सगुआ भी उनके साथ जम गए। पर दिनेश और चंदेरी खड़े रहे।

जब डा० दादा ने कोई जवाब नहीं दिया तो चन्देरी दिनेश की तरफ उन्मुख हुई, "देखो मास्टरजी! एक तो उस मासूम लड़की की इज्जत गई, अब दूसरे रायसाहब और ओझा के पास पहुंचकर उसको आग में ज़िन्दा जलाने का वसीला बना रहे हैं ये मर्द लोग। है न सरासर पाप-कर्म।"

दिनेश को चन्देरी की बात समझ नहीं आई। उसने बच्चों की तरह सवाल कर लिया, "रायसाहब और ओझा इस इलाके की निर्णायक ताक्तें हैं, उनके पास शिकायत करने का लड़की को ज़िन्दा आग में जलाने का वसीला करने से क्या संबंध है, यह बात मेरी समझ में नहीं आई?"

"मैं समझाता हूं।" चंदेरी के माथे पर हैरत के बल पड़े देख डा० दादा ने अपनी मुट्ठी चंदेरी की तरफ खोलकर उसे कुछ भी न बोलने का संकेत किया, "जिस लड़की या औरत की इज्जत लुट जाती है, अगर वह शिकायत ओझा या रायसाहब के पास पहुंचाए तो पहले उस लड़की या औरत को अग्नि-परीक्षा देनी होती है, अपनी शिकायत की सचाई को साबित करने के लिए। अग्नि-परीक्षा में खरी उतर आने पर इज्जत लूटने वाले को वह हर्जाना देना होता है, जो औरत, उसके माता-पिता या उसका पति मांग करे। अंत में हर्जाने की राशि का फैसला ओझा करता है। यही इस इलाके के ओझा का बनाया हुआ धार्मिक दस्तूर है और यह दस्तूर आदि जातियों के सभी कबीलों पर लागू होता है।"

"कमाल है। इसमें औरत के लिए अग्नि-परीक्षा किस बात की? औरत का तो इतना कह देना मात्र ही अग्नि-परीक्षा से कम नहीं है कि उसकी इज्जत लुट गई है। अजीब धार्मिक दस्तूर हैं आपके इस इलाके के। इसका मतलब तो यह हुआ कि इस इलाके में कोई भी आदिवासी औरत मर्द द्वारा अपने पर किए गए अत्याचार को लेकर जबान तक

नही खोल सकती अग्निपरीक्षा के डर से।"

"यहां इस तरह की राक्षसी बातें होती ही कहां है," चदेरी बोली, "जो भी होती है नीचे से आने वाले परदेसियों के हाथों होती है। करने वाले या तो नीचे के शिकारी होते है या रायसाहब के कारिन्दे और इनसे भी सब कुछ वह रण्डी दारू करवाती है।"

"हां ऽऽऽ, दारू बहुत बुरी चीज है। यह सब शिकारी से दारू ने ही करवाया है। नही तो शिकारी बहुत भला आदमी है।" बहुत देर खामोश रहकर सब सुनने-गुनने के बाद सगुआ ने बहुत सोच-समझकर अपने मन की बात कही।

"हां ऽऽऽ, सगुआ बिलकुल ठीक कहता है। दारू पीने वाले पर फौरन डाकनी सवार हो जाती है। वही यह सब कुछ करवाती है। इसमें शिकारी-विकारी कोई कुछ नही कर सकता।" सगुआ को बोलता देख देवा ने भी अपनी जानकारी सबके सामने रखी।

डा० दादा इन दोनों की तरफ ध्यान न देकर अपना रुख प्रकट करने लगे, "औरत के साथ ज्यादती होने के बारे में बनाया गया यह कानून तो सरासर नाइंसाफी है। लेकिन क्या किया जा सकता है। पुरखों के काल से ही यही होता आ रहा है। लोग इसमे दिल और दिमाग से रमे हुए हैं।"

डा० दादा की यह पस्त बात दिनेश को पसन्द नही आई। वह थोड़ा झुंझलाया, "आपको तो ऐसी बात नही करनी चाहिए डा० दादा! अगर पुरखो ने कोई गलत परम्परा डाल दी है तो हमें उसका अंधानुकरण करने की बजाए उसमें सुधार लाने की कोशिश करनी चाहिए। दूसरे, पुरखों के जमाने में जो बातें फायदेमंद थी यह जरूरी थोडे ही है कि वे आज भी फायदेमंद हों। जो बातें फायदेमंद न होकर नुकसान देने वाली साबित हो रही है, उनको भी बुजुर्गों के नाम पर बन्दरी के मरे हुए बच्चे की तरह छाती से चिपकाए रखे रहने मे क्या तुक है? इधर जमाना चांद तक पहुंच गया है और आप है कि इन बाबा आदम के जमाने के जानवरी खयालों की पैरवी कर रहे है।"

"पैरवी न करूं तो और क्या करूं? इस सबको सिर झुकाकर मानने के अलावा ये लोग कर ही क्या सकते हैं?"

"क्या नहीं कर सकते? ये लोग अदालत में जा सकते

इसी समय डा० दादा की पीठ पीछे चंदेरी भड़क उठी, "तुम लोग मर्द हो, अपनी बहू-बेटियों की इज्जत बचाना तुम लोगों का धर्म है, इसमें रायसाहब या ओझा को बीच में घसीटने की जरूरत क्या पड़ गई तुम लोगों को।"

चंदेरी की लताड़ सुनकर डा० दादा खेत को दूसरे खेत से अलग करती पत्थरों से बनी मेढ़ पर बैठ गए। बाकर, देवा और सगुआ भी उनके साथ जम गए। पर दिनेश और चंदेरी खड़े रहे।

जब डा० दादा ने कोई जवाब नहीं दिया तो चन्देरी दिनेश की तरफ उन्मुख हुई, "देखो मास्टरजी! एक तो उस मासूम लड़की की इज्जत गई, अब दूसरे रायसाहब और ओझा के पास पहुंचकर उसको आग में जिन्दा जलाने का वसीला बना रहे हैं ये मर्द लोग। है न सरासर पाप-कर्म!"

दिनेश को चन्देरी की बात समझ नहीं आई। उसने बच्चों की तरह सवाल कर लिया, "रायसाहब और ओझा इस इलाके की निर्णायक ताकतें हैं, उनके पास शिकायत करने का लड़की को जिन्दा आग में जलाने का वसीला करने से क्या सबंध है, यह बात मेरी समझ मे नहीं आई?"

"मैं समझाता हूं।" चंदेरी के माथे पर हैरत के बल पड़े देख डा० दादा ने अपनी मुट्ठी चंदेरी की तरफ खोलकर उसे कुछ भी न बोलने का संकेत किया, "जिस लड़की या औरत की इज्जत लुट जाती है, अगर वह शिकायत ओझा या रायसाहब के पास पहुंचाए तो पहले उस लड़की या औरत को अग्नि-परीक्षा देनी होती है, अपनी शिकायत की सचाई को साबित करने के लिए। अग्नि-परीक्षा मे खरी उतर आने पर इज्जत लूटने वाले को वह हर्जाना देना होता है, जो औरत, उसके माता-पिता या उसका पति माग करे। अत मे हर्जाने की राशि का फैसला ओझा करता है। यही इस इलाके के ओझा का बनाया हुआ धार्मिक दस्तूर है और यह दस्तूर आदि जातियों के सभी कबीलों पर लागू होता है।"

"कमाल है। इसमे औरत के लिए अग्नि-परीक्षा किस बात की? औरत का तो इतना कह देना मात्र ही अग्नि-परीक्षा से कम नहीं है कि उसकी इज्जत लुट गई है। अजीब धार्मिक दस्तूर हैं आपके इस इलाके के। इसका मतलब तो यह हुआ कि इस इलाके में कोई भी आदिवासी औरत मर्द द्वारा अपने पर किए गए अत्याचार को लेकर जबान तक

नही खोल सकती अग्निपरीक्षा के डर से।"

"यहां इस तरह की राक्षसी बातें होती ही कहां है," चदेरी बोली, "जो भी होती है नीचे से आने वाले परदेसियों के हाथों होती है। करने वाले या तो नीचे के शिकारी होते है या रायसाहब के कारिन्दे और इतने भी सब कुछ वह रण्डी दारू करवाती है।"

"हां ऽऽऽ, दारू बहुत बुरी चीज है। यह सब शिकारी से दारू ने ही करवाया है। नही तो शिकारी बहुत भला आदमी है।" बहुत देर खामोश रहकर सब सुनने-गुनने के बाद सगुआ ने बहुत सोच-समझकर अपने मन की बात कही।

"हां ऽऽऽ, सगुआ बिलकुल ठीक कहता है। दारू पीने वाले पर फौरन डाकनी सवार हो जाती है। वही यह सब कुछ करवाती है। इसमें शिकारी-विकारी कोई कुछ नही कर सकता।" सगुआ को बोलता देख देवा ने भी अपनी जानकारी सबके सामने रखी।

डा० दादा इन दोनों की तरफ ध्यान न देकर अपना रुख प्रकट करने लगे, "औरत के साथ ज्यादती होने के बारे मे बनाया गया यह कानून तो सरासर नाइंसाफी है। लेकिन क्या किया जा सकता है। पुरखों के काल से ही यही होता आ रहा है। लोग इसमें दिल और दिमाग से रमे हुए हैं।"

डा० दादा की यह पस्त बात दिनेश को पसन्द नही आई। वह थोड़ा झुंझलाया, "आपको तो ऐसी बात नही करनी चाहिए डा० दादा! अगर पुरखों ने कोई गलत परम्परा डाल दी है तो हमे उसका अंधानुकरण करने की बजाए उसमें सुधार लाने की कोशिश करनी चाहिए। दूसरे, पुरखो के जमाने में जो बातें फायदेमंद थी यह जरूरी थोड़े ही है कि वे आज भी फायदेमद हों। जो बातें फायदेमंद न होकर नुकसान देने वाली साबित हो रही हैं, उनको भी बुजुर्गों के नाम पर बन्दरी के मरे हुए बच्चे की तरह छाती से चिपकाए रखे रहने मे क्या तुक है? इधर जमाना चांद तक पहुंच गया है और आप हैं कि इन बाबा आदम के जमाने के जानवरी खयालो की पैरवी कर रहे है।"

"पैरवी न करूं तो और क्या करूं? इस सबको सिर झुकाकर मानने के अलावा ये लोग कर ही क्या सकते हैं?"

"क्या नही कर सकते? ये लोग अदालत में जा सकते है।"

"अदालत के लिए पैसा कहां से आएगा ? और फिर अदालत भी तो रायसाहब का पक्ष लेती है। हर किसम की छोटी कचहरी रायसाहब के डाकबंगले पर लगती है और बड़ी कचहरी राजधानी में। राजधानी तक आने-जाने के लिए किराये के ही आठ रुपये चाहिएं।"

"लेकिन इसमें तो रायसाहब कहीं भी जुड़े नहीं हैं। एक विदेशी मेम ने इस इलाके की लड़की की इज्जत पर हाथ डाला है, क्या इसमें भी अदालत विदेशी का साथ देगी ?"

"नहीं, इसमें तो अदालत को औरत का ही साथ देना चाहिए।" डा० दादा ने बहस करना मुनासिब नहीं समझा।

"तो फिर ठीक है, अदालत पर खर्च करने के लिए थोड़ा-बहुत चंदा इकट्ठा करते हैं और कल शहर जा ही रहे हैं, वहां किसी वकील से मिलकर इस केस को अदालत में चालू करवा देते हैं।"

"लेकिन इसके लिए गोमा के माता-पिता को भी तो पूछना पड़ेगा।" डा० दादा ने फिर बात टालनी चाही।

"माता-पिता यहीं खेत में हैं, जाकर पूछ लो।" चन्देरी ने उत्साह में भरकर सामने की छोटी पहाड़ी की तरफ इशारा कर दिया।

"रात को घर पर ही पूछ लेंगे।" बोलकर डा० दादा खड़े हो गए।

"क्यों, इस वक्त पूछ लेने में क्या हर्ज है ?" दिनेश इस बात पर भी दादा से सहमत नहीं हुआ।

"हर्ज तो कोई नहीं है।"

"तो फिर चलो, अभी उनसे बात कर लेते हैं।"

सब के सब गोमा के माता-पिता के खेत की तरफ चल दिए।

सगुआ और देवा भी बड़े उत्साह में आगे-आगे चल रहे थे। उन्हें कोई तमाशा होने का पूरा यकीन हो गया था।



छोटी पहाड़ी पार करते ही कूल के साथ-साथ दूर-दूर तक फैली छोटी-बड़ी पट्टियों पर बहुत से किसान परिवार काम करते दिखाई देने लगे। हरी-भरी क्यारियों में जैसे बांसों पर चिथड़े लपेटकर बिजुके गाड़ दिए

गए हों। डा० दादा, दिनेश और दूसरे लोग जिस किसी भी क्यारी के पास से निकलते, उस क्यारी के बिजुके प्राणवान हो उठते और हाथ जोड़कर खड़े हो जाते। डा० दादा भी उनके अभिनन्दन का जवाब हाथ जोड़कर देते। अन्ततः वे सगुआ और देवा के पीछे-पीछे एक पतली-सी पगडण्डी के सहारे कूल के नीचे उतरे और एक छोटे-से खेत के बीचोंबीच खड़े आम के पेड़ के पास जा पहुंचे।

थोड़ा और नीचे उतरकर बितवा अपनी तीनों बेटियों के साथ शायद आलू के खेत की निराई में लगी थी। उसे बुलाने के लिए डा० दादा ने देवा को नीचे भेज दिया।

देखते ही देखते बितवा देवा के साथ ऊपर चली आई। वही एक मटमैली पुरानी-धोती से ढकी हुई समूची देह, रूखे बाल, हाथों और पैरों में किसी बहुत ही सस्ती लाख के बने कड़े और गले में काले धागे से बंधा, सूखा हुआ कोई जंगली फल। तीनों लड़कियां खेत में खड़ी रहकर मां को बुलाए जाने के कारण का जायजा लेने लगीं।

बितवा के पास आते ही डा० दादा एक-दो बार खांसकर गले को साफ करते हुए बोले, "हमें बहुत अफसोस है बितवा कि तुम्हारी छोटी बेटी गोमा के साथ…"

अभी डा० दादा वाक्य भी पूरा नहीं कर पाए थे कि बितवा दहाड़ मारकर रो पड़ी, बिलकुल वैसे ही जैसे महुआ के आदमखोर की भेंट चढ़ जाने पर चन्देरी रोती रही थी।

बितवा के रोने की आवाज सुनकर दूसरे खेतों के बिजुके भी उठकर चल दिए और चुपचाप उनके आसपास इकट्ठे होने लगे। थोड़ी ही देर में आम के पेड़ के नीचे दमकड़ी गांव के लोगों का खासा बड़ा हुजूम इकट्ठा हो गया। लेकिन उस हुजूम में एक भी औरत या मर्द ऐसा नहीं था जो इस दुर्घटना को लेकर रायसाहब या ओझा के पास शिकायत पहुंचाने या पुलिस में शिकायत पहुंचाकर अदालत में मुकदमा दायर करने के पक्ष में हो। दिनेश के समझाने का भी किसी पर कोई असर नहीं हुआ। सब लोग इसे 'देउता' का दिया संकट समझ रहे थे और उस संकट की शिकायत करना उनकी समझ के मुताबिक देउता को और भी अधिक नाराज करना या गुस्से में लाने का जुगाड़ करना था।

इधर डा० दादा, दिनेश, शैल और श्यामा शहर को रवाना हुए उधर शिकारी रावर्ट ने दमकड़ी मे आदमखोर के आने-जाने के रास्तों की निशान-देही करने की योजना बनाई। दोपहर का खाना खाने के बाद वह अपने लाव-लश्कर के साथ पहले चन्देरी के मकान की तरफ बढ़ा। गांव के ठीक बीच से, पूरे घमण्ड के साथ निकलता देख उसके पीछे गांव के बच्चों, बेकार बूढ़ों और औरतों की भीड़ भी लग गई। लड़कियां उसके लश्कर को सिर्फ झरोखों में से ही देख रही थीं, क्योंकि वे अभी चूल्हे-चौके के काम से पूरी तरह से नहीं निवटी थीं।

लग यह रहा था कि रात के स्याह अंधेरे में रावर्ट ने जो पाशविक लीला की थी उसका न तो उसको कोई पछतावा था और न ही किसी प्रकार की कोई शर्म। भीड़ भी जैसे उस लीला को कोई खास अहमियत नहीं दे रही थी। शायद वह समझ रही थी कि बितवा की नाबालिग बेटी की इज्जत लूटने का काम भी प्रेत ने ही किया है और रावर्ट उस प्रेत को साधने वाला कोई विदेशी ओझा है। भीड़ विदेशी ओझा को अपने ही ढंग के नये तरीके से प्रेत को साधते और वश में करते अपनी आंखों से देखना चाहती थी।

रावर्ट, रहीम और अपने दूसरे साथियों के साथ चन्देरी के मकान के सामने जाकर खड़ा हो गया। मकान को ताला लगा था, क्योंकि केवल देवा को छोड़ परिवार के सभी सदस्य खेत निराने चले गए थे। देवा की ड्यूटी आज लकड़िया काटकर लाने की थी, इसीलिए वह आज खेत नहीं गया था।

रावर्ट ने पहले तो ताला खोले जाने का हुक्म सुनाया पर जब पता चला कि चाभी देवा के पास नहीं है तो उसने एक चतुर खिलाड़ी की तरह भीड़ को मकान से दूर रहने की हिदायत दी और जिस लकड़ियों के ढेर के पास से महुआ गायब हुई थी उसकी लकड़ियों को बन्दूक की नाली से बजा-बजाकर निरीक्षण करने लगा, जैसे आदमखोर कोई छोटा-सा रेंगने वाला कीड़ा हो जो लकड़ियों के बीच कहीं दुबका बैठा हो। रावर्ट निरीक्षण करके जो कुछ बोलता जा रहा था, रहीम हाथ की डायरी में उस बोले हुए को लिखता चला जा रहा था। लोग मदारिया चक्कर में खड़े होकर समझ

न आने वाली भाषा सुनते जा रहे थे। साथ ही सोच भी रहे थे कि राबर्ट अभी किसी लड़के को आवाज देकर बुलाएगा और उसे अपने काम में सहायक बन जाने के लिए कहेगा। सब देखेंगे कि कौन माई का लाल होगा जो इस प्रेत बांधने के तमाशे में जमूरा बनने का साहस करेगा।

राबर्ट ने सचमुच में हाथ का इशारा करके भीड़ में से देवा को अपने पास बुलाया। राबर्ट का इशारा अपनी ओर देख पहले तो देवा के बदन में झुरझुरी-सी होने लगी, क्योंकि प्रेत के बारे में खोज-खबर लेने वाले किसी भी काम में वह शामिल नहीं होना चाहता था। उसने अपनी बहन के बचे हुए अंग देखे थे, बहन की फटी-फटी आंखें अब भी उसके दिमाग में तैर रही थीं। फिर भी जब सरपंच रामदास ने आगे बढ़कर उसको प्रोत्साहित किया तो वह डरता-डरता आगे बढ़ा और राबर्ट की बगल में जा खड़ा हुआ।

राबर्ट ने आगे बढ़ अपने मुदगरी हाथ से देवा की पीठ थपथपाई। देवा की पतली देह ऐसे झूल गई जैसे सफेदे के नन्हें पौधे पर कोई दूसरा बड़ा पेड़ टूटकर आ गिरा हो। देवा गिरते-गिरते संभला।

देवा की यह दशा देख भीड़ की टांगों में दुबकी जमना की हंसी छूट गई। हंसी भी सीधी मन से निकलने के कारण ऐसी स्वच्छंद कि उसे सुनकर भीड़ के दूसरे लोग भी बरबस हंस पड़े। पर राबर्ट ने उस हंसी की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया। फुसफुसाती-सी आवाज में उसने देवा से पूछा, "तुम्हारी सिस्टर का लाश किदर मिला?"

देवा नहीं समझा तो रहीम ने सवाल को दुबारा दोहराया, "तुम्हारी बहन की लाश कहां मिली थी?"

देवा ने नाले के पार की पहाड़ियों के बीच जंगल की ओर इशारा कर दिया।

"हमको उदर पहुंचाना मांगता।" बोलकर रास्ते की लम्बाई का जायजा लेने के लिए मकान की छत पर जा चढ़ा। ऊपर पहुंचते ही उसे दूसरे मकानों की छतों पर काले गुलाब खिले नजर आए। लड़कियां काम बीच में छोड़ अपनी-अपनी छतों पर आ गई थीं। उनके गुलाबी जिस्मों की महक राबर्ट के नथुनों तक पहुंची तो वह बनमानुष की तरह छतों को फलांगता हुआ उनकी तरफ लपका। क्योंकि रात की घटना अभी बहुत ताजा थी, इसलिए लड़कियां डरकर भाग खड़ी हुईं और ताबड़तोड़

सीढ़ियां कूदकर अपने-अपने घरों मे जा छुपी।

रावर्ट एक सीढ़ी के मुहाने पर आकर रुक गया। उसका दिल हुआ कि जो लम्बी देह वाली चौड़ी-सी लड़की उसका अपमान करके नीचे भागी है, वह मकान में पहुंचकर उसको चीते की तरह दबोच ले और बता दे कि रावर्ट से डरकर भागने का भद्दा मजाक करने का क्या नतीजा हो सकता है।

उसने गर्दन मोड़कर एक बार नीचे खड़ी भीड़ का जायज़ा लिया। भीड उसे किसी दुकान के शोरूम में सजे बच्चो के खिलौनों जैसी लगी। आश्वस्त होकर वह बूटों की क्रूर आवाज़ से वातावरण के ठहरे जल में कम्पन पैदा करता हुआ सीढियां उतर गया।

थोड़ी देर बाद ही मकान के अन्दर से लडकी की चीखें सुनाई देने लगी। चीखों के साथ ही कुछ इस तरह की उठा-पटक की आवाज़ें भी, जैसे कोई अरनी भैंस अपनी जान बचाने के लिए किसी बाघ के साथ युद्ध लड रही है। लेकिन तमाशे के दायरे में खड़ी भीड पर इसका भी कोई असर नही हुआ। सबके सब इस सबको ऐसे देखते और सुनते रहे जैसे सिनेमा के रंगीन पर्दे पर बलात्कार का दृश्य देख रहे हों।

पर जमना यह सब सहन नही कर सकी। उसके अपाहिज शरीर मे पड़ा संवेदनशील स्वस्थ मन कलप उठा। उसे लगा जैसे यह सब उसकी मासूम बच्ची रूपा के साथ हो रहा हो। वह तमाशे के घेरे को तोड़कर थोड़ा आगे आई और दहाड़कर बोली, "कमीनो! तुम्हारी बहू-बेटियों की लाज तुम्हारी आंखों के सामने एक विदेशी फिरंगी लूट रहा है और तुम इस तरह से पत्थर के बुत बने खड़े हो। डूब मरो कुत्तो; चुल्लू भर पानी मे डूब मरो।"

जमना की फटकार से भीड मे थोड़ी हलचल हुई, जैसे ठहरे हुए पानी में किसी ने छोटा-सा कंकर फेंक दिया हो। लेकिन एक क्षण बाद ही भीड फिर स्थिर हो गई। रावर्ट के दूसरे साथियों के हाथों में पकड़ी राइफलो ने उन्हें जान के मोह में धकेल दिया।

जमना भीड़ की तरफ घृणा का थूक थूककर घिसटती हुई रावर्ट की तरफ चल दी। मां को तेजी से गेंद की तरह लुढ़कती जाती देख सूरज और रूपा भी उसके पीछे भाग निकले। मकान के बाहर पहुंचकर जमना ने देखा कि दरवाज़े अन्दर से बद है। बार-बार पीटने पर भी जब दर-

वाजे नही खुले तो उसने पास ही पड़ा पत्थर उठाकर उनपर मारना शुरू कर दिया। मां को दरवाजा तोड़ती देख दोनों बच्चे भी छोटे-छोटे पत्थर उठाकर दरवाज़ों पर वार करने लगे।

लेकिन अब तक अन्दर की उठा-पटक और चीखें शांत हो चुकी थी। सिर्फ जमना और उसके बच्चों द्वारा पत्थर टकराने की आवाज़ें ही सुनाई दे रही थीं। इधर भीड़ कुछ न कुछ भयंकर घट जाने की आशंका से आधी रह गई थी। विशेषकर मर्द चुपचाप खिसककर अपने-अपने घरों में कैद हो गए थे।

फिर सहसा सांकल उतारी जाने की आवाज़ के साथ दरवाज़ा खुला। रावर्ट चमड़े की पेटी कमर पर सही जगह बिठाने की कोशिश करता हुआ बाहर निकला। उसे देखते ही, "हरामज़ादे! कमीने!! कुत्ते!!!" गालियां देती हुई जमना चमगादड़ की तरह उसकी एक टांग पर चिपट गई। रावर्ट ने उसे दूसरे पैर के शिकारी बूट की बेरहम ठोकरों से परे धकेल दिया। ठोकरों से घायल होकर जमना लड़की की हालत देखने मकान में घुस गई। दोनों बच्चे भी उसके साथ मकान में घुस गए।

रावर्ट अपने कपड़ों के बल ठीक करके भीड़ के पास आ खड़ा हुआ। बिलकुल शर्म रहित और आतंक रहित, जैसे वह कोई धर्म या बहादुरी का काम करके आया हो।

पल-भर वहां ठहरने के बाद रावर्ट बरसाती नाले के पास वाले जंगल की तरफ जाती पगडण्डी पर उतर गया। रहीम और उसके साथी भी देवा को साथ लेकर उसके पीछे चल दिए। भीड़ उन सबको उसी तरह जाते देखती रही जैसे महुआ की लाश को, ओझा के साथ खोजने निकले लोगों को देखती रह गई थी। थोड़ी देर बाद जो लड़कियां रावर्ट से डरकर भागी थीं उनमें से एक को छोड़ बाकी सबकी सब अब छतों पर न खड़ी होकर भीड़ में आ मिली थीं और आपस में कानाफूसी करने में जुट गई थीं।

उधर सूरज भी पहाड़ की सबसे ऊंची चोटी को छूने लगा था। लोगों के खेत और जंगल से अपने-अपने घरों को लौटने का समय हो गया था। लेकिन जो भी लौटता वह रावर्ट के वापस आने की बाट जोहती भीड़ में शामिल हो जाता और रात के तथा दिन के हादसों की बजाए रावर्ट के चीज़ें बांटने वाले रूप की प्रशंसा करने लगता। अब तक एक भी घर ऐसा नहीं था जिसमें रावर्ट की दान दी हुई कोई न कोई चीज़ न पहुंची हो।

दो-तीन छोकरों ने तो रावर्ट के दिए कमीज भी पहन रखे थे, जो उनके काले-कलूटे शरीरों पर, बौद्ध भिक्षुओं के शरीरों पर पहने रंग-बिरंगे चोगों की तरह लग रहे थे।



डा० दादा, दिनेश, शैल और श्यामा दो-तीन घंटे पथरीले रास्तों और कंटीली पगडण्डियों पर चलने के बाद चिटमौला नामक स्थान पर पहुंचे। चिटमौला की ऊंचाई बहुत ज्यादा नहीं है। यूं कहा जा सकता है कि असली पहाड़ यहीं से शुरू होते हैं और आसपास का पूरा इलाका असली पहाड़ों के पैरों में एक खूबसूरत गलीचे की तरह बिछा है। यही वह जगह है, जहां से इस इलाके के लोग सरकारी बसें पकड़कर ऊंचाई की ओर या निचाई की ओर जाते हैं। बाहर से आने वाले लोग भी बसों या कारों से इसी जगह पर उतरकर; गरीब हुए तो पैदल चलकर और अमीर हुए तो घोड़ों और खच्चरों की सहायता से; इस इलाके में प्रवेश करते हैं। घोड़े और खच्चर किराये पर यहां रायसाहब की ओर से उपलब्ध हैं।

नीचे उतरते कच्चे रास्ते के किनारे, खूब पक्के तरीके से एक बड़ा-सा बोर्ड लगाया गया है, जिस पर पहली पंक्ति में मोटे लाल अक्षरों में लिखा है, 'संरक्षित वन'। इसके बाद छोटे अक्षरों की लाइनें हैं, "इस इलाके में शिकार खेलना सख्त मना है। कानून तोड़ने वाले शख्स को एक हजार रुपये जुर्माना और एक साल की सख्त कैद की सजा दी जा सकती है! धन्यवाद!"

दूसरी तरफ पक्की सड़क के किनारे एक आलीशान बिल्डिंग चमक रही है। उस पर भी एक छोटा-सा बोर्ड लगा है, जिस पर नीले अक्षरों में लिखा है, 'डाक बंगला'।

डाक बंगले में रायसाहब के परिवार के सदस्य और मेहमान जंगली इलाके को पार करने से पहले या बाद में विश्राम करते हैं। यहीं से वे अपनी कीमती कारों में राजधानी आते-जाते हैं। डाक बंगले के साथ एक छोटा-सा अस्तबल भी है जिसमें कुछ घोड़े और खच्चर सवारी या सामान ले जाने के लिए हमेशा तैयार मिलते हैं। डाक बंगले में ही मजूरयुदा

शराबखाना है। इस शराबखाने में केवल रायसाहब की फैक्टरी में बनी शराब मिलती है और साथ में इलाके के काले तीतरों और जंगली मुर्गों का स्वादिष्ट मांस भी।

आमतौर पर यहां कुछ न कुछ लोग ठहरे हुए ही मिलते हैं। सरकारी और गैर-सरकारी सभी किस्म के। किसी कारण पुलिस या ऐसे ही किसी दूसरे महकमे के अफसरों को इस इलाके में आना होता है तो बस इसी डाक बंगले तक। यही रायसाहब के आदमी सम्बन्धित लोगों को महकमों के लोगों से मिला देते हैं। किसी महकमे का कोई अफसर अड़ियल या ज्यादा ही आदर्श तबियत का निकला तो वह किसी भी दिन किसी जंगली जानवर का शिकार हो जाता है। आदर्श लोगों का मांस जंगली जानवरों को बहुत भाता है। बेईमान लोगों से ये जानवर बहुत डरते हैं।

यहीं थोड़ा हटकर बरगद के पुराने पेड़ के नीचे चाय-बीड़ी की एक छोटी-सी झोंपड़ीनुमा दुकान है। लोग इसे मुरारी का खोखा कहते हैं। खोखे के सामने रखे बेढब लकड़ी से बने दो कीचट-बीमार बेंच इस इलाके के आदिवासियों के विश्राम-स्थल हैं। लगभग एक किलोमीटर की दूरी पर बसे गांव मंडवा के लोग अक्सर इन बेंचों पर बैठे मिलते हैं। मुरारी इसी गाव का रहने वाला है। आज इन्हीं बेंचों पर डा० दादा, दिनेश, श्यामा और शैल बैठे हैं, जो काफी देर से राजधानी जाने वाली बस का इन्तजार कर रहे हैं।

डाक बंगले के बैरे बारी-बारी बाहर निकलकर इन चारों को देख रहे हैं। इनमें से किसी ने उनको सलाम क्यों नहीं किया? जबकि खोखे पर बैठने वाला हर आदमी खड़ा होकर उनको सलाम करता है। एक सजे-धजे बैरे ने तो बीड़ी लेने के बहाने खोखे तक आने की हिम्मत भी की है, लेकिन वह श्यामा की जलती हुई आंखों में एक बार झांककर बीड़ी के बंडल के साथ माचिस लेना भूलकर वापिस चला गया है।

बैरे के वापस पहुंचने के थोड़ी ही देर बाद डाक बंगले का मैनेजर, पहाड़ी गाड़ी के छोटे इंजन की तरह सिगार का धुआं उगलता हुआ बाहर निकला है। चमचमाता कीमती सूट, चरमराते कॉफ के जूते और कीमती, टाई पर बिच्छू की शक्ल के पिन में लगा जगमग-जगमग करता हीरा।

मैनेजर चहलकदमी-सी करता हुआ खोखे के पास पहुंच गया और उसने श्यामा को गहरी नजरों से देखते हुए अंग्रेजी में सवाल किया, "आप

लोगों ने ऊपर की तरफ जाना है या नीचे की तरफ ?"

"हम नीचे की तरफ जाने के लिए बस का इन्तज़ार कर रहे हैं।" दिनेश ने अंग्रेज़ी के सवाल का जवाब अंग्रेज़ी में ही दिया।

दिनेश का जवाब सुनकर मैनेजर को और ज्यादा छानबीन करने का साहस नहीं हुआ। "अभी बस के आने में पूरा आध घण्टा बाकी है।" अंग्रेज़ी में ही बोलकर वह वापस चला गया।

मैनेजर के लिए बस इतनी जानकारी काफी है। शाम को उसने रायसाहब को रिपोर्ट भेजनी है कि इलाके के कितने और किस किस्म के लोग ऊपर या नीचे की तरफ निकले हैं। बाकी सब रायसाहब खुद पता कर लेंगे। इसके लिए रायसाहब का अलग विभाग है।

आध घण्टे का नाम सुनते ही डा० दादा ने मुरारी को चार कप चाय बनाने के लिए कह दिया। दिनेश ने देखा है कि मुरारी ने उनकी चाय में सदूकची से निकालकर छोटी इलायची भी डाली है पर दिनेश को मुरारी का व्यवहार भी एक भेदिये के व्यवहार जैसा लग रहा है। वह बार-बार यह जानना चाहता है कि राजधानी, वे लोग किस काम से जा रहे हैं और यह लड़की और बच्चा दोनों मर्दों के क्या लगते हैं ? डा० दादा को वह मामूली-सा जानता है, इसलिए ज्यादा बातचीत उन्हीं के साथ कर रहा है। वह भी अपनी जंगली भाषा में, जिसे दिनेश बहुत कम समझता है।

अभी चाय बनकर तैयार ही हुई थी कि नीचे जाने वाली बस आकर डाक बंगले के ठीक सामने रुक गई। चारों, चाय पीने का ख्याल छोड़, भागकर उसमें जा चढ़े।

मैनेजर ने एक बार फिर बाहर निकलकर सिगार के चार-पांच कश खींचे। ड्राइवर खिड़की से कूदकर मैनेजर के पास जा खड़ा हुआ। मैनेजर ने उसे सिगार संभाले होंठों में से ही धीरे-धीरे कुछ समझाया। ड्राइवर ने एक चलती नज़र नई चढ़ी सवारियों पर डाली और बस का एक चक्कर लगाकर पुनः अपनी सीट पर जा बैठा। मैनेजर ने हाथ ऊपर उठाया और एक हल्का-सा झटका देकर बस स्टार्ट हो गई और धीरे-धीरे नीचे की तरफ उतरने लगी।

बस अब काफी चौड़ी सड़क पर चल रही है। लकड़ी के सलीपरों के बोझ को अपने बहाव के कन्धों पर पहाड़ी औरतों की तरह ढोती सोन नदी के साथ-साथ।

श्यामा ने महसूस किया कि समतल तक पहुंचते-पहुंचते नदी में न चचलता रही है, न लावण्य और न रवानगी। अपनी जन्मभूमि पहाड़ो को छोड़कर जैसे वह उदास हो गई है, ससुराल जाने वाली नई-नवेली दुल्हन की तरह उदास। श्यामा ने दादा से सवाल कर लिया, "दादा यह सोन नदी ही है ना ?"

"हां, यह सोन नदी ही है, लेकिन यहां तक पहुंचते-पहुंचते पीतल हो गई है। देख नही रही हो, जैसे लकड़ी का बोझ ढोते-ढोते थककर हाफने लगी है। एक-एक कदम बड़ी मुश्किल से उठा रही है। स्लीपरों के बीच की झाग जैसे थकी-मांदी इस सोन नदी के मुह से निकलने वाली झाग है।"

दादा ने यह सब इस कदर उदास आवाज़ मे कहा कि पीठ पर लकड़ियों का भारी बोझा लादे सीधी उतराई उतरती किसी आदिवासी कन्या का दृश्य दिनेश की नज़रों मे कौंध गया। उसके मुह से आवेश में निकल गया, "वाह ! क्या रूपक बांधा है, वाह ! वाह ! नदी के प्रति इस तरह की गहरी सवेदना तो कोई सुलझा हुआ सवेदनशील कवि ही प्रकट कर सकता है। वाह-वाह, क्या बात है !"

दिनेश की इस वाह-वाह से कुछ दूसरे लोग भी चौंके और वे कभी नदी की तरफ तो कभी डा० दादा के चेहरे की तरफ देखने लगे।

दादा के होंठों पर भी आनंद से भीगी मुस्कान फैल गई। उन्होने आत्मविभोर होकर श्यामा की बगल में बैठे शैल को हाथ के इशारे से अपने पास बुलाया और प्यार से उसका माथा चूमकर अपने पास बिठा लिया। दिनेश देख रहा था कि वही दादा हैं जो बंगालिन मां के परिवार को हाथ से न छूने का दावा करते रहे है।

बस एक गहरा. मोड़ काटकर बड़े-से पुल पर से गुज़रने लगी। पुल पार करते ही दिनेश ने देखा सड़क के दोनों ओर जहां तक उसकी नजर पहुंच पाती है, लकड़ी के स्लीपर ही स्लीपर पड़े हैं। वह समझ गया कि

पहाड़ी लकड़ी को देश के दूसरे भागों तक पहुंचाने वाला सबसे बड़ा लकड़ी गोदाम यही है। पहाड़ी सम्पदा पर इस मण्डी के सेठों का इस तरह कब्ज़ा देख उसकी आंखें फटी की फटी रह गई। डेढ़ महीना पहले ऊपर के पहाड़ी इलाके की तरफ जाते हुए भी उसने स्लीपरों के बंधे अम्बार देखे थे। उस वक्त छोटी-छोटी क्रेनों से, रेल के खुले वैगनों में लदते स्लीपरों के दृश्य उसे अच्छे लगे थे, क्योंकि उस वक्त उसे पता नहीं था कि इन पर आदिवासियों के हाथों के छालों का पानी चढ़ा हुआ है, और वह भी पूरी तरह से बेगार में, आधा पेट भी न भर पाने वाले दो वक्त के सस्ते चावलों के बदले। उसे यह भी पता नहीं था कि इन बड़े-बड़े गोदामों में मज़दूरी करने का अधिकार भी आदिवासियों के पास नहीं है, मानो पत्थरों को पार करते ही नदी और उसमें बहकर आने वाली हर चीज़ पर दूसरों का कब्ज़ा हो गया हो और कब्ज़ा करने वाले लोग आदिवासियों से दूर ही रहना चाहते हों।



लकड़ी गोदाम की सीमा को पार करते ही अब बस नदी का किनारा छोड़ किसी दूसरी दिशा की तरफ कुछ ज्यादा ही तेज रफ्तार से भागने लगी थी। सड़क भी कुछ ज्यादा ही चौड़ी हो गई थी, उस पर कहीं-कहीं साइकल सवार या रिक्शा भी दिखाई देने लगे थे। फर्राटे के साथ भागती हुई कारें, स्कूटर और मोटर-साइकल, और उनसे बच-बचाकर कच्चे किनारे पर चलते पैदल लोग। सब कुछ पूरी तरह से बदल गया था, जैसे इस लोक का पहाड़ी लोक से कोई रिश्ता-नाता ही न हो।

थोड़ी देर बाद ही बस भव्य इमारतों से लगे रास्तों को पार करने लगी। कहीं-कहीं भीड़-भरे बाज़ार भी थे। किसी ने पुलकित होकर कहा, "राजधानी आ गई।" कोई दूसरा कह रहा था, "ड्राइवर बहुत अच्छा है, बहुत जल्दी ले आया।" दिनेश को यह सब अजीब-सा लग रहा था। सुबह, सूरज निकलने से पहले ही, वह सबके साथ स्कूल से निकल पड़ा और अब राजधानी पहुंचते-पहुंचते पूरे साढ़े चार का वक्त हो गया था लेकिन अभी भी बस के अड्डे से माडर्न कॉलोनी तक जाने के लिए लगभग

एक घण्टा और चाहिए—अंकल इसी कॉलोनी में रहते हैं।



माडर्न कॉलोनी पहुंचने पर अंकल मनोहर बाबू घर पर ही मिल गए। वे आफिस से आकर बैठे ही थे और लोकल बस में सफर करने की थकान उतार रहे थे। अंकल की पत्नी रसोई में चाय बना रही थी। पत्नी ने बिना पूछे ही उन सब के लिए भी चाय का पानी चढ़ा दिया, जंगली इलाके से राजधानी तक पहुंचने में कितना वक्त लगता है उसे पता है पिछली बार जब दिनेश ठहरा था तब यही बातें होती रही थी।

बातचीत शुरू होते ही अंकल ने जो पहला सवाल पूछा था वह यह था, "तुमने वहां पहुंचते ही ऐसी क्या गड़बड़ शुरू कर दी कि डेढ़ महीने के अन्दर ही तुम्हारी शिकायतें दफ्तर में आनी शुरू हो गई है?"

दिनेश चौंका, "शिकायतें?"

"हां शिकायतें। कम से कम पांच चिट्ठियां आ चुकी हैं। एक में तो लिखा है कि तुम किसी लड़की को लेकर पहाड़ों पर घूमते रहते हो।"

लड़की वाली बात सुनकर डा० दादा ठहाका मारकर हंस पड़े, "किसी ने श्यामा के बारे में लिखा होगा। यही, आपकी बगल में बैठी है वह लड़की।"

अंकल ने श्यामा की तरफ पड़तालती नजरों से देखा। श्यामा अंकल को इस तरह देखता देख छुई-मुई-सी हो आई। डा० दादा ने श्यामा को इस तरह खरगोश बनते पहली बार देखा, नहीं तो उन्होंने उसका दहाड़ता रूप ही देखा था। डा० दादा को श्यामा इस रूप में भी भली लगी। वह मनोहर बाबू की गलतफहमी की तरफ उन्मुख हुए, "यह तो बहुत अच्छी लड़की है, इलाके की एकमात्र चरित्रवान और बहादुर लड़की। इसके बारे में किसी की लिखने की हिम्मत कैसे हो गई। क्या नाम है लिखने वाले का?"

"नाम किसी का नहीं है। मेरा मतलब है सब अनोनिमस लेटर्ज हैं। पांच रोज पहले डी० ई० ओ० साहब को किसी का फोन भी आया था। उस फोन की वजह से ही इन लैटर्ज को प्रेफरेंस मिल रही है नहीं तो

अनोनिमस लैटर्स को कौन पूछता है। खैर छोड़ो, इनको मैं खुद देख लूगा, लीजिए चाय लीजिए।"

चाय के प्याले सबके सामने आ चुके थे। साथ ही कुछ बिस्कुट और करारे पापड़ भी थे। सुबह से किसी ने कुछ नही खाया था। शैल तो उन बिस्कुटों पर जैसे टूट ही पड़ा था।

चाय पीते-पीते मनोहर बाबू फिर बोल पड़े, जैसे उनको अचानक कुछ याद हो आया हो, "देखो, कल दफ्तर में छुट्टी है क्योंकि मुख्यमंत्री साहब के किसी रिश्तेदार का देहान्त हो गया है।"

"क्या ऽऽऽ।" श्यामा और दिनेश के मुख से एक साथ निकला। डा० दादा ने चिन्ता व्यक्त की, "तो फिर दिनेश की तनखा का क्या होगा?" उन्होंने बहुत-सी चीजें इसी तनखा के पैसों से खरीदनी थीं।

दादा का सवाल सुनकर मनोहर बाबू पहले चुप रहकर कुछ सोचते रहे फिर उन्होने इस समस्या का हल तलाश कर लिया, "ऐसा करेंगे, दिनेश रसीद देकर अपनी तनखा मेरे पास से ले जाएगा,. मैं उस रसीद के आधार पर अपने लिए पैसे दफ्तर से हासिल कर लूगा।"

मनोहर बाबू की यह उदारता सबको पसन्द आई। श्यामा को उनका यह आचरण विशेष रूप से भाया। वह अंकल की तरफ एकटक देखती हुई गुलाब की कली की तरह खिल गई। अंकल को श्यामा का खिलना बहुत अच्छा लगा। वे चाय खत्म करके प्याली अपनी पत्नी को पकड़ाते हुए पुलक उठे, "और सुनो। कल जो भी काम आप लोग करना चाहेंगे, उसके लिए मैं भी अपनी छुट्टी आप लोगों के साथ गुज़ार सकूगा।"

मनोहर बाबू की पत्नी ने अपने पति को इतना खुश बहुत कम देखा था। उसे भी घर मे बच्चे का अभाव हर समय सालता रहता था। पति की खुशी से वह भी उत्साह मे भर उठी और रसोई में पहुंचकर जल्द से जल्द खाना बनाने मे जुट गई।

- जात-बिरादरी को लेकर श्यामा इस बात का निर्णय ही नही कर सकी कि उसे रसोई मे जाकर आटी का हाथ बटाना चाहिए या कि नहीं।

दूसरे दिन बाजार खुलते ही सबसे पहले सबने मिलकर करियाला के लिए कुछ आवश्यक सामान खरीदा। दो-तीन मुकुट, गले का हार, पैरों में बंधने वाले घुंघरू, मुंह का मेकअप किए जाने वाले रंग आदि। दिनेश ने अपने उपन्यास के लिए कुछ कागज के दस्ते, नया पैन और स्याही की बोतल भी खरीदी। श्यामा ने शैल के लिए मिठाई और थोड़ा-बहुत घर का सामान। सारा सामान अंकल के घर मे रखकर सबके सब सीधे किसी मंत्री महाराज से मिलने निकल पड़े।

मंत्री महोदय अपनी कोठी पर ही मिल गए। चूंकि मिलने वालों की भीड़ बहुत ज्यादा थी और दूसरे मिलने का समय भी नहीं लिया गया था, इसलिए उनको बाहर लॉन में बैठकर प्रतीक्षा करनी पड़ी।

लगभग तीन घण्टे बाद और वह भी अंकल के किसी आदमी की सिफारिश से जब मंत्री महोदय के सामने पेश होने का मौका मिला तो मंत्री एक महिला के साथ बहुत व्यस्त नजर आए। बातें चलती रहीं कि वह विदेश से कब लौटी है और आते समय क्या-क्या चीजें लाई है और वह वहां किस जगह पर ठहरी थी और कौन-कौन-सी जगहें देखी। फिर जैसे अचानक मंत्री महोदय का उनकी तरफ ध्यान गया और उनको अपनी गपशप मे बाधक समझ सवालिया नजरों से उनकी तरफ देखा जैसे पूछ रहे हों—आप लोगों को अन्दर किसने आने दिया ?

दिनेश ने मंत्री महोदय को संक्षेप में अपने आने का मकसद समझाया, "हम लोग पहाड़ों के संरक्षित जंगल के आदिवासियों के इलाके से आए हैं और वहां की कुछ समस्याओं के बारे में आपसे बात करना चाहते हैं।"

छूटते ही मंत्री महोदय ने सवाल दाग दिया, "लेकिन आप मे से तो कोई मुझे आदिवासी नहीं लगता ?" औरत ने मुस्कराकर जैसे मंत्री की पहचान और सूझ की दाद मे अपनी सुराहीदार गर्दन हिलाई।

"जी नहीं, हम आदिवासी नहीं है, लेकिन आदिवासियों मे रहते है, उनकी समस्याओं को पहचानते है।"

"उस इलाके के एम० एल० ए० तो शायद रायसाहब फतेहसिंह है ?" मंत्री ने थोड़ा हटकर बैठे सेक्रेटरी से पूछा।

"जी हां, इन लोगों को रायसाहब से मिलना ही चाहिए था।"

सेक्रेटरी ने सिद्धांत और कानून की बात बताई।

मंत्री महोदय ने उनकी तरफ से निगाह हटाकर चपरासी की तरफ देखा, जिसका मतलब था—कोई और मिलने वाला हो तो उसे भी निपटा दो।

दो पल बाद ही हाथों में बड़े-बड़े बैग लटकाए दो मोटे-मोटे तोंदियल सेठ मंत्री महोदय के सामने आ खड़े हुए। मंत्री ने एक गहरी मुस्कान के साथ उनका स्वागत किया, "आप लोग तो सीधे आ गए होते। इस तरह चिट भेजने की क्या जरूरत थी।" और इशारा करके कुर्सियों पर बिठा दिया।

मंत्री की अपने प्रति उपेक्षा देख श्यामा का खून खौल उठा। जैसी कि उसकी आदत थी, थोड़ी तीखी लेकिन संयत आवाज़ में वह मंत्री से बोली, "महोदय, हम सब सैकड़ों मील का सफर तय करके आपके पास आए हैं, आपका कर्त्तव्य है कि आप हमारी बात भी सुनें और···" लेकिन डा० दादा ने उसके कन्धे पर हाथ रखकर उसे बीच में ही चुप करा दिया। दादा केवल यह दिखाने के लिए उसे अन्दर लाए थे कि उसके साथ एक औरत भी है, इस तरह के कडवे तर्क करने के लिए नहीं।

मंत्री महोदय ने ही नहीं, वहां बैठे सभी लोगों ने हैरत से श्यामा की तरफ देखा। फिर मंत्री महोदय के मुख पर वही कृत्रिम मधुर मुस्कान फैल गई, "बहन जी, आप हमें एक पत्र द्वारा ही अपनी बात लिख सकती थी, आपको इतनी दूर आने की तकलीफ उठाने की जरूरत ही नहीं थी। हमने आपसे निवेदन किया है कि आप लोग अपनी समस्याएं रायसाहब फतेहसिंह के सामने रखें, वे ही उस इलाके के प्रतिनिधि हैं और हमारी पार्टी के ही हैं।"

"लेकिन अगर रायसाहब के खिलाफ ही शिकायत करनी हो तो आदमी को कहां जाना चाहिए।" यह आवाज़ दिनेश की थी।

दिनेश का सवाल सुनकर मंत्री महोदय का चेहरा तमतमा उठा। उन्होंने आज तक, जबसे वे मंत्री बने थे, अपनी पार्टी के किसी वरिष्ठ सदस्य के बारे में ऐसा अभद्र सवाल नहीं सुना था। एकदम उनको सूझा ही नहीं कि वे इसका क्या जवाब दें। उनकी आखें फिर अपने सेक्रेटरी की तरफ गईं।

सेक्रेटरी ने नम्रता से दिनेश को समझाया, "आप लोग शिकायतों के चक्कर को छोड़ें, जो काम आप करवाना चाहते हैं उसके लिए राय-

साहब से जाकर मिलें। वे बहुत भले आदमी हैं, सब का काम फौरन कर देते है और काम उनके वश का न हो तो दूसरों से करवा देते है।"

दोनों आगन्तुक सेठों ने भी सेक्रेटरी की हां मे हां मिलाई। बल्कि एक सेठ तो कुर्सी से उठकर दिनेश के कान के पास आकर फुसफुसाने लगा, "आपको इस तरह नही बोलना चाहिए। ये मिनिस्टर साहब का बंगला है कोई नौटंकी नही है।" उसे मंत्री का मूड खराब हो जाने से अपने काम में बाधा पड़ने का डर था।

दिनेश ने पहले तो सेठ की तोंद की तरफ देखा फिर कुर्सी के पास रखे तोंद जितने ही भारी बैग की तरफ। फिर उसकी नजर श्यामा की नजर से जा मिली। श्यामा की आंखों मे उसे कोई पागल औरत अट्टहास करती दिखाई दी। वह औरत दिनेश को बहुत डरावनी लगी। उसे लगा कि इस वक्त वह औरत कुछ भी कर सकती है।

इससे पहले कि श्यामा के अन्दर की पागल औरत निकलकर बाहर आए, दिनेश ने श्यामा का हाथ थामा और उसे कोठी से बाहर ले आया। दादा भी चुपचाप बाहर आए। बाहर शैल के साथ खड़े मनोहर बाबू उनका इन्तजार कर रहे थे। तीनों के तपे चेहरे देखकर मनोहर बाबू समझ गए कि कुछ अप्रत्याशित घट गया है। वे अनुभवी थे, सरकारी तंत्र से बखूबी वाकिफ थे, इसलिए इस वक्त उस तंत्र के बारे मे कोई सवाल करना उन्होंने मुनासिब नही समझा। दबी-दबी-सी आवाज में केवल इतना ही बोले, "इन कोठियों मे सब कुछ इसी तरह चलता है। शायद आप लोगों का यह पहला अनुभव है, आप लोग अभ्यस्त नही हुए।"

मेन गेट से बाहर आते ही दिनेश ने अंकल को किसी दैनिक अखबार के दफ्तर और किसी सस्ते-से वकील के पास ले जाने के लिए कहा।

"क्यों मंत्री महोदय का व्यवहार तसल्लीबख्श नही रहा?" अब अंकल को लगा कि दिनेश के मन का बोझ हल्का किया जाना चाहिए।

"व्यवहार। इसे व्यवहार कहना व्यवहार शब्द की तौहीन करना है। चोर की चोरी के बारे मे शिकायत करने पहुंचे तो मशविरा मिला कि यह शिकायत चोर के ही पास जाकर कीजिए।" श्यामा ने यह बात इस तरह की नाटकीय आवाज मे कही कि उसे सुनकर डा० दादा को सचमुच में हंसी आ गई। डा० दादा को हंसते देख दिनेश भी हंस पड़ा। अंकल के होंठों पर भी मुस्कराहट फैल गई। शैल को हंसने वाली कोई बात नही

लगी, चूंकि सब लोग हंस रहे थे, इसलिए वह भी खिलखिला उठा। पल-भर में ही तनाव के बादल छंट गए।

चलते-चलते नया प्रोग्राम बना कि सिर्फ डा० दादा और दिनेश एक अखबार 'इण्डिया टाइम्ज़' के दफ्तर में जाएंगे, जो बिलकुल पास ही पड़ता है। अगर समय रहा तो किसी समाजसेवी पार्टी के दफ्तर भी जाएंगे और उस पार्टी की सहायता से किसी वकील के घर भी हो आएंगे। अंकल, शैल और श्यामा को लेकर घर पहुंचेंगे। दोपहर का भोजन करते ही सब लोग वापस घर की तरफ चल देंगे। अगर चिटमौला पहुंचने में देर हो गई तो रात सब लोग मंडवा गांव में डा० दादा के एक परिचित परिवार में काटेंगे और सुबह होते ही दमकड़ी गांव को चल देंगे। अगले महीने की तनखा अक्ल किसी आते-जाते आदमी के हाथों या मनीआर्डर से, महीने दर महीने दमकड़ी गांव भिजवाते रहेंगे। मान इसी के लिए दिनेश को शहर आने की जरूरत नहीं पड़ेगी।



तीसरे दिन दादा, दिनेश, शैल और श्यामा जब दमकड़ी गांव लौटे तो सूरज पहाड़ों के पीछे ओझल होने की तैयारी कर रहा था। श्यामा और शैल तो बिना रुके पहरुआ की तरफ चल दिए, लेकिन दादा और दिनेश दवाईखाने में सामान रखने के बाद थोड़ा सुस्ताकर सीधे बितवा के घर जा पहुंचे।

बितवा की बड़ी बेटी चूल्हे पर रोटियां सेंक रही थी और दूसरी दो बेटियां चूल्हे के सामने बैठी आग ताप रही थीं। बितवा का पति एक तरफ मैले से कपड़े में लिपटा ज़मीन पर गठरी-सा बना हुक्का पी रहा था और बितवा सिल पर बट्टे से कोई चीज़ पीस रही थी। सारा घर चूल्हे और हुक्के के धुएं से भरा था और धुआं भी जैसे ठंड के मारे जम सा गया था।

दादा को देखते ही बितवा का पति उठ बैठा, इस अन्दाज़ में जैसे आई मुसीबत से सामना किए बिना दूसरा कोई चारा ही न हो। बितवा ने भी दादा का ठण्डे मन से स्वागत किया। दोनों लड़कियां चूल्हा छोड़

एक कोने में चली गई और दुबककर बैठ गई।

डा० दादा ने वितवा के पति को खुशखबरी सुनाई, "हम सीधे राजधानी से आ रहे हैं। एक वकील का बन्दोबस्त कर लिया गया है। खर्चे का भी एक पार्टी के दफ्तर से प्रवन्ध हो गया है। अब बस कागजों पर तुम्हारे और गोमा के अगूठों की जरूरत पड़ेगी।"

वितवा के पति ने कोई जवाब नही दिया। वह उसी तरह शांत भाव से हुक्का गुड़गुड़ाता रहा। वितवा भी सिलबट्टा छोड़ चूल्हे की लकड़ियां ठीक करने में तल्लीन हो गई।

डा० दादा कुछ देर वितवा और उसके पति की खामोशी को देखते रहे और झुंझलाकर बोले, "क्या कहते हो भाई?"

अब वितवा का पति खौलती हुई आवाज मे चीखा, "डाकधर दादा आप हमारे पीछे हाथ धोकर क्यों पड गए हैं। आपको क्या मिलेगा हम गरीब लोगों को बरबाद करके? आप हमे क्यों चैन से नही रहने देना चाहते? लडकी हमारी खराब हुई है, लुटे हम है, तो कुछ नहीं बिगड़ा। आप क्यों परेशान हो रहे हैं फजूल में?"

दादा का जैसे खून जम गया, "मैं आप लोगों को परेशान कर रहा हूं?"

"परेशान क्या हमारी नीद हराम कर रखी है आपने। आप उस बेसमझ मास्टर के बहकावे में आ गए हैं। अब उस बच्चे परदेशी को क्या पता कि बड़े लोगों के साथ मत्था लगाने का क्या नतीजा निकल सकता है। आप तो समझदार है, इधर के हालात जानते है, पर आप भी···" वितवा पल्लू में मुह छिपाकर सुबकने लगी।

वितवा को रोती देख दादा सकपका गए। उनके मुंह से बस इतना ही निकल सका, "मैं तो आप लोगों के लिए ही···"

"क्यों, हमारा ही भला किसलिए?" वितवा मुंह से पल्लू हटाकर फिर उबल पड़ी। "किसना और उसकी बेटी का भला क्यों नही करते। उनके अंगूठे क्यों नही लगवाते। कागजों पर हमारे ही अंगूठे आपको ज्यादा अच्छे क्यों लगते हैं!" वह फिर पल्लू मे मुंह छुपाकर सुबकने लगी।

"क्यों किसना और उसकी बेटी के अंगूठे किसलिए?" दादा को लगा कि दाल में कुछ काला है।

"उनके साथ भी शिकारी ने इसी तरह दिन दहाड़े···"

"क्या बके जा रहे हो !" वितवा ने झिड़ककर अपने पति को चुप करा दिया। अगर रायसाहब या ओझा ने तुम्हें ही गवाही के लिए धर लिया तो उससे बचने का कोई जुगाड़ है तुम्हारे पास ?···"

अब डा० दादा खड़े हो गए। अब उन्हें लगने लगा कि धुएं से भरे इस मकान मे उनके लिए एक पल ठहरना भी नामुमकिन है। वे थोड़ी देर और रुके तो बेहोश होकर गिर जाएंगे। वे एक झटके के साथ द्वार ठेलकर बाहर आ गए। बाहर आकर उन्होने ताज़ी हवा को गहरे सासों के साथ पाच-सात बार फेफड़ों मे खीचा, फिर बिना कुछ बोले दवाईखाने की ओर चल दिए।

दिनेश, जो बाहर खडा अन्दर बुलाए जाने की प्रतीक्षा कर रहा था, दादा की इस तरह की हालत देख पीछे-पीछे चल दिया। वह समझ गया कि कोई ज्यादा ही बडी गड़बड़ है, छोटी-मोटी बात पर दादा इस तरह से मौनी बाबा नही हो सकते।

थोड़ी दूर चलने के बाद जब दादा गांव के मकानो की गरमाहट से बाहर आ गए तो रुके। पीछे छूट गया दिनेश जब बिलकुल पास आ गया तो बोले, "इन लोगों की मदद करना गधे को नमक देने से रत्ती-भर भी कम नही है। मैंने तुम्हें पहले ही समझाया था।"

"क्यों ऐसी क्या बात हुई ?" दिनेश दादा के साथ-साथ चलने लगा।

दादा ने क्मिना की बेटी का किस्सा फिलहाल दिनेश को बताना मुनासिब नही समझा। उन्हें भय हुआ कि बताने से कही वह इसी वक्त तैश मे आकर तम्बुओं की ओर न चल पड़े। इस दर्दनाक जानकारी के ज़हर को वे अपने अन्दर ही पचाकर बोले, "वितवा और उसका पति कहते हैं कि हम खामखाह उनके पीछे हाथ धोकर पड़ गए हैं और यह भी कि हमें क्या ज़रूरत पड़ी है कि हम उनकी नींद हराम कर रहे हैं।"

"ऐसा कहा उन्होंने ?"

"अरे यही नही, और भी बहुत कुछ कहा।"

इसके बाद दोनों चुपचाप चलते रहे, जैसे उनकी ज़बान किसी ने काट ली हो। दादा ने थरथराते हाथों से दवाईखाने का ताला खोला। इधर-उधर माचिस ढूंढ़कर लैम्प जलाया। फिर दिनेश को मूढ़े पर बैठने का इशारा

करके वे रसोई वाले कोने में दिनेश की तरफ पीठ करके बैठ गए।

दिनेश को दादा की हिलती पीठ से लगा जैसे दादा सुबक रहे है। उनके मन को वितवा और उसके पति ने गहरा आघात पहुंचाया है। दादा इस आघात को बर्दाश्त नहीं कर सके है। उसने दादा के घाव पर मरहम लगानी चाही, "वे लोग तो बहुत ही मासूम हैं डा० दादा, उनकी बातों का बुरा नही मानना चाहिए।"

"अरे नही, बुरा किसने माना है। मैं नहीं जानता क्या, मैं इन लोगों में पिछले बीस साल से रह रहा हूं। मुझे दुःख इस बात का है कि इनको अपने फायदे और नुकसान का भी पता नही है।"

दादा ने चेहरा दिनेश की तरफ किया तो दिनेश शर्मिन्दगी की आंच से झुलस उठा। दादा की आंखों में पानी तो क्या उनके चेहरे पर भी कही पस्तदिली के भाव नही थे। तो फिर उसे दादा सुबकते हुए महसूस क्यों हुए? कहीं वह स्वयं तो नही अपने अन्दर कहीं गहरे मे सुबक रहा था? क्यों वह क्यों सुबकने लगा? वह किसी स्वार्थ के वशीभूत होकर थोड़े ही यह सब प्रयत्न कर रहा है कि थोड़ी-सी असफलता को देखते ही सुबकने लगेगा। तो फिर सुबकने का यह घटिया विचार उसके दिमाग में आया कैसे? जरूर उनके अन्दर कहीं न कहीं कमजोरी का कोई खाना है। अविश्वास या अनास्था से भरी कोई ग्रन्थी है। नही तो यह घिनौना भाव उसके अन्दर पैदा हो ही नहीं सकता था।

वह अन्तर्द्वन्द्व की सुरंग मे उतरा ही था कि दादा ने उसे टोका, "अंधेरे मे रहते-रहते इन लोगों को अंधेरे में ही रहने की आदत पड गई है। अब कहीं से रोशनी की कोई किरण इनको दिखाई पड़ती है तो ये चौंध लगने मे तिलमिला उठते हैं। अंधेरे से बाहर आने के बजाय किरण से डरने या उसे नेस्तनाबूद करने में जुट जाते हैं। अब तुम ही बताओ कि ऐसी हालत मे इनको सूरज के सामने कैसे खड़ा किया जा सकता है?"

दिनेश कुछ क्षण दादा के सवाल पर सोचता रहा फिर दादा से असहमति जाहिर की, "दादा, अंधेरे से प्यार होने में बहुत वक्त लगा होगा?"

"हां, वह तो जरूर लगा होगा।"

"फिर एकदम चुटकी बजाते ही हम इनसे रोशनी से प्यार करने की उम्मीद कैसे कर सकते हैं?"

"नहीं, वह तो नहीं कर सकते।"

"जितनी देर इनको अन्धेरे को अपना समझने का अभ्यास करने में लगी है, उतना नहीं, उससे आधा भी नहीं, चलो हज़ार गुना कम ही सही, लेकिन रोशनी को फिर से अपना समझने का अभ्यास करने का इनको वक्त तो मिलना चाहिए।"

इधर स्टोव पर बिना दूध के रखा चाय का पानी उबल कर बाहर आ गया। दादा बात को बीच में छोड़ उसको गिलासों में डालने के लिए उठ गए। एक गिलास खुद लेकर और दूसरा दिनेश के हाथों में थमाकर वे फिर उसके सामने आ बैठे। दोनों गर्म चाय को धीरे-धीरे सिप करते हुए काफी देर तक इस विचार के साथ लड़ते रहे।

थोड़ी सहमति पर पहुंचे तो दादा आटा मलकर खाना बनाने में लग गए। दिनेश 'इण्डिया टाइम्स' के सम्पादक के साथ हुए फैसले के मुताबिक टिप्पणी तैयार करने मे जुट गया। अभी-अभी दादा के साथ हुई बातचीत मे उभरे कुछ नये मुद्दों को वह ठण्डा नहीं होने देना चाहता था। पिघले *हुए विचारों को शब्दों के साचे मे तुरन्त ढाल लेना चाहता था।*

खाना खाते-खाते उसने लिखे कुछ पहरे दादा को सुनाए। दादा सच-मुच में उसकी कलम के प्रशंसक हो गए। दिनेश उस अंग्रेज शिकारी से भी ज्यादा अच्छा गद्य लिख सकता है, इसका उनको विश्वास नहीं था।

खाना खाने के बाद दिनेश डा० दादा के ही यहां रुक गया। इतने गहरे अंधेरे मे स्कूल की कोठरी में जाने की कोई तुक नहीं थी। अपनी-अपनी जगह लेटे रहकर भी वे दोनों विचारों के ज्वार भाटे मे सारी रात जागते रहे।



सूरज निकलते ही डा० दादा के पास मरीजों का आना शुरू हुआ तो दिनेश बगैर दूध की चाय पीकर स्कूल चला आया। पूरे डेढ़ महीने में स्कूल सिर्फ डेढ़ दिन लगा था। और वह भी चार बच्चों को लेकर। उसके दिमाग में आया कि वह सरकार से तनखा किस चीज़ की लेकर आया है? उसने फिर से स्कूल को चालू करने का फैसला किया। फैसला किया कि

वह बच्चों को स्कूल के कमरे में न पढ़ाकर गांव में ही जाकर पढ़ाएगा। सुबह एक गांव और शाम दूसरे गांव। इस तरह से उसका लोगों से मेल-जोल भी बढ़ेगा और उनकी ज़िन्दगी को समझने का मौका भी मिलेगा। शुरू वह सूरज और रूपा को लेकर दमकड़ी गांव से ही करेगा और दूसरा गाव होगा पहरुआ !

सूरज और रूपा का ध्यान आते ही उसे ख्याल आया कि पूरे चार दिन से वह उनसे नहीं मिला। दादा भी नहीं मिले। बस अपने झंझटों में ऐसे उलझा कि उनका ध्यान ही नहीं आया। शायद उनको हमारे शहर से लौटने का पता ही नहीं चला होगा, नहीं तो ऐसा हो ही नहीं सकता था कि वे दादा के दवाईखाने में न आते और आकर अपने लिए शहर से लाई गई किसी चीज़ की मांग न करते।

उसने दोनों के लिए लाई गई नई कमीज़ें झोले से बाहर निकाली और उल्टे पैर फिर दमकड़ी जाने का फैसला कर डाला। अभी वह बाहर निकलकर ताला ही लगा रहा था कि पीछे से किसी की आवाज़ सुनाई दी, "कहीं जा रहे हो ?"

मुड़कर देखा तो दराती हाथ में और कन्धे पर रस्सी लिए श्यामा खड़ी थी। "हां, सूरज और रूपा को उनकी ये कमीज़ें देने चला था।"

"अभी तक अपने पास ही संभाले हुए हो इन्हें।"

"कल तो तुम लोगों से अलग होते ही वितवा के यहां चले गए। वहां जाने के बाद निराशा ने ऐसा घेरा कि इन बेचारों का ख्याल ही नहीं आया। लेकिन तुम अकेली ? शैल क्यों साथ नहीं आया ?" दिनेश ने दरवाज़ा खोल दिया और श्यामा के बैठने के लिए कुर्सी बाहर निकालने लगा।

"नहीं, कुर्सी बाहर मत निकालो, मैं अन्दर ही बैठना चाहती हूं।" बोलकर वह बेझिझक कोठरी में चली आई, "तुम यहां बैठो।" कुर्सी की तरफ इशारा करके वह स्वयं खाट पर बैठ गई।

"क्यों, कोई खास बात है ?" दिनेश कुर्सी पर बैठ गया और उसने कमीज़ें श्यामा की बगल में खाट पर रख दी।

"यहां कभी कोई आम बात भी होती है क्या ?"

"तुम्हें तो ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए ! तुम तो इन सब की आदी हो चुकी हो।"

"आदत भी कभी-कभी विद्रोह किया करती है और तब तो और भी ज्यादा जब आदमी हर कदम पर अपने आपको असुरक्षित अनुभव कर रहा हो।"

"असुरक्षा का भाव और तुम्हारे मन में! कैसी विचित्र बात कर रही हो तुम।"

"नहीं दिनेश, मैं सचमुच में इस वक्त असुरक्षा के भाव में जी रही हूं। शहर जाने के बाद मुझे पता चला कि हम गरीबों का तो कोई भी नहीं है। गरीबी हटाने का दम भरने के नाम पर सत्ता में आने वाले भी नहीं। सब हमारा खून चूसने वाले हैं। संरक्षण के नाम पर भक्षण करने वाले है सब लोग। इधर बितवा की बेटी गोमा···और उधर किसना की बेटी सन्ती···यह भी सुना है कि कुछ दिन पहले रायसाहब के सेठ के बगीचे में भी एक आदिवासी लड़की के साथ··· क्या ऐसी ही घटना किसी दिन···"

"क्या मतलब?"

"मतलब यह कि ऐसी बेइज्जत कर देने वाली घटना घट जाने के बाद भी आदमी क्या औरत को स्वीकार करने की मनःस्थिति मे होता है? उसे प्यार कर सकता है?" बरबस श्यामा का हाथ उठा और दिनेश के आपस मे गुथे हाथो पर चला गया। दिनेश के हाथों ने श्यामा के हाथ का स्वागत किया। उसे लगा जैसे श्यामा का हाथ बुखार में तप रहा है। उसे वह तपिश बहुत भली लगी। लगा जैसे उसके शरीर के पोर-पोर में वह तपिश समा गई है। वह श्यामा के सवाल का जवाब देने ही जा रहा था कि सामने की पगडण्डी पर उसे घोड़ों पर सवार दो बन्दूकधारी आते दिखाई दिए। उसका जवाब उसके पास ही रह गया। उलटे डी० ई० ओ० के आफिस मे गई चिट्ठियो की याद हो आई। वह यह बोलकर खड़ा हो गया, "देखो सामने पता नही कौन लोग आ रहे हैं! तुम्हारा इस तरह मेरे पास अकेली होना···तुम शैल को साथ क्यों नही लाई?···"

"मैं नही समझती कि अब हमें किसी से इस तरह डरना चाहिए। प्यार करना कोई अपराध नहीं है और फिर हम कोई बच्चे नहीं हैं कि हमें अपने भले-बुरे का भी···"

"लेकिन बगालिन मा भी तो···मेरा मतलब है···"

"मा को मैंने सब कुछ बता दिया है। इसी का तो नतीजा है कि आज

मेरे साथ डील नहीं है।…"

श्यामा का इतना खुला और बेबाक रूप दिनेश सहन नहीं कर सका। उसे लगा जैसे अचानक उसने किसी औरत के बदसूरत बदन को निर्वस्त्र देख लिया है। वह इस दुर्घटना के लिए कतई तैयार नहीं था। एक झटके के साथ वह बाहर आ गया और बड़े कमरे के पास खड़ा होकर घुड़सवारों का इंतज़ार करने लगा।

घुड़सवारों ने आते ही दिनेश से पूछा, "इस स्कूल के नये मास्टर दिनेश आप ही हैं?"

दिनेश ने स्वीकारात्मक सिर हिला दिया।

उनमें से एक ने हुक्म सुनाने के लहजे में सूचना दी, "आपको रायसाहब ने बंगले पर याद किया है।"

"क्यों क्या बात है?…मेरा मतलब है किसलिए बुलाया है?" दिनेश के लिए यह सब भी बहुत कष्टदायक और अजीब था।

"यह तो आपको वहीं जाकर पता चलेगा।" दूसरे घुड़सवार की आंखों में शरारत खेलने लगी।

दिनेश चुप रहा।

"हम जाकर रायसाहब को क्या खबर दें?" पहले ने दिनेश को चुप देखकर पूछा।

"कह दीजिए कि मुझको उनका बुलावा मिल गया है।"

"लेकिन आप आ कब रहे हैं?"

"मैं अपनी फुरसत के बारे में उनको सूचित करवा दूंगा।"

दोनों घुड़सवार दिनेश को हैरत से घूरने लगे। एक-दो दमड़ी के मास्टर से उन्हें ऐसे व्यवहार की कतई आशा नहीं थी। उनका विश्वास था, कि मास्टर हाथ जोड़कर उनके साथ ही चल देगा। उन दोनों को दिनेश शहर का कोई छंटा हुआ बदमाश लगा। वे उसको माथे पर हाथ लगाकर सलाम करके चल दिए। ऊपर के अधिकारी ने उन्हें केवल बुलावा पहुचाने का ही आदेश दिया था।

घुड़सवारों के जाते ही श्यामा भी कोठरी से बाहर आ गई, "क्यों रायसाहब ने किसलिए बुलाया है?"

"अब क्या कहा जा सकता है। लगता है मिनिस्टर से हमारे मिलने की सूचना उस तक पहुंच गई है।"

"लेकिन मिनिस्टर से तो हम परसों ही मिले
जल्दी सूचना···"

"इन लोगों के हाथ बहुत लम्बे हैं। इस वक्त
लम्बे। कुर्सी और रुपये की ताकत को तुम नहीं
क्या अगर ये लोग चाहें तो धरती को उल्टा लटक
तरह उसकी खाल खिंचवा लें। लेकिन इसमें डर
ज्यादा से ज्यादा वह मेरा बिगाड़ ही क्या सकता
छपते ही उसे पता चल जाएगा कि मेरा मरना कि
मरना नहीं है।"

"तो तुम जाओगे उसके बंगले पर ?"

"क्यों, नहीं जाना चाहिए ?"

"नहीं। बिलकुल नहीं !! तुम नहीं जानते
आदमी है। आदमखोर आदमियों का पूरा का पूर
के चारों तरफ।"

इसी समय उन दोनों को डा० दादा आते दि
के स्वागत में वे दोनों भी चलकर आगे तक पहुंच
दादा ने फुसफुसाती-सी आवाज़ में पूछा, "वो
मिले क्या तुम लोगों को ?"

"हां, बस पांच-सात मिनट पहले ही वापस
हुक्म सुना गए हैं कि उन्होंने बंगले पर याद फरम

"पहले मेरे पास ही पहुंचे थे। मुझे भी यही
लौटते हुए श्यामा के घर भी जाएं। मेरे ख्याल
जाकर मंत्री महोदय से मिलने की किसी ने मुखबर

"तो क्या हुआ ? एक न एक दिन तो रायसा
करना ही था, सो अभी हो जाएगा। लेकिन हमारी
किसी तरह अखबार को पहुंच जानी चाहिए और
सी० आई० डी० से बचकर।"

"देखो, रायसाहब के पास तुम और श्यामा
खुद ही उनसे मिलकर उनके मन की थाह ले
विश्वासपात्र आदमी को भेजकर, ऊपर के डाक
लेकिन ज़रा देर से पहुंचेगी ! रजिस्ट्री करवानी प

"कितनी देर से ?"

"यही कोई एक हफ्ता तो लग ही जाएगा।"

"इतनी देर ?"

"यह तो कम से कम समय बताया है। जंगली इलाका है ना और वह भी आदिवासियों का इलाका।"

"चलो कोई बात नहीं, पहुंच तो जाएगी। वैसे भी अगली रिपोर्ट सम्पादक महोदय ने हफ्ते-भर बाद ही मांगी थी। इस हफ्ते तो जो लिखकर दे आए हैं वही छपेगा। साथ ही उन्हें लिख रहा हूं कि अखबार की कापी हमें रजिस्ट्री से ही भेजें, जो खर्च होगा हम दे देंगे।"

"ठीक है! तुम दोनों मस्त रहो। मैं रायसाहब से मिलकर आता हूं।" कहकर डा० दादा तेज़ कदमों से सुमेरु की तरफ चल दिए।

"ठहरो डा० दादा, हम दोनों भी आ रहे हैं। अगर वो कुत्ते मेरे घर भी पहुंचे होंगे तो मां फिकर कर रही होंगी। हम दोनों उनके पास पहुंच जाएंगे तो उनको तसल्ली हो जाएगी।"

डा० दादा रुक गए। दिनेश ने किरच वाली लाठी बाहर निकालकर कोठरी को ताला लगाया और तीनों जल्दी-जल्दी पहरुआ तथा सुमेरु की तरफ जाने वाले रास्ते पर बढ़ चले।

● ●

श्यामा और दिनेश जब पहरुआ गांव पहुंचे तो सुचित्रा रसोई के काम से निबटकर पशुओं के बाड़े की धूप में बैठी हरिजन औरतों को सिलाई का काम सिखा रही थीं। घुटनों तक धोती के साथ वक्ष पर कसी हुई छोटी-सी बण्डी पहनने का आदिवासी औरतों में आम रिवाज था, सुचित्रा उन्हें बण्डी बनाना ही सिखा रही थी।

पिछले मास जब दिनेश के साथ लम्बी बातचीत हुई थी और दिनेश ने डा० दादा की यहां के लोगों को कुछ भी न सिखाने की शिकायत की थी, तभी से सुचित्रा के मन में गांव की औरतों को सिलाई का काम सिखाने की बात बैठ गई थी। पिछले सप्ताह से उन्होंने अपने मन की इस बात को साकार-रूप देना भी शुरू कर दिया था।

"तो आपको भी इस घटना का पता चल गया।"

"क्यों, ऐसी घटनाएं छुपी रहती हैं क्या ?"

"जी नहीं, छुपी तो नहीं रहतीं।"

"बलात्कार तो पहले भी इस इलाके में होते थे लेकिन छुप-छुपाकर, घास काटती या लकड़ी काटती औरतों के साथ बीहड़ जंगलों में। या रायसाहब की मिलों या बगीचों में होते थे। इस तरह घरों के बीच सरेआम औरत की इज्जत लुटने की घटना तो मैंने अपनी जिन्दगी में पहली बार सुनी है; और वह भी औरतों और मर्दों की उपस्थिति में। जैसे जान-बूझकर उनकी नामर्दगी का मजाक उड़ाने के लिए ही यह सब किया गया हो।"

"मैं भी आपकी ही तरह हैरान और परेशान हूं। मुझे यहां आकर ही यह पता चला है कि आदमियों की एक नस्ल ऐसी भी है कि अगर उनका गला भी काटा जाए तो भी वे विरोध करने के लिए तैयार नहीं हैं। दरअसल विरोध नाम की कोई चीज इनके रक्त में है ही नहीं।"

"यह नस्ल ऐसी थी नहीं, बना दी गई है। नहीं तो इनके पूर्वजों का इतिहास तो बहुत बहादुरी और दिलेरी का इतिहास है। कई बड़े-बड़े युद्ध लड़े हैं इस कौम ने और वह भी शक्तिशाली अंग्रेजों के खिलाफ। अब जिस दिन से देश आज़ाद हुआ है, तब से पता नहीं इसको क्या हो गया है।"

"हो क्या गया है, सबकी चेतना को एक खास किस्म के सम्मोहन के नशे में सुला दिया गया है। एक सोची-समझी साजिश के तहत। चेतना सो जाने पर ही तो इंसान खस्सी हुए बैल की तरह भ्रष्ट व्यवस्था के जुए को अपने कन्धे पर स्वीकार करता है। धार्मिक पाखंडवाद ने भी आदमी को बैल या भेड़-बकरी बनाने में बहुत बड़ी भूमिका निभाई है। भला यह भी कोई, किसी भी स्तर पर, बुद्धि द्वारा स्वीकार करने योग्य बात है कि जिस औरत के साथ बलात्कार हो उसे सबूत के रूप में अग्नि-परीक्षा देनी पड़े। इससे बढ़कर रूढ़िवादिता और क्या हो सकती है ?"

"लेकिन यह रिवाज तो सिर्फ आदिवासियों में है।"

"किसी में भी हो लेकिन है तो सरासर बेवकूफाना और अन्यायपूर्ण। आखिर आदिवासी भी तो आदमजात हैं, उनमें बाबा आदम के जमाने के जानवरी असूल आखिर कब तक चलते रहेंगे ? यही वह असूल है जिसकी

वजह से रावर्ट की वासना का शिकार हुईं दोनों लड़कियां और उनके परिवार रावर्ट के खिलाफ आवाज तक उठाने के लिए तैयार नहीं हैं, और मज़े की बात यह है कि दूसरे लोग भी इन घटनाओं को इस तरह छुपा रहे हैं कि डा० दादा को मरीज़ों के मुख से इन्हें उगलवाना पड़ा है, उन्होंने अपनी तरफ से कुछ भी बताने की ज़रूरत नहीं समझी।"

"मैं तो पहले ही कहती हूं कि इन लोगों जैसे बदजात लोग शायद ही इस धरती पर किसी दूसरी जगह होंगे।" अब तक चुपचाप बातें सुनती श्यामा की आवाज़ उफनी थी।

"दरअसल रायसाहब और ओझा का आतंक ही इतना ज़्यादा है कि उसने सबको जड़ बना दिया है। जड़ता का एक कारण यह भी है कि कहीं कोई सुनवाई ही नहीं है। कानून, पुलिस, सेना सब इन लोगों के हाथ की कठपुतलियां हैं। मुझे ही देखिए, मैं भी श्यामा को लेकर इतनी परेशान और भयभीत रहती हूं कि बता नहीं सकती। चाहती हूं कि जितनी जल्द हो सके इसके हाथ पीले कर दूं। फिर यह जाने और इसका पति, मेरी ज़िम्मेदारी खत्म।"

अपने ब्याह की बात शुरू हुई तो श्यामा के अन्दर भी एक साधारण लड़की जाग उठी। वह भी एक आम लड़की की तरह शरमाकर उठ खड़ी हुई और चाय बनाने के बहाने रसोईघर में पहुंच गई। अन्दर से ही भनक लेने लगी कि शुरू हुई बात आगे कैसे बढ़ती है।

"हां, आप ठीक ही तो सोच रही हैं। इस इलाके में किसी के साथ भी किसी वक्त कुछ भी घट सकता है। लेकिन श्यामा जैसी बहादुर लड़की की तरफ आंख उठाकर देखने का साहस भला कोई कैसे…"

"नहीं बेटा, औरत चाहे कैसी भी हो, वह शारीरिक ताकत के नज़रिए से पुरुष का मुकाबला नहीं कर सकती, फिर जहां रावर्ट जैसे राक्षस आ बसे हों। देखो, तुम हां करो तो मैं श्यामा की शादी तुम्हारे साथ कल ही कर सकती हूं।"

दिनेश के सामने बछड़े को गिराकर उसकी नाक में नकेल डालने का दृश्य कौंध गया। उसे लगा कि उसे भी बछड़े की तरह घेरा जा रहा है। और फिर नकेल डल जाने के बाद वही कोल्हू के गिर्द की दस गज जगह का आंखों पर पट्टी बांधकर उम्र-भर का चक्कर। एक क्षण के लिए उसे मीना का भी ख्याल आया। ख्याल आया कि हो सकता है वह उसका

इन्तज़ार ही कर रही हो। और फिर इन आदिवासियों का जनजागरण। उसके मुंह से निकल गया, "नहीं माताजी, अभी शादी करने का मेरा कोई इरादा नहीं है।" और वह खड़ा हो गया जैसे अब बस चलना चाहता है।

"तो क्या श्यामा ने मुझे बेमतलब•••" सुचित्रा भी मन में उग आए शर्मिन्दगी के दर्द को हाथों में मलती खड़ी हो गई।

"कह नहीं सकता कि श्यामाजी को यह गलतफहमी कहां से हो गई। मैंने तो कभी उनके सामने ऐसी कोई हरकत•••मेरा मतलब है मैंने श्यामा जी जैसी बहादुर लड़की के बारे में ऐसा कभी सोचा ही नहीं।"

"तो क्या उसकी बहादुरी तिरस्कार पाने के लिए ही बनी है।•••उफ, कितना गलत सोच गई वह भोली बच्ची।" सुचित्रा थरथराते होंठों में ही बुदबुदा गई।

दिनेश को लगा जैसे उसका दम घुट रहा है। अगर वह थोड़ी देर और वहां खड़ा रहा तो चक्कर खाकर गिर पड़ेगा। दिनेश ने एक बार, इस बार सचमुच में पिघल आई सुचित्रा की बड़ी-बड़ी आंखों में देखा और वह बुदबुदाहट का बिना कोई जवाब दिए कमरे से बाहर आ गया।

लेकिन इस बार बाहर खड़े कुत्ते उसे देखते ही दुम हिलाने लगे। वह उनके बीच से निकलकर सीधा चट्टानों के बीच उतर गया जैसे चट्टानों के सिरों पर से होकर जल्द से जल्द पहरुआ की सीमा से बाहर हो जाना चाहता हो।

लेकिन थोड़ी दूर निकल जाने के बाद ही उसे कुत्तों के भौंकने की आवाज़ें सुनाई देने लगीं। जैसे कुत्तों को श्यामा के साथ घटी इस दुर्घटना का थोड़ी देर बाद ही पता चला हो।

● ●

शाम तक डा० दादा जब रायसाहब से मिलकर दिनेश की कोठरी में पहुंचे तो दिनेश को उन्होंने किसी असाध्य रोग से पीड़ित मरीज की तरह कम्बलों में लिपटा पाया। "क्यों क्या हुआ? तबीयत तो ठीक है ना!" वे खाट पर बैठकर उसकी नब्ज देखने लगे।

"हां ठीक है। दादा तुम ही बताओ, तुमने कभी पाया है कि मैंने

श्यामा को कभी ऐसी-वैसी नजर से···"

"मुझे सब पता है। मैं सुचित्रा के पास से ही होकर आ रहा हूं।" दादा ने उसे बीच में ही टोक दिया।

"तो फिर ?" दिनेश सीधा होकर बैठ गया।

"इसमे बीमार पड जाने वाली तो ऐसी कोई बात नही।" डा० दादा के होठों पर शरारत की मुस्कान खेलने लगी।

दिनेश उस मुस्कान से आहत हो उठा। "आपके लिए यह कोई बात नहीं है। बंगालिन मां तो ब्याह का मण्डप सजाए बैठी हैं। उनको इस बात का पता ही नही है कि मैं श्यामा के प्रति कितनी पवित्र भावनाएं रखता हूं। मुझे लगता है श्यामा खुद भी बहुत अंधेरे मे है। और आप कहते हैं कि कोई बात ही नही है।"

"इसमें ना बंगालिन मां का दोष है और ना श्यामा का। हर मां अपनी जवान बेटी के लिए कोई आदर्श और पसन्द का वर ढूढ़ना चाहती है और लडकी भी अच्छा पति पाना चाहती है। और जो तुम पवित्र भावना वाली बात कह रहे हो, वह कोरा बहाना है। प्यार से बढ़कर पवित्रता कोई दूसरी नही होती। तुम्हारे जैसे यथार्थवादी लेखक के मुख से इस तरह का दकियानूसी तर्क शोभा नही देता। दरअसल मैंने भी तुम्हें शुरू से ही श्यामा के लिए इसी रूप मे देखा था, इसीलिए जब बंगालिन मां ने तुम दोनों में फैलती बातों की मुझसे चर्चा की थी तब मैंने ही उन्हें आश्वस्त कर दिया था कि दिनेश भी श्यामा को चाहता है, एक न एक दिन उसकी श्यामा से शादी हो जाएगी। पर मेरा अन्दाजा गलत निकला। लेकिन मैं जानना चाहता हूं कि मेरी अक्ल ने मुझे धोखा क्यों दिया है ?"

दादा की बातें सुनकर दिनेश पर जड़ता छा गई। अक्ल दादा की, और धोखा दादा को मिला, वह इस सवाल का क्या जवाब देता ?

कुछ देर तो दादा दिनेश के जुबान खोलने की प्रतीक्षा करते रहे पर जब वह आंखें भी नहीं उठा सका तो अपने ही मन के दर्द से पीड़ित हो उठे, "देखो, मुझसे कुछ भी छुपाने की कोशिश मत करो। मैंने तुम्हें सगे बेटे से बढ़कर माना है और एक भावुक बाप का प्यार दिया है।···दरअसल उस अंग्रेज लेखक ने भी मुझे कुछ ऐसा ही भावुक प्यार दिया था। मैं उस प्यार का बदला तुम्हारे पर चुकाने की जिन्दादिली में आ गया। लेकिन तुम !···तुम हो कि !···तुमने मेरी शांत जिन्दगी मे अशांति लाकर खड़ी

कर दी। मैं डाक्टर के रूप में चंगा-भला लोगों की सेवा करके चैन र
जिन्दगी जी रहा था, तुमने मुझे जनता में जागृति पैदा करने के चक्कर
डालकर, एक नये अबूझ रास्ते पर धकेल दिया। क्या इस तरह से'''र
दूसरे से मन की बातें छुपाकर, हम लोग जनता मे जागृति पैदा करेंगे
जागृति पैदा करने का तुम्हारा रास्ता इस तरह का है ?"

दिनेश को लगा जैसे वह दादा के तर्कों के सामने थोथा पडता जा र
है। उसे डा० दादा की आंखों में बाप के साथ एक विश्वासपात्र मित्र
प्यार चमकता हुआ दिखाई दिया। उसने डा० दादा के सामने अपने म
की ग्रन्थी खोल दी, "मुझे मुआफ करना डा० दादा, मैंने यह बात आप
पहले नही बताई। दरअसल कभी मौका ही नहीं मिला। मेरा, मेरे ग
दसूहा मे एक दूसरी लडकी इंतजार कर रही है।"

"दूसरी लड़की ?"

"हां दादा। मेरे बचपन की साथी है वह। नाम है मीना। मैं
सच पूछो तो मन के सम्पूर्ण उल्लास और बेमब्री के साथ उसी के लि
समर्पित हूं। दूसरे, उस लडकी के भी बेइंतहा अहसान हैं मुझ पर। आ
मैं इस रूप मे आपका प्यार पाने के काबिल हूं तो उसी के अहसानों
बदौलत।"

"हूं SSS ! तब तो बेचारी श्यामा के साथ बहुत ज्यादती हो गई
वह तुम्हारे सद्व्यवहार को कुछ और ही समझ बैठी। तुम सच मा
दिनेश, मैंने उस शेरनी की आंखों मे पहली बार परास्त होने का भाव प
है।"

"मैं क्या कर सकता हूं डा० दादा !'''तुम्ही बताओ मैं क
करूं ?"'''

"मैं तुम्हारी स्थिति समझ गया हूं दिनेश। तुम चिन्ता मत करो
वह कोई साधारण लडकी नही है। इस हादसे को भी शायद वह दिले
से बर्दाश्त कर लेगी। हा तो तुमने यह नहीं पूछा कि रायसाहब के म
मेरी मुलाकात कैसी रही।"

"बताइए कैसी रही ?"

"रायसाहब बहुत अपनत्व के भाव से मिले। बोले, हम लोगों
उन्होने इसलिए बुलाया था कि वे स्कूल के लिए एक कमरा दान के र
मे बनवाना चाहते हैं। बोले, जब दिनेश जैसा योग्य मास्टर इन इलाके

च्चों के बैठने की जगह भी अच्छी होनी
ना चाहते हैं। बोले, मेरी तरफ से निवेदन
ो फुर्सत के वक्त मुझसे जरूर मिलें।"

मिल गया है तो स्कूल में ब"
चाहिए। वे तुमसे भी मिल
कीजिएगा कि मास्टरजी कि ने की उनको कोई सूचना नहीं है?"

"क्या कह रहे है आप? ोई सूचना है। लेकिन वह है बड़ा काईया!

"ठीक कह रहा हूं?" बिना आज की दोगली और भ्रष्ट राजनीति

"तो क्या हमारे शहर ज़ाता है!"

"मुझे तो नहीं लगा कि साथ भी कोई दोगली कूटनीति चला रहा
नेता जो ठहरा। काईयां हुए।
में आदमी कितने दिन टिक स

"मेरे ख्याल से वह हमा डा० दादा। यह हो नहीं सकता कि हमने
है।" सका रायसाहब को कुछ पता ही न चला

"तो?" उसकी कितनी तारीफ कर रहा था।"

"हमें सचेत रहना चाहिए लेकिन सचेत इस तरह कम्बलों में लेटकर
जो कुछ किया और सोचा है, निकर मेरे साथ चलो। थोड़ा टाइम मरीजों
हो! देखा नहीं था, मिनिस्ट ागे की बात बताऊंगा।"

"सचेत तो हम रहेंगे ही ार हो गया। पैंट पहनते हुए सहसा उसे
नहीं रहा जाता। तुम तैयार हपने राबर्ट के अत्याचारों के बारे में कोई
को देंगे और उसके बाद तुम्हे

दिनेश कम्बल छोड़कर स ा मौका ही नहीं मिला। उनके सेब के
राबर्ट का ध्यान हो आया, "आधक महिला के साथ बलात्कार हुआ है।
बात नहीं छेड़ी?" र दी है। वे भी उसी मामले को लेकर

"नहीं, इस बात को छेड़ने
बगीचे में भी किसी आदिवासी के क्या?"
इस महिला ने शिकायत भी कवक्त रायसाहब के ही पास कटता है।
ओझा के साथ उलझे हुए थे।" ट से दवाएं रखने के लिए ओझा बहुत

"ओझा हमेशा वहीं रहता रा।"

"सुना है, उसका ज्यादातर ो दौलत का क्या करते हैं? कहीं इनको
यहां की जनता को धार्मिक दृष्टि का शोषण करके धन-दौलत इकट्ठी
बड़ा हथियार है रायसाहब के प

"दादा, ये अमीर लोग इतनी ाल के आसपास
शराब या अफीम की तरह दूसरे

करने की लत तो नहीं पड़ जाती? इस लत को छुड़ाने का भी कोई इन्जैक्शन बनना चाहिए, तपेदिक या चचक की बीमारियों को खत्म करने वाले इन्जैक्शन की तरह। पैदा होते ही हर बच्चे के भेजे में लगा दिया जाए; जैसे एक दिन के मुर्गी के चूजे को लगाया जाता है। क्यों, नहीं?"

"तुम पैंट पहनकर बाहर निकलो, ये बातें हम वहीं करेंगे। मरीज दवाईखाने के बाहर बैठे मेरा इंतजार कर रहे होंगे!"

"सूरज और रूपा की ये कमीजें भी साथ ले लूं?"

"हां ले लो!"

दिनेश ने कोठरी में ताला लगाया और वह डा० दादा के साथ हो लिया। डा० दादा को अब वह काफी स्वस्थ दिखाई दे रहा था और आश्वस्त भी।

● ●

डा० दादा और दिनेश दवाईखाने पहुंचे तो बंद दरवाजों के बाहर मरीजों के साथ उन्हें सूरज और रूपा भी इंतजार करते मिले। उन्हें दूर से देखते ही सूरज और रूपा सरपट भागे और आकर दादा से लिपट गए। डा० दादा भी उनके स्पर्श से गद्गद हो उठे। दादा से लाड़ लड़ाने के बाद दोनों दिनेश से भी जा लिपटे। उसने भी सिर के रूखे बाल गुदगुदाकर उनको स्नेह दिया। और झोले से कमीजें निकालकर दोनों के कन्धों पर रख दीं। नई कमीजें देखते ही दोनों बच्चों की आंखों में चमक उभर आई और वे कुलांचें मारते हुए घर की तरफ भागे। वे कमीजें जाकर मां को दिखाएंगे, पहनकर गांव-भर में घूमेंगे और अपने हमजोलियों से पूछेंगे कि उन्होंने ऐसे चकाचक रंगों वाली कमीजें कभी ख्वाब में भी देखी हैं?

बच्चों के भाग जाने के बाद दोनों मरीजों के पास पहुंचे। उन मरीजों में डा० दादा को चार चेहरे आज अपरिचित लगे। दिनेश के लिए खाट बाहर निकालकर सबसे पहले उन्होंने उन नये चेहरों से ही निबटने का फैसला किया, "क्यों भाई; आप लोगों को क्या तकलीफ है?...जरा आगे चले आओ!"

"हमें कोई दवाई नहीं लेनी है डाक्टर साहब, हम तो आपके पास यूं

मिल गया है तो स्कूल में बच्चों के बैठने की जगह भी अच्छी होनी चाहिए। वे तुमसे भी मिलना चाहते हैं। बोले, मेरी तरफ से निवेदन कीजिएगा कि मास्टरजी किसी फुर्सत के वक्त मुझसे जरूर मिलें।"

"क्या कह रहे हैं आप ?"

"ठीक कह रहा हूं ?"

"तो क्या हमारे शहर जाने की उनको कोई सूचना नहीं है ?"

"मुझे तो नहीं लगा कि कोई सूचना है। लेकिन वह है बड़ा काईयां ! नेता जो ठहरा। काईयां हुए बिना आज की दोगली और भ्रष्ट राजनीति में आदमी कितने दिन टिक सकता है !"

"मेरे ख्याल से वह हमारे साथ भी कोई दोगली कूटनीति चला रहा है।"

"तो ?"

"हमें सचेत रहना चाहिए डा० दादा। यह हो नहीं सकता कि हमने जो कुछ किया और सोचा है, उसका रायसाहब को कुछ पता ही न चला हो ! देखा नहीं था, मिनिस्टर उसकी कितनी तारीफ कर रहा था।"

"सचेत तो हम रहेंगे ही ! लेकिन सचेत इस तरह कम्बलों में लेटकर नहीं रहा जाता। तुम तैयार होकर मेरे साथ चलो। थोड़ा टाइम मरीजों को देंगे और उसके बाद तुम्हें आगे की बात बताऊंगा।"

दिनेश कम्बल छोड़कर खड़ा हो गया। पेंट पहनते हुए सहसा उसे राबर्ट का ध्यान हो आया, "आपने राबर्ट के अत्याचारों के बारे में कोई बात नहीं छेड़ी ?"

"नहीं, इस बात को छेड़ने का मौका ही नहीं मिला। उनके सेब के बगीचे में भी किसी आदिवासी बंधक महिला के साथ बलात्कार हुआ है। उस महिला ने शिकायत भी कर दी है। वे भी उसी मामले को लेकर ओझा के साथ उलझे हुए थे।"

"ओझा हमेशा वहीं रहता है क्या ?"

"सुना है, उसका ज्यादातर वक्त रायसाहब के ही पास कटता है। यहां की जनता को धार्मिक दृष्टि से दबाए रखने के लिए ओझा बहुत बड़ा हथियार है रायसाहब के पास।"

"दादा, ये अमीर लोग इतनी दौलत का क्या करते हैं ? कहीं इनको शराब या अफीम की तरह दूसरों का शोषण करके धन-दौलत इकट्ठी

करने की लत तो नहीं पड़ जाती? इस लत को छुड़ाने का भी कोई इन्जैक्शन बनना चाहिए, तपेदिक या चेचक की बीमारियों को खत्म करने वाले इन्जैक्शन की तरह। पैदा होते ही हर बच्चे के भेजे में लगा दिया जाए; जैसे एक दिन के मुर्गी के चूजे को लगाया जाता है। क्यों, नहीं?"

"तुम पैंट पहनकर बाहर निकलो, ये बातें हम वहीं करेंगे। मरीज़ दवाईखाने के बाहर बैठे मेरा इंतज़ार कर रहे होंगे!"

"सूरज और रूपा की ये कमीज़ें भी साथ ले लूं?"

"हां ले लो!"

दिनेश ने कोठरी में ताला लगाया और वह डा० दादा के साथ हो लिया। डा० दादा को अब वह काफी स्वस्थ दिखाई दे रहा था और आश्वस्त भी।

● ●

डा० दादा और दिनेश दवाईखाने पहुंचे तो बंद दरवाज़ों के बाहर मरीज़ों के साथ उन्हें सूरज और रूपा भी इंतज़ार करते मिले। उन्हें दूर से देखते ही सूरज और रूपा सरपट भागे और आकर दादा से लिपट गए। डा० दादा भी उनके स्पर्श से गद्गद हो उठे। दादा से लाड़ लड़ाने के बाद दोनों दिनेश से भी जा लिपटे। उसने भी सिर के रूखे बाल गुदगुदाकर उनको स्नेह दिया। और झोले से कमीज़ें निकालकर दोनों के कन्धों पर रख दीं। नई कमीज़ें देखते ही दोनों बच्चों की आंखों में चमक उभर आई और वे कुलांचें मारते हुए घर की तरफ भागे। वे कमीज़ें जाकर मां को दिखाएंगे, पहनकर गांव-भर मे घूमेंगे और अपने हमजोलियों से पूछेंगे कि उन्होंने ऐसे चकाचक रंगों वाली कमीज़ें कभी ख्वाब में भी देखी हैं?

बच्चों के भाग जाने के बाद दोनों मरीज़ों के पास पहुंचे। उन मरीज़ों में डा० दादा को चार चेहरे आज अपरिचित लगे। दिनेश के लिए खाट बाहर निकालकर सबसे पहले उन्होंने उन नये चेहरों से ही निबटने का फैसला किया, "क्यों भाई; आप लोगों को क्या तकलीफ है?…ज़रा आगे चले आओ!"

"हमें कोई दवाई नहीं लेनी है डाकधर साहब, हम तो आपके पास यूं

ही आए है।" चारों में से एक ने आगे बढ़कर जवाब दिया।

"यूं ही आए हो?"

"जी हां।"

"यू ही तो ठीक है भाई पर इधर आने का कोई मक्सद त
आप लोग रहने वाले कहां के हैं?"

"हम लोग छदांग और चंगेरी गावों के रहने वाले है डाक्ध
एक आदमखोर बघेरे ने फतूर मचा रखा है। दो बच्चे और
पशु मारकर खा गया पिछले आठ-दस दिनों मे। घर से नि
कर दिया है सब लोगों का। सुना है इधर दमकड़ी में कोई शि
है। हम सब उसी को लेने आए हैं उस बघेरे को मारने
पहले से कुछ ज्यादा समझदार दिखाई देने वाले दूसरे आद
साफ की।

"लेकिन सरकारी शिकारी तो वहां रहता है।" दादा ने
धूप में चमकते पीले तम्बुओं की तरफ हाथ उठा दिया।

चारों आदमी तम्बुओं की तरफ देखने लगे। हालांकि त
डा० दादा के आने से पहले भी देखे थे, दूसरे लोगों से उनके
भी हुई थी, लेकिन तब उन्हें वहां जाने की हिम्मत नहीं प
अब भी उन्हें पहले की तरह डरावने लगे और लगा कि डा
साथ लिए बिना उन तक जाना खतरे से खाली नहीं है। अब तो
ने हाथ जोडकर दादा से प्रार्थना की "आप हमारे साथ चलकर
को हमारे साथ चलने के लिए कह दें तो बड़ा उपकार होगा।"

"नहीं, हम उस शिकारी को कुछ भी कहने की हालत मे
डा० दादा ने साफ इन्कार कर दिया और वे दवाइयों का ब
दूसरे मरीजों को देखने मे व्यस्त हो गए।

पर चारों आदमी डा० दादा का जवाब सुनकर भी उसी त
जैसे दादा का कहा उनकी समझ मे न आया हो या वे उसे मह
एक मज़ाक समझे हों।

दिनेश ने उन्हें समझाया, "शिकारी का ख्याल छोड़िए वन
इन समस्याओं का हल खुद ही तलाश करना सीखिए। वै
आदमी को ले जाना आपके लिए फायदेमंद साबित नहीं होगा।

चारों दिनेश के सुझाव को भी इस कान से सुनकर उ

निकाल गए। बल्कि उनमें से अभी तक कुछ भी न बोलने वाले चौथे आदमी ने तो घुटने टेककर दादा के पांव तक पकड़ लिए, "डाकधर जी, आप हमारे बुर्जुग है, इस मुसीबत की घड़ी मे आप ही हमारी मदद नही करेंगे तो और कौन करेगा ?"

पैरों के हाथ लगते ही डा० दादा उछलकर पीछे हट गए जैसे उनके पैरों में कोई काटने वाला आ घुसा हो। यह सोचकर कि आदमी अपने पैरों की ठोकर से ही असली अनुभव हासिल करता है, उन्होंने एक मरीज़ को उनके साथ करके अपना पिण्ड छुड़ा लिया, "चल वे छितरू, इनको सरकारी शिकारी के पास पहुंचाकर आ, मैं तेरे लौटते-लौटते तेरी दवाई तैयार करता हूं।"

छितरू के साथ जाना होता तो वे पहले ही चले गए होते। दादा का व्यवहार उन्हें बहुत बुरा लगा, पर क्या करते; और जिद करना उन्होंने मुनासिब नहीं समझा और वे छितरू के साथ चल दिए।

इधर डा० दादा मरीज़ों पर ही गुस्सा उतारने लगे, "क्या खाया था तुमने ? चावल ! तो मैं क्या कर सकता हूं ? जाओ, चावलों मे गाय का गोबर डालकर खूब पेट भरकर खाओ और चैन की नीद सो जाओ ! और तुम ! तुम्हारा घुटनों का दर्द ठीक नही हो रहा है ? मैं क्या करूं ? ओझा जादू-टोना नहीं करता क्या ? जाओ उससे झाड़न करवा लो और भांग पीकर सो जाओ ! और तुम ! तुम बिलकुल ठीक नही हो सकते। तुम्हें बहुत भयंकर रोग है। तुम सबको कोई असाध्य रोग है। दिमाग के कैंसर जैसा कोई विचित्र रोग। तुम सबमे से कोई भी ठीक नही हो सकता। बस तुम्हारा इलाज एक ही है।···एक ही इलाज है तुम्हारा। ···तुम सब भी उन पीले तम्बुओं में जाओ और उस शिकारी की गोली अपनी छाती पर खाओ !"

मरीज़ों को समझ नही आ रहा था कि इतना मीठा बोलने वाले दादा को एकदम हो क्या गया था। वे भौंचक-से उनकी तरफ देखे जा रहे थे। दिनेश भी डा० दादा के इस रूप पर हैरान था। वह इतना तो समझ रहा था कि बार-बार मना करने पर भी छदांग और चंगेरी गावों के लोगों का हठ करके शिकारी के पास जाना उन्हें अच्छा नही लगा है। लेकिन मन के मुताबिक काम न होने पर दादा इतने असंतुलित भी हो सकते हैं, यह उसके लिए कोई सुखद अनुभव नही था। वह भी भौंचक-सा

चुप बैठा रहा और देखता रहा कि आखिर दादा के मन की पीड़ा उन्हें कहां तक ले जाती है।

इसी समय छितरू वापस आ गया। वापस आते ही उसने सूचना दी कि शिकारी उन लोगों के साथ चलने के लिए तैयार हो गया है।

छितरू की सूचना सुनकर दादा और भी भड़क उठे, "तू भी उनके साथ ही चला जाता, वापस क्यों आ गया?"

छितरू भी नहीं समझ सका कि आखिर उससे क्या गलती हो गई है। दादा ने ही तो कहा था उन लोगों को शिकारी के पास छोड़ आने के लिए, सो वह छोड़ आया, इसमें उसका क्या अपराध? वह बेचारा क्या जाने कि दादा उसके मुख से यह सुनने के इच्छुक थे कि मैं नहीं जा सकता। उस राक्षस के पास; खुद ही चले जाएं जिन्होंने जाना है। वह भी दूसरों की तरह भौचक-सा खड़ा रह गया। उसको भी डा० दादा के सवाल का कोई जवाब नहीं सूझा।

छितरू को पत्थर के बुत की तरह खड़ा देख डा० दादा ने एक-दो बार जबड़े सख्त-नर्म किए। दवाइयों का बक्सा उठाकर दवाईखाने में चले गए और फिर वापिस नहीं आए।

दिनेश ने अन्दर जाकर देखा तो दादा रीछ की खाल के सामने खड़े उसके खुले हुए मुख की तरफ घूर रहे थे। इस वक्त दादा उसे सचमुच में अबनार्मल लगे। "क्या हुआ दादा, इधर क्या देख रहे हो?"

"इस कमबख्त की आत्मा पता नहीं किस-किस में प्रवेश करके उसे आदमखोर बना डालती है। मुझे लगता है कि इस बार इसकी आत्मा शिकारी में प्रवेश कर गई है।"

"किसकी आत्मा, इस रीछ की?"

"हां, इस रीछ की।"

दिनेश का मन ठहाका मारकर हंसने को हुआ पर उसने मन पर काबू पा लिया। उसने दादा के मन की ग्रन्थी को खोलना जरूरी समझा, "तो फिर आपने शिकारी के पास क्यों भेज दिया उन भोले-भाले लोगों को?"

"अगर किसी की किस्मत में अतृप्त आत्माओं के ही हाथों पीड़ित होना लिखा है तो मैं इसमें क्या कर सकता हूं।"

"आप उन्हें समझा सकते थे। आपको उन्हें समझाना चाहिए था।

वहां जाने और शिकारी को अपनी बहू-बेटियों के बीच ले जाने से उन्हें रोकना चाहिए था।"

"तुम्हारे समझाने से समझ गए वे लोग ? रुक गए तुम्हारे रोकने से ?"

"मेरी बात और है। मैं तो उनके लिए अजनबी-परदेसी हूं। आप तो डाक्टर हैं। बीमारियों से उनकी जान बचाने वाले देवता।"

"मैं भी उनके लिए अजनबी और परदेसी हूं। मुझे वे अपनों में से एक समझते, तो क्या मेरे रोकने से रुकते नहीं ? इस तरह मेरे पैरों में पड़ने की उनको ज़रूरत ही क्या थी ?"

इसी समय उन दोनों को घोड़ों की पदचापें सुनाई दीं। बाहर आकर देखा तो उन्हें राबर्ट और रहीम आते दिखाई दिए। घोड़ों की अगल-बगल वे चारों आदमी इस तरह उत्साह में चल रहे थे जैसे कोई खज़ाना लूटकर ले जा रहे हों। डा० दादा, उनके दवाईखाने के सामने आते ही, उनकी तरफ थूककर फिर अन्दर चले गए।

दिनेश ने देखा कि दादा के पैरों पर गिड़गिड़ाने वाले लोगों को, अब तनिक रुककर, दादा को नमस्ते करने तक की फुर्सत नहीं थी। उल्टे वहां खड़े मरीज भी, घोड़ों का सामना होते ही कमर तक झुककर राबर्ट को सलाम करने लगे थे।



थोड़े दिन बाद ही दिनेश ने स्कूल के बड़े कमरे में स्कूल लगाने की बजाय कुछ लड़कों को साथ लेकर करियाला की रिहर्सल करवानी शुरू कर दी। लोक-नृत्य के साथ खेली जाने वाली नाटिका को भी उसने लिख मारा और उसे भी साथ-साथ तैयार करवाने लगा। सगुआ और देवा को भी उसने साथ ले लिया, चन्देरी ने उनको खुशी से छुट्टी दे दी।

कुछ दिन तक तो यही लगता रहा कि अनपढ़-गंवार आदिवासियों के साथ कला की किसी आधुनिक विद्या का दूर तक का भी कोई रिश्ता नहीं है। परम्परागत फोक डांस के अलावा ये लोग कुछ सीख ही नहीं सकते। उसके लिए भी इन्हें बड़े परिश्रम और अथक अभ्यास की ज़रूरत

है। बाहों मे बांहें डालकर एक साथ पैर पटकने जैसे सीधे-सादे काम मे भी ये लोग अक्षम्य त्रुटियां करते हैं। आपस में गुथकर ऐसे अकड़ जाते हैं जैसे रक्त-मांस के न होकर किसी सख्त धातु के बने हों और उन्हें हरकत में लाने के लिए बार-बार चाभी भरने की ज़रूरत हो। नाटिका के कड़े संवाद तो ये कभी बोल ही नही पाएंगे। उनके लिए इनके गले ही नही बने हैं। सदियों से पस्त और नर्म शब्दों का इस्तेमाल करते-करते इनकी जैसे सख्त रग ही मारी गई है। अब उस रग को पुनः हरकत में लाना बहुत मुश्किल है। अगर किसी तरह से रग हरकत मे आ भी जाए तो उससे किसी तरह का बारीक काम लेना तो बिलकुल संभव नहीं है।

इस सबके बावजूद दिनेश ने हिम्मत नही हारी। वह एक ज़िद्दी और सनकी आदमी की तरह लड़कों के साथ लगा रहा। बिलकुल वैसे ही जैसे पारस पत्थर मिलने की आशा मे कोई पहाड़ काटता रहे। बीच-बीच मे आकर डा० दादा भी सभी की पीठें थपथपाते रहे और कभी-चन्देरी तथा खादी निकर वाला और ब्राह्मण-सा लगने वाला आदमी जैसे लोग भी आकर उनका उत्साह बढ़ाते रहे। इसका नतीजा यह निकला कि बात कुछ बनती नजर आने लगी। बेडौल और बदसूरत मिट्टी के ढूहों की अन्दर की पर्तों में से जैसे आकर्षक और मनमोहक पुरानी मूर्तियां बाहर निकलने के लिए आतुर दिखाई देने लगी हों।

लड़कों को भी अपने इस रूपान्तरण में मजा आने लगा। उन्हे अपने अन्दर छुपी अपार क्षमताओं का एहसास होने लगा। उनमें उत्साह का संचार होने लगा और वे ज्यादा से ज्यादा वक्त निकालकर, और भी अधिक लगन से रिहर्सल मे भाग लेने लगे।

दिनेश ने श्यामा की महमनि को देखते हुए नाटिका में एक नारी पात्र भी रखा था। वह भी श्यामा के व्यक्तित्व के बिलकुल अनुरूप। हृष्ट-पुष्ट देह, बड़ी-बड़ी आंखें, गले में काले डोरे में पूरा शेर और रीछ के नाखूनों का जोड़ा और हाथ मे हंसिए के आकार की चमचम करती दरानी। पर अब लगने लगा था कि उस नारी पात्र को नाटिका मे निकालना पड़ेगा, क्योंकि श्यामा रिहर्सल मे भाग लेना तो दूर एक अर्से मे दमकड़ी गांव की सीमा तक में दाखिल नही हुई थी। बड़े घास से लदी ऊंची पहाड़ियों को छोड़ अब वह नीची पहाड़ियों से ही छोटा घास लेकर

लौट जानी थी। लकड़ियों के लिए भी आसपास के छोटे पेड़-पौधों से ही काम चला लेती थी। उसकी जगह किसी दूसरी लड़की को तैयार करना भी बहुत कठिन काम था। रावर्ट के कुकर्मों की याद ताज़ा होने की वजह से तो बिलकुल ही असंभव।

नील का चेहरा देखने के लिए भी दिनेश पूरी तरह से तरस गया था। वह भी इधर कहीं भी दिखाई नहीं पड़ा था। वह शायद सूखे पहाड़ों तक न आकर, उनकी जड़ों में ही पशुओं को घुमाकर वापस चला जाता था। इतनी-सी बात का इतना बड़ा बतंगड़ बन सकता है, उसको कतई विश्वास नहीं था। विश्वास क्या, उसने ऐसा परिणाम निकलने तक तो अपना दिमाग ही नहीं पहुंचाया था। कभी-कभी उसका मन होता कि एक दिन की रिहर्सल स्थगित करके श्यामा से जाकर मिले। मिले नहीं, तो कम से कम उससे मुआफी तो मांग ही आए। वह मन ही मन मुआफी मांगने के लिए शब्द भी जुटाता और आज वह कहां है, इसका किसी लड़के से चुपचाप पता करवाने का फैसला भी करता। पर लड़कों से सामना होते ही सब गडबड़ा जाता। लगता था कि श्यामा जैसी लड़की की किसी शिकार के जानवर की तरह टोह करवाना उचित नहीं है। दादा को इस बात का पता चलेगा तो वे क्या सोचेंगे? दूसरे, श्यामा के स्वभाव को देखते हुए, बिना किसी दूसरे को साथ लिए, चल पड़ने की हिम्मत भी उसकी नहीं पड़ती थी। अपने साथ ले जाए तो किसे ले जाए, यह भी एक गंभीर समस्या थी। सगुआ या देवा को ले जाए? नहीं-नहीं, वे तो बिलकुल पागल हैं, दूसरे ही दिन बात बढ़-चढ़कर पूरे इलाके में फैल जाएगी। कुछ और चिट्ठियां मनोहर अंकल के पास पहुंचेंगी, और फिर ···। आखिर उसने दुविधाग्रस्त मन से, नारी पात्र की रिहर्सल एक लड़के से ही करवानी शुरू कर दी, यह सोचकर कि कभी न कभी तो उसकी मजबूरी बंगालिन मा और श्यामा के सामने खुलेगी ही और फिर श्यामा स्वयं चलकर आएगी उसके पास और अपनी तरफ से बरती गई उपेक्षा के लिए शर्मिन्दगी जाहिर करेगी।

थोड़े दिन बाद दिनेश के सामने एक दूसरी समस्या भी आई। उसने पहाड़ी लोक-नृत्य कहीं सीखा नहीं था, केवल न्यूज़ रीलों और अपने शहर में आई नृत्य मंडलियों के मंचों पर ही देखा था। उसी के आधार पर वह जैसे-तैसे उस नृत्य का निर्देशन करता रहा था। लेकिन एक दिन

अचानक वहां एक करैलिया आ धमका। उसने लोक-नृत्य में ऐसे नुक्स निकाले कि दिनेश लड़कों के सामने नृत्य के मामले में कोरा साबित हो गया। पर इस समस्या का हल तुरन्त निकल आया। दिनेश ने अपनी गलतियां स्वीकार कीं और करैलिये से लड़कों को नियमित रूप से नृत्य सिखाने का आग्रह किया। कुछ पैसों की मांग के साथ करैलिया इसके लिए तैयार भी हो गया। उसके साथ हफ्ते में केवल दो दिन आकर पिछली तैयारी को देखने और आगे के लिए स्टॅम्स बता जाने का फैसला हुआ। यह भी फैसला हुआ कि जहां कहीं भी जरूरत पड़ेगी वह अपनी मंडली के साथ उनके लिए उपस्थित रहेगा।

अब दिनेश के लिए ज्यादा काम नाटिका को तैयार करवाने का ही रह गया था और वह इस काम को पूरे आत्मविश्वास और लगन के साथ सम्पन्न करने मे जुट गया था। वह अपने ही ढंग से लिखी नाटिका को जरूरत के मुताबिक सुधारता भी जा रहा था। बहुत से सवाद अपने आप ही स्थानीय भाषा मे बनते चले जा रहे थे। कोई लड़का संवाद बोलते समय अनजाने मे अपनी भाषा का पुट दे देता तो दिनेश उस पुट को उसी रूप मे स्वीकार कर लेता और ऐसी जानकारियों के मुताबिक दूसरे संवादो मे भी रद्दोबदल कर लेता। धीरे-धीरे पूरी नाटिका की भाषा हिन्दी मिली लोक-भाषा बन गई। लडकों को भी अब संवादों को बोलने में पूरी सुविधा होने लगी। करैलिये और दादा को भी उसमें कुछ सार दिखाई देने लगा। नही तो इन दोनो की शिकायत यही थी कि गांव की अनपढ़ जनता इस नाटिका को बिलकुल नहीं समझ सकेगी।

निर्णय लिया गया कि यह अपने ढंग का नया करैला पहली बार दमकडी मे ही किया जाएगा और उसका स्थान भी डॉ० दादा के घर के सामने की खुली जगह होगी। यह भी फैसला किया गया कि पहला प्रोग्राम केवल एक मास बाद पड़ने वाले सतिया पूजा के उत्सव वाले दिन किया जाएगा और उस पर तैयार हो रही बडी नाटिका की बजाय, प्रयोग के तौर पर एक छोटा दृश्य नये सिरे से तैयार करके प्रस्तुत किया जाएगा।

दिनेश अपना दृश्य तैयार करवाने लगा और करैलिया अपना लोक-नृत्य। इस काम मे दिनेश इतना व्यस्त हो गया कि आसपास क्या घट रहा है, इसकी उसे कुछ सुध ही नहीं रही। लड़के खेतों को निराने का काम तो खत्म कर ही चुके थे, अब वे भी अपना पूरा समय इसी को देने

लगे। उनको भी दिनेश की तरह ही न तो रावर्ट की सुध रही और न रायसाहब की। डा० दादा भी अब मरीजों से बचा समय इसी में लगाने लगे थे, जैसे उनके लिए भी इलाके की सबसे बड़ी समस्या यही हो गई थी।

दिनेश ने एक बात और नोट की, वह यह कि जो लड़के पहले अपने काम अकेले-अकेले करते थे, अब वे आपस में मिलकर, छोटे-मोटे समूहों में करने लगे थे। इस तरह उनके अन्दर, चाहे काम को जल्द से जल्द निपटाकर रिहर्सल में शामिल होने के लालच में ही सही, संगठित होकर काम करने का मादा पैदा होने लगा था।

इस सबको देख दिनेश इतना उत्साहित हुआ कि उसे अपनी मंजिल, अपने और दादा के परिश्रम के परिणाम की सीमा में दिखाई देने लगी। करेलिये को भी लगने लगा जैसे वह किसी पुण्य के काम में अपना श्रम लगा रहा है और उसने भी अपनी इच्छा से लगभग रोज आना शुरू कर दिया।

● ●

एक दिन एक और अजीब घटना घट गई। उस दिन जब दिनेश झरने पर नहा-धोकर वापस आया तो उसने रिहर्सल वाले बड़े कमरे में एक भी लड़का हाजिर नहीं देखा। कुछ देर तक तो वह लड़कों की प्रतीक्षा करता रहा, पर जब पूरे दो घंटे तक भी कोई नहीं आया तो उसका माथा ठनका। सहसा उसे स्कूल के बच्चों का एकाएक आना बन्द कर देने की घटना याद हो आई। माजरे को जानने के लिए उसका मन बेचैन हो उठा। आखिर उसने निर्णय लिया कि फौरन डा० दादा के यहां पहुंचा जाए। हो सकता है उनको इसके कारण का पता हो। उसने तुरन्त कोठरी का ताला लगाया और कटार वाली छड़ी लेकर डा० दादा के घर की ओर चल दिया।

अभी वह बरसाती नाले की गारों तक ही पहुंच पाया था कि कारण उसको सामने खड़ा दिखाई दे गया। सारे के सारे लड़के नाले के किनारे की चट्टानों और झाड़ियों के बीच लकड़ी की मचान गाड़ने में व्यस्त थे। रहीम और रावर्ट के दो दूसरे साथी सरपंच को साथ लेकर उनके काम की देखरेख कर रहे थे। रहीम राइफल संभाले थोड़ी ऊंची जगह पर खड़ा

था, जैसे काम करते कैदियों की निगरानी करने के लिए जेल की फोर्स का कोई सिपाही खड़ा रहता है।

दिनेश कुछ देर तो चुपचाप खड़ा यह सब देखता रहा, फिर ढलान पर से रास्ता बनाता हुआ वह सरपंच के पास जा खड़ा हुआ। सरपंच ने हाथ जोड़कर उसका स्वागत किया। रहीम को उम्मीद थी कि दिनेश उसे सलाम करेगा, पर जब दिनेश ने ऐसा नहीं किया तो वह लड़कों को भद्दी-भद्दी गालियां बककर अपना गुस्सा उतारने लगा।

दिनेश ने उसे टोका, "देखिए जनाब, आप इन लड़कों के साथ इस तरह से असभ्य ढंग से पेश मत आएं, आखिर ये भी तो इन्सान के बच्चे हैं।"

दिनेश का इस तरह टोकना रहीम को एकदम गुस्से में ले आया। एक तो वह सरकारी आदमी है और दूसरे वह राबर्ट जैसे विश्व प्रसिद्ध शिकारी का विशेष सलाहकार। उसकी आंखें थोडी चौड़ी हो गईं और वह दांत पीसकर बोला, "तुम इन्हें इन्सान के बच्चे कहते हो। सुअर के बच्चे भी इनसे ज्यादा अच्छे होते है।"

रहीम की ढिठाई ने दिनेश का भी खून थोड़ा गर्म कर दिया। उसने लकड़ियो के ढेर से एक मजबूत-सी लकड़ी उठाई और बोला, "देखिए मैं आपको आखिरी बार कह रहा हूं कि आप इस तरह गालियां मत बकें।"

दिनेश के हाथ में लक्ड़ी देख रहीम तनिक संभला, "फर्ज करो, मैं गालियां देना बद नही करता, तो क्या कर लोगे तुम मेरा?"

"आपको अपनी बन्दूक चलाने के लिए मजबूर कर दूंगा।"

"तो फिर उसका रिजल्ट?"

"किसी न किसी का खून।"

"अच्छा तो फिर आप यहां से चलते बनिए।"

"ठीक है, मैं यहां से चलता बनता ...ा

इस तरह की वेगार करने के लिए न...

लड़कों ने, जो कन्धों पर लक...

इंतजार कर रहे थे, एक बार सरपं...

तरफ पटक दी और दिनेश के साथ

हालात को हाथ से निकलते

...गल

संभाली। उसने हाथ जोड़कर दिनेश से निवेदन किया, "यह काम इन्हीं लोगों की भलाई के लिए हो रहा है मास्टर जी, आप इन लड़कों को, काम बीच में रोककर इस तरह अपने साथ न ले जाएं। आखिर मचान इन्हीं के लाभ के लिए बांधी जा रही है।"

"लेकिन इनसे गालियां दिए बिना भी तो काम लिया जा सकता है।" दिनेश ने सरपंच की नर्मी का जवाब नर्मी से दिया।

"ठीक है, साब इनको गाली नही देंगे, इसका ज़िम्मा मैं लेता हूं।"

दिनेश के लिए इतना काफी था। लड़कों में आए परिवर्तन की यह पहली परीक्षा थी, उसमें वे खरे उतरे थे। उसने स्वयं अपने अन्दर भी बहुत बड़ा परिवर्तन देखा। बन्दूक की नाल के सामने खड़ा होकर यह साहस उसने पहली बार दिखाया था। उसे लगा कि कला का असर होता है, पहले स्वयं कलाकार और उसके बाद उसके संसर्ग में आने वाले आम समाज पर। इस विचार की पुष्टि उसके लिए बहुत बडी उपलब्धि थी। उसने बात को नाहक बढ़ाना मुनासिब नहीं समझा। उसने सरपंच की बात मानकर जैसे सरपंच और रहीम दोनों पर अहसान कर दिया, "अच्छा दोस्तो, आज का दिन रिहर्सल की जगह पर यही काम होगा। हो सकता है रावर्ट इस मचान पर बैठकर कोई नया करिश्मा दिखाए। यह भी हो सकता है कि अपनी बुराइयों को ढकने के लिए वह अपने आपको जोखिम में डालकर आदमखोर को मार ही लें। कल रिहर्सल के लिए सब लोग ठीक वक्त पर पहुंचेंगे।"

कहकर दिनेश उड़ते हुए कदम बढ़ाता हुआ दवाईखाने की तरफ चल दिया। यह उसकी पहली जीत थी और इस खुशी को वह जल्द से जल्द डा० दादा के साथ बांटना चाहता था।

इधर रहीम बड़ी देर तक दिनेश को जाते देखता रहा। उसके दिमाग में आया—काश ये गधे भी मास्टर जैसे होते। पर उसे दिनेश का सारा व्यवहार अपने लिए अपमानजनक भी लगा। जब दिनेश उसकी नजरों से ओझल हो गया तो उसके मुंह में एक भद्दी-सी गाली आई। पर उसने उस गाली को बाहर नहीं उगला, एक हल्की-सी खंगार के साथ, मुंह में इकट्ठे हुए थूक में लपेटकर अंदर ही निगल लिया।

● ○

दिनेश जब दवाईखाने पहुंचा तो डा० दादा रसोई वाले कोने में बैठे सूरज और रूपा से बतिया रहे थे। वह बिना कोई आहट किए बाहर ही रुक गया और उनकी रसीली बातें सुनने लगा।

"…अच्छा तो बड़े होकर तुम शिकारी बनोगे और जंगल के बड़े-बड़े जानवरों का शिकार करोगे। और रूपा बिटिया तुम? तुम बड़ी होकर क्या बनोगी?" यह डा० दादा की आवाज़ थी।

"आम बरे ओकर परी बनेंगे।" यह नन्हीं मुन्नी रूपा बोली थी।

"अच्छा-अच्छा…अच्छा। तुम बड़ी होकर परी बनोगी। लेकिन परी बनकर क्या करोगी?"

"उरूंगी सब जगे! बौत ऊपर-ऊपर उरूंगी।"

"हां ऽऽऽ अच्छा, तो रूपा रानी सब जगह उड़ती फिरेगी? अच्छा-अच्छा।" दादा हंसने लगे।

"अगर राक्षस ने तीर मारकर इसका पर काट दिया तो यह जंगल में नहीं गिर जाएगी डाकघर दादा और जंगल में इसे शेर नहीं खा जाएगा?" यह सवाल सूरज का था।

"वह तो ज़रूर गिर जाएगी। लेकिन तुम इसके भाई हो, जब तुम शिकारी होगे तो तुम राक्षस को मार नहीं गिराओगे?" दादा ने सूरज को याद दिलाया।

"हां, मैं बन्दूस से राछस को मार दूगा।" सूरज पुलकित आवाज़ में बोला।

"लेकिन बन्दूक कहां से लोगे?"

"वहां से।" सूरज ने थम्मी पर टंगी बन्दूक की तरफ इशारा कर दिया।

डा० दादा को याद आया कि मुद्दत से उन्होंने बन्दूक साफ नहीं की, वही पिछली बार की तरह इस बार भी इसकी नाली में टिड्डियों, काक्रोचों और मकड़ियों ने अपना घर न बना लिया हो।

"किस राक्षस का वध करवाया जा रहा है इन श्री सूरज महोदय से?" और ज़्यादा प्रतीक्षा करना बर्दाश्त से बाहर हो उठा तो दिनेश दादा के सामने प्रकट हो गया।

"अरे दिनेश तुम !" दादा उसको देखते ही खिल उठे। तुम बिलकुल ठीक वक्त पर आए हो, देखो मैंने खीर बनाई है। बस अभी तैयार हुई समझो।"

दिनेश ने देखा—दादा एक हाथ से स्टोव पर रखे बर्तन में कड़छी चला रहे थे और दूसरे से रूपा बिटिया की पीठ सहला रहे थे। वह भी इन तीनों के पास चटाई पर बैठ गया और कंधे के झोले से टोपियां बाहर निकालकर बोला, "दादा इन टोपियों को इन बच्चों को पहनाकर तो देखो, कहीं छोटी तो नहीं पड़ रहीं।"

"अच्छा-अच्छा ! टोपियां भी ले आए ! मैं तो भूल ही गया था कि हमने टोपियां भी खरीदी हैं।" दादा ने खीर का बर्तन उतारकर एक तरफ रख दिया, "लो, अब तो बन ही गई होगी।" और टोपियां लिफाफों से बाहर निकालकर बच्चों के सिरों पर सजाने लगे।

"मैं भी भूल गया था। आज कागजों की जरूरत पड़ी, बंडल खोला तो देखता हूं उसमें टोपियां भी पड़ी हैं। रंग श्यामा को बहुत पसंद नहीं आए थे ना, इसलिए दिमाग में यही रहा कि शायद खरीदी ही नहीं गईं।"

दोनों बच्चे गर्म टोपियां पहनकर सचमुच में बहुत खूबसूरत लगने लगे और तुरंत मां को दिखाने के लिए उतावले भी दिखाई देने लगे। रूपा तो फौरन दादा के हाथों से निकलकर भाग खड़ी हुई। उसे जाती देख सूरज भी उसके पीछे-पीछे हो लिया। दादा पुकारते ही रह गए, "अरे, पहले खीर तो खाते जाओ !" पर दादा की किसी ने नहीं सुनी।

"बड़े ही बेपरवाह बच्चे हैं ! चलो बाद में आ के खा लेंगे। लो तुम तो गर्म-गर्म खाओ।" दादा ने कटोरे में खीर डालकर दिनेश को दी और अपने लिए भी एक बर्तन में ले ली।

"खीर बहुत अच्छी बनाई है डा० दादा, बिलकुल रबड़ी है।" दिनेश ने खीर एक मुद्दत के बाद खाई थी।

"एक मरीज दूध दे गया था काफी सारा। मैंने सोचा क्यों खीर ही बना डालें। बहुत दिन हो गए थे खीर खाए। दूध में पानी एक बूंद भी नहीं डाला, खासी ठीक-ठाक बन गई।"

"ठीक-ठाक नहीं, बहुत बढ़िया बनी है और खुशबूदार भी।"

"खुशबू तो यहां के दूध की ही करामात है। इस धरती के कण-कण और पत्ती-पत्ती में खुशबू है। बदबू है तो यहां के गरीब लोगों की

गरीबी में भी कई गुणा नीचे के स्तर की जिन्दगी में। तुम सच मानो, इन दोनों बच्चों ने खीर शब्द ही आज मुझसे पहली बार सुना है। शायद इसी-लिए टोपियों में उनको खीर से ज्यादा आकर्षण लगा और वे इसे छोड़कर भाग गए।"

"उनके भागने में तो टोपियों में नहीं, मां में ज्यादा आकर्षण साबित होता है।"

"मां में ही सही, लेकिन मेरी खीर बनाने की इस मेहनत में तो नहीं। खैर छोड़ो इसको, हम भी किस फिजूल की बहस में पड़ गए। यह बताओ कि श्यामा से मुलाकात हुई ?"

"नहीं दादा।"

"देखो दिनेश, चाहे तुम मेरी बात का बुरा ही मानो, मैं यह जरूर कहूंगा कि यह तुम अच्छा नहीं कर रहे।"

"लेकिन दादा, मैं उन लोगों के पास कौन-सा मुंह लेकर जाऊं ?"

"क्यों इस मुंह को क्या हो गया है तुम्हारे ? तुम्हें उन्हें भी अपनी मजबूरी उसी तरह बतानी चाहिए थी, जैसे मुझे बताई है, वे लोग बेवकूफ नहीं हैं।"

दिनेश चुप रह गया।

दादा अब अपने दिल की कहने पर उतर आए, "पता नहीं उन लोगों के दिल पर क्या गुजर रही होगी। मैं भी उनसे सिर्फ इस वजह से नहीं मिला कि तुम मिल लोगे तो मैं उसके बाद मिलूंगा। तुम कल ही उनसे जाकर मिलो और मैं तो कहता हूं इसी वक्त जाकर मिलो, तुमने पहले ही बहुत देर कर दी।"

दिनेश डा० दादा को आज की उपलब्धि सुनाने आया था लेकिन आते ही पड गया वह दूसरी उलझन में। उसने बात खत्म करने के लिए कह दिया कि वह कल जरूर मिलने चला जाएगा। उसके बाद, "अच्छा तो आज की एक बढ़िया बात सुनाऊं।" और दिनेश ने दादा को रहीम के साथ हुई झड़प की सारी कहानी कह सुनाई।

लेकिन दादा कहानी सुनकर खुश होने की बजाय उदास हो गए। दिनेश को समझ नहीं आया कि डा० दादा का उदासी का क्या कारण है। उसने पूछ ही लिया, "दादा शत्रु की पहली पराजय की कहानी सुनकर आपको खुशी नहीं हुई ?"

"नही दिनेश, खुशी तो मुझे जरूर हुई है, पर मुझे भविष्य का खयाल करके डर-सा लगने लगता है। तुम नहीं जानते, जिसे तुम शत्रु कहते हो वह बहुत ताकतवर है, निर्दयी तथा पाजी भी।"

"मैं नही जानता क्या ? कैसी बातें कर रहे है आप ?"

"जानते हो फिर भी तुमने···"

"ज्यादा से ज्यादा मेरा क्या अहित हो सकता है डा० दादा ? मेरे प्राण ही लिए जा सकते हैं ना ! लेकिन मैं अब मौत से नहीं डरता। मौत मेरे लिए अब विशिष्ट नही है। जानते हो, एक दिन श्यामा ने मुझसे क्या कहा था ? कहा था—मौत तो इतनी साधारण चीज है कि बिना बुलाए साधारण से साधारण इन्सान को भी आसानी से उपलब्ध हो जाती है। उसने कितनी बड़ी बात कही थी। समझ गए है न दादा आप ?"

"हां समझ तो गया हूं लेकिन कहा हुआ व्यवहार में ढालना इतना आसान नहीं है।"

"इस मुश्किल काम को ही तो करने का अभ्यास कर रहा हूं। लेकिन मुझे आपका आशीर्वाद चाहिए। वादा कीजिए कि आज के बाद आप मुझे कभी भी निरुत्साहित नहीं करेंगे। मैं भी वादा करता हूं कि अगर इन मजलूम लोगों के हकों की लड़ाई लड़ने में मुझे प्राण भी देने पड़े तो मैं रत्तीभर भी संकोच नही करूंगा।" दिनेश ने आधी बची खीर एक तरफ रखकर डा० दादा के पैरों पर हाथ रख दिए। दादा ने भी हाथ का बर्तन एक तरफ रख दिनेश के हाथ हाथों में भरकर अपने माथे से लगा लिए।

इसी समय बाहर जमना, सूरज और रूपा के साथ बहुत से दूसरे बच्चों की उल्लास-भरी आवाजें गूंजती हुई उन तक पहुंच गईं। वे दोनों संभले। दादा के होंठ बड़बड़ाए, "बहुत सारे बच्चे जमना को साथ लेकर इसी तरफ चले आ रहे है शायद।"



दूसरे दिन सुबह ही दिनेश दादा के साथ किए वादे के मुताबिक श्यामा से मुलाकात करने निकला। वह अपने साथ कटार वाली छड़ी

लेकर उन जगहों पर भटकता रहा, जहां श्यामा के घास काटती या लकड़ियां छांटती मिल जाने की उसे उम्मीद थी। लेकिन श्यामा उसे कहीं भी दिखाई नहीं दी। आखिर उसने श्यामा को उसके घर जाकर ही मिलने का फैसला किया और वह पहरआ गांव की तरफ चल दिया।

अभी वह बड़े रास्ते से कटकर गांव की घाटी में उतरने वाली पगडंडी पर उतरा ही था कि श्यामा उसे सिर पर घास का गट्ठर उठाए जाती दिखाई दे गई। वह तेज चाल से आगे बढ़ा और फिर सहज चाल से श्यामा के पीछे चलने लगा।

अब श्यामा को वह बिना किसी बाधा के देख सकता था। पैरों में पहाड़ी तरीके की मजबूत जूती, पिंडलियों से ऊपर तक बांधने के बाद बची, कमर पर कसकर लपेटी गई सूती धोती। चौड़े-पुष्ट कंधों पर कसी लाल रंग की बंडी के ऊपर कबूतर की गर्दन जैसी लम्बी सुडौल गर्दन। गर्दन में चमकता हुआ काला डोरा और उसके ऊपर स्याह बालों का बड़ा-सा जूड़ा। दिनेश ने पहली बार चोरी-चोरी श्यामा के रूप और सौन्दर्य का जायजा लिया। वह उसे सचमुच में एक देवकन्या-सी लगी। पल-भर में ही महाकाली का रूप धारण कर लेने वाली देवकन्या। उसकी नजरें श्यामा की दराती को ढूंढने लगी। दराती घास के गट्ठर के ऊपर रस्सी के बीच फंसी थी। वह आश्वस्त हो गया और उसके मुंह से निकल गया, "श्यामा !"

अपना नाम सुनते ही श्यामा के पैर रुक गए। उसने मुड़कर देखा तो दिनेश की आंखें फटी की फटी रह गई। यह क्या हो गया श्यामा को? इसके चेहरे की वह कांति कहां उड़ गई? इसकी आंखों की उस चमक का क्या हुआ? होंठों के ताजे गुलाब कहां बिखर गए काले पड़कर?

श्यामा के होंठों पर एक बीमार-सी मुस्कान फैली पर तुरन्त ही गायब भी हो गई। वह मुड़ी और पहले से कहीं तेज चाल से चलने लगी।

दिनेश आगे बढ़कर उसकी बगल में आ गया, "श्यामा, मैं तुमसे मिलने आया हूं।"

"मुझसे? एक परास्त हुई नारी से?"

"क्या कह रही हो तुम?"

"ठीक ही कह रही हूं। नारी जन्म लेते ही परास्त हो जाती है। बल्कि यूं कहो कि गर्भावस्था से ही। लेकिन इसमें मेरा क्या दोष? मां

काली भी तो शंकर से परास्त हुई थी। अगर तुम मेरी ज़िन्दगी में शंकर बनकर आ गए तो इसमें मेरा क्या कसूर ?"

दिनेश को लगा जैसे श्यामा के पैर लड़खड़ाने लगे हैं। अगर उसे सहारा न दिया गया तो वह चक्कर खाकर गिर जाएगी। उसने आगे बढ़कर श्यामा का हाथ थाम लिया, "मुझे मुआफ कर दो श्यामा। मुझे नहीं मालूम था कि तुम इस कदर भावुक···"

श्यामा ने एक झटके के साथ दिनेश के हाथों से अपना हाथ मुक्त कर लिया। थोड़ी गर्दन टेढ़ी करते ही उसके सिर का बोझा ज़मीन पर आ गिरा और वह कमर पर दोनों हाथ रखकर दिनेश के सामने खड़ी हो गई, "तुम उसे भावुकता कहते हो ? नारी का प्यार, उसका त्याग और उसका समर्पण भावुकता है ? लेकिन इस वक्त तो तुम भावुक बनकर आए हो मेरे पास। तुम ही आधे घंटे से मेरा पीछा कर रहे हो। मैं तो तुम्हारे पास अपनी भावुकता लेकर नहीं गई !"

दिनेश की जुबान थरथरा कर रह गई। उसके सामने शरत् की नायिकाओं के तन-मन का स्वाभिमान साकार होकर खड़ा था और वह स्वाभिमान के सामने नतमस्तक था।

दिनेश को चुप देख श्यामा आगे बोली, "नारी परास्त होती है तो मात्र अपने नारीत्व के कारण ! अपनी दया, माया और ममता के कारण। पुरुष के पुरुषत्व या उसके बल के कारण नहीं ! ···मानती हूं कि मैं परास्त हुई हूं, लेकिन अपने आपसे, तुमसे नहीं ! नारी अपने आपसे न हारे तो पुरुष तो क्या, देवताओं में भी उसको परास्त करने का बल नहीं है। जाओ, चैन से अपने नाटकों की रिहर्सलें करो, मुझे तुमसे कोई शिकायत नहीं है।"

यह कहकर श्यामा ने सिर का कपड़ा उतारा, उसे खोलकर एक-दो बार छटकारकर झाड़ा और उससे अपने मुंह पर आई नमी को साफ करके पहले की ही तरह गोलाई में बांधकर सिर पर रख लिया। अब वह घास के गट्ठर को ज़मीन पर लुढ़काकर किसी ऊंची जगह पर ले जाने लगी।

दिनेश पत्थर के बुत की तरह खड़ा यह सब देखता रहा, जैसे देखने के सिवाय उसके पास दूसरा कोई रास्ता ही न हो। श्यामा की यह सख्ती उसके लिए अप्रत्याशित थी।

श्यामा ने गट्ठर को एक ऊंची जगह पर खड़ा किया। फिर वह

चक्कर काटकर नीची जगह पर पहुंची। एक हल्के-से धक्के के साथ गट्ठर को सिर पर संभाला। फिर उसी तरह चक्कर काटकर पगडंडी पर आई और बिना दिनेश की तरफ देखे घर की तरफ मुड़ चली।

दिनेश काफी देर तक उसी तरह बुत बना श्यामा को जाती देखता रहा। यह उसके लिए नारी का बिलकुल नया रूप था और बहुत ही विचित्र रूप। उसे लगा कि उसने नारी को शरत्चन्द्र से भी आगे बढ़कर पा लिया है। वह इस मामले में शरत् से कहीं ज्यादा ऊंचा है। उसे शरत् से कहीं ज्यादा ऊंची रचनाएं देनी चाहिएं। अपने इन अनुभवों को भी अपने उपन्यास में स्थान देना चाहिए।

उसने सिगरेट सुलगाई, उसके एक-दो गहरे कश खींचे और छड़ी को थके-हारे बूढ़े आदमी की तरह ज़मीन पर टेकता हुआ वापस चल दिया।

सवाल उसके दिमाग में फिर कौंधा कि वह अपनी तुलना शरत् के साथ क्यों कर रहा है? क्या नारी के सत्य को पहचान लेना ही जीवन के सत्य को पहचान लेना है? जवाब मिला—नहीं, मात्र नारी की पहचान जीवन के पूर्ण सत्य की पहचान नहीं है। केवल पुरुष की पहचान भी जीवन के पूर्ण सत्य की पहचान नहीं है। नारी और पुरुष के साथ प्रकृति को जोड़कर पहचान करने की कोशिश ही पूर्ण सत्य के निकट पहुंचने का रास्ता दिखा सकती है। साहित्यकार का दायित्व है कि वह इसी रास्ते की तलाश में भटके और सुराग मिलते ही उसकी दशा और दिशा के बारे में सबको अवगत कराए।

सहसा उसे शरत् से अपने आपको ऊंचा मानने के भाव से ग्लानि-सी हो आई। उसके होंठों को एक पागल-सी मुस्कान ने नोच डाला। वह उस नोच के दर्द को लेकर बड़े रास्ते की तरफ बढ़ने लगा। उसे याद हो आया कि रिहर्सल के लिए आए लड़के उसका इंतजार कर रहे होंगे।

●●

जैसा कि लगभग निश्चित ही था, रायसाहब का रावर्ट को सन्देश आया कि किसी फ़ुर्सत के दिन सुमेरू में रायसाहब के बंगले पर पधारने की इनायत फरमाएं।

फुर्सत का मतलब राबर्ट ने छुट्टी ही समझा। चूंकि रविवार की छुट्टी को अभी पांच दिन बाकी थे, इसलिए उसने बिना छुट्टी की प्रतीक्षा किए तुरन्त ही रहीम को साथ लेकर रायसाहब के दर्शन करने का फैसला किया।

अपनी सबसे बढ़िया शिकारी पोशाक पहनकर और दूरबीन से सुसज्जित सबसे बढ़िया राइफल लेकर राबर्ट रायसाहब से मिलने निकला। आगे-आगे राबर्ट का घोड़ा और पीछे-पीछे रहीम का।

अभी राबर्ट ने गुलेल के हत्थे वाला तिराहा पार ही किया था कि रास्ते के बीचोंबीच उसे एक आकर्षक नारी-देह चलती दिखाई दी। काले गुलाब की मादक खुशबू उसके नथुनों को छेड़ने लगी। उसका मन चंचल हो उठा। उसने अपने चंचल घोड़े को एड़ लगाई। घोड़ा तुरन्त ही गति में आ गया। गति में भागते राबर्ट ने नारी के सिर पर रखे घास के बोझे पर जो हाथ रखा कि बोझा सिर से खिसककर ढलान पर झाड़ियों में जा फंसा और नारी-शरीर भी बोझ के साथ गिरते-गिरते संभला।

राबर्ट घोड़े को मोड़कर चहलकदमी-सी करता हुआ वापस आ गया। यह देख उसे बहुत खुशी हुई कि उसके सामने आग बरसाती आंखें लिए श्यामा खड़ी थी। घोड़े को और पास लाकर वह घोड़े को नाचने के लिए मजबूर करता हुआ प्यार से बोला, "एक्सक्यूज मी! ये इन घोड़ा का शरारत हाय!"

श्यामा का गुस्से से भरा हाथ जैसे अपने दरांती के मुट्ठे पर कस गया। लेकिन दरांती तो घास के बोझे में फंसी दूर झाड़ियों में पड़ी थी। वह शरीर को साधकर फुर्ती से झाड़ियों की तरफ उतर गई। कांटों की चुभन की परवाह किए बिना उसने गट्ठर को सीधा किया और दराती निकालकर सीधी चढ़ाई से ही दनदनाती हुई ऊपर आने लगी, "कमीने! कुत्ते!! ठहर जरा, अभी मैं तेरी बलि मां काली को चढ़ाती हूं।"

इसी बीच रहीम ने श्यामा के बारे में अंग्रेजी में राबर्ट को पता नहीं क्या समझाया कि राबर्ट एक सूखी-सी हंसी हंस पड़ा और राइफल वाला हाथ हवा में लहराकर बोला, "अच्छा फिर मिलेगा!" इसके साथ ही उसका घोड़ा चक्कर काटकर गति पकड़ गया। रहीम का घोड़ा भी लगभग उसी तेज़ी से उसका पीछा करने लगा। देखते ही देखते दोनों मोड़ काटकर निचाई उतरते ही आंखों से ओझल हो गए।

श्यामा घोड़े के नृत्य के कारण बने खुरों के निशानों के पास पहुंच तिलमिलाती रह गई। अब उसकी दराती को कोई न कोई बलि तो चाहिए ही थी। वह पास ही खड़े एक पेड़ के तने पर तब तक प्रहार करती रही जब तक वह आधे से ज्यादा कट नहीं गया और कटी हुई जगह से टूटकर, चीखता हुआ-सा धरती पर नहीं जा गिरा।



थोड़ी देर बाद ही रावर्ट और रहीम अपने अभ्यस्त घोड़ों पर काफी गहरी उतराई उतरकर सुमेरु गांव के निकट पहुंच गए। दूर से ही रावर्ट के सूक्ष्मग्राही नथुनों को शराब बनने की गन्ध का आभास हो गया। उसने गर्दन मोड़कर रहीम से अंग्रेजी में पूछा, "इस लाले की शराब की फैक्टरी क्या कहीं नजदीक ही है ?"

रहीम ने भी अंग्रेजी में ही जवाब दिया, "हां, शायद वो सामने है।"

रावर्ट ने रहीम के उठे हुए हाथ की सीध में देखा तो उसे पेड़ों में से ऊपर तक फैक्टरी की चिमनी झांकती नजर आई। चिमनी में से धुआं उठ रहा था। उसने जैसे अपने आपसे ही कहा, "इस वक्त भी फैक्टरी में काम हो रहा है।" फिर रहीम से पूछा, "इस यातायात से रहित जंगली इलाके में इस फैक्टरी को बनाने की क्या तुक है, यह समझ में नहीं आया ?"

"यहां से ऊपर के पहाड़ी इलाकों को घोड़ों और खच्चरों पर शराब सप्लाई होती है और वहीं से आगे उसकी तस्करी भी होती है। फैक्टरी में कितना और कैसा माल बना है यहां कौन देखने आता है।"

"ओ, यह बात तो समझ में आ जानी चाहिए थी। लेकिन मैं इस धुन में फंसा रहा कि इतना बड़ा नेता ऐसा क्योंकर करता होगा।"

"इस देश में ऐसे काम वे ही लोग करते हैं जिनकी पीठ सिर्फ पैसे की दृष्टि से ही नहीं, राजनैतिक दृष्टि से भी काफी मजबूत होती है।" रहीम ने अपने विचार प्रकट किए।

अब रावर्ट की नजरें हवा के रुख की तरफ रास्ता-सा बनाते हुए धुएं का पीछा करने लगीं। पीछा करते-करते उसकी नजर पेड़ों पर से

होती हुई नदी-किनारे के मैदान पर जा पड़ी। वहां उसे औरतों और मर्दों का एक मेला-सा दिखाई दिया। थोड़ा आगे बढ़ने पर ढोल पीटने की आवाज भी सुनाई देने लगी। उसने एक तिराहे पर आकर अपना घोड़ा रोक दिया और मेले की तरफ जाने वाली पगडण्डी का जायजा लेने लगा।

"रहीम भी आकर उसके साथ खड़ा हो गया। रावर्ट ने फिर जैसे अपने आपसे ही कहा, "उस लाले को इस वक्त इस मैदान के मेले में होना चाहिए।"

रहीम ने उसका समर्थन किया, "हां, इस देश के नेता मेलों में होना और किसी न किसी चीज का उद्घाटन करना बहुत पसन्द करते हैं।"

रावर्ट अपना घोड़ा मेले की तरफ उतरती पगडंडी पर उतार दिया। रहीम भी उसके पीछे-पीछे हो लिया।

मेले के [illegible] ऊपर की चट्टान पर पहुंचकर रावर्ट ने जो दृश्य देखा वह विचित्र था। मैदान के बीचों-बीच चिता की तरह सजाकर रखी लकड़ियों क[illegible]ड़ा था। उसके ऊपर से जाता हुआ एक मोटा-सा रस्सा, तमाशा दिखाने वाले नटों के रस्से की तरह, दोनों ओर अर्गलों वाली थम्मियों पर से होता हुआ जमीन में गड़े खूटों से बंधा था। एक तरफ सात-आठ कुर्सियां कतार में करीने से सजी थी। बीच की बड़ी कुर्सी के ऊपर छाया करने के लिए एक बड़ा-सा खूबसूरत छाता लगा था। बड़ी कुर्सी के सामने एक मेज रखी थी, जिस पर शायद ताजे फूलों से भरे दो फूलदान धरे थे। कुर्सियों की कतार के सामने ही थोड़ा हटकर लकड़ी की एक थम्मी जमीन में गाड़कर खड़ी की गई थी। उस थम्मी के साथ देह से काफी हृष्ट-पुष्ट लगने वाला एक आदिवासी बंधा था। थम्मी से थोड़ा हटकर पूरा पहाड़ी [illegible]ंगार किए एक आदिवासी लड़की बैठी थी। लड़की का चेहरा मुरझाए हुआ था, जैसे उस पर कोई बहुत बड़ा संकट आ पड़ा हो और वह उस [illegible]ट से छुटकारा पाने की चिंता में डूबी हो। लकड़ियों के ढेर से काफी ह[illegible]कर औरतों और मर्दों का एक बहुत बड़ा घेरा बना था, बिलकुल सर्कस के तमाशे को देखने वाले दर्शकों जैसा घेरा। लोग आकर उस घेरे में शामिल हो रहे थे और तीन-चार एक-सी हरी वर्दी वाले आदमी, हाथों में सर्कसी हंटर लिए और कभी-कभी हंटरों को हवा में छटकारकर पटाखे बजाते हुए, लोगों को ठीक जगह पर बिठाने का काम कर

श्यामा घोड़े के नृत्य के कारण बने स्वरों
तिलमिलाती रह गई। अब उसकी दराती को
चाहिए ही थी। वह पास ही गड़े एक पेड़ के तने
रही जब तक वह आधे से ज्यादा कट नहीं गया
टूटकर, चीखता हुआ-सा धरती पर नहीं जा गि



थोड़ी देर बाद ही रावर्ट और रहीम अपने
गहरी उतराई उतरकर सुमेरु गांव के निकट पहुंच
के सूक्ष्मग्राही नथुनों को शराब बनने की गन्ध का
गर्दन मोड़कर रहीम से अंग्रेजी में पूछा, "इस लाले
क्या यहीं नजदीक ही है?"

रहीम ने भी अंग्रेजी में ही जवाब दिया, "हां,
रावर्ट ने रहीम के उठे हुए हाथ की सीध में दे
ऊपर तक फैक्टरी की चिमनी झांकती नजर आई
उठ रहा था। उसने जैसे अपने आपसे ही कहा, "
में काम हो रहा है।" फिर रहीम से पूछा, "इस यान
इलाके में इस फैक्टरी को बनाने की क्या तुक है
आया?"

"यहां से ऊपर के पहाड़ी इलाकों को घोड़ों औ
मप्लाई होती है और वहीं से आगे उसकी तस्करी
में कितना और कैसा माल बना है यहां कौन देखने

"ओ, यह बात तो समझ में आ जानी चाहिए
में फंसा रहा कि इतना बड़ा नेता ऐसा क्योंकर कर

"इस देश में ऐसे काम वे ही लोग करते है जिन
दृष्टि से ही नहीं, राजनैतिक दृष्टि से भी काफी मह
ने अपने विचार प्रकट किए।

अब रावर्ट की नजरें हवा के रुख की तरफ रा
का पीछा करने लगी। पीछा करते-करते उसक

अंग्रेज अफसर अपने सिपाहियों को अन्दरूनी इलाकों तक जाने ही नहीं देते थे। उसे खुशी थी कि अब तीस-पैंतीस साल बाद वही कुछ देखने का अवसर मिल रहा था। उसे हैरानी भी थी कि आजाद होने के बाद भी रूढ़िवादिता के मामले में, इस देश में कोई खास फर्क नहीं आया था। जिस औरत के साथ बलात्कार हुआ हो उसे अपनी सच्चाई के सबूत में आग में जलने का जोखिम उठाना पड़े, यह उसकी जड़बुद्धि के लिए भी अनुचित बात थी। उसके दिमाग में आया कि हो सकता है इस इलाके की औरतों को बचपन में ही रस्सी पर चलने का अभ्यास करा दिया जाता हो और इनके लिए यह अग्नि-परीक्षा एक खेल हो। उसका दिल हुआ कि वह अग्नि-परीक्षा के लिए तैयार हुई लड़की से बात करे और उसके मन की दशा को समझे। वह उसे हर दृष्टि से सुन्दर लगी।

रावर्ट अपने मन की इस इच्छा को पूरा करने के लिए खड़ा ही हुआ था कि घेरे में बैठी सभी औरतें और मर्द खड़े हो गए। अग्नि-परीक्षा देने वाली लड़की भी जमीन पर दोनों पंजे गड़ाकर खड़ी हो गई। रावर्ट को बताया गया कि रायसाहब श्रीमान ओझा जी के साथ पधार रहे हैं।

पल-भर बाद ही अपनी रंग-बिरंगी पोशाक में ओझा, सफेद खद्दर की पोशाक में रायसाहब, इन दोनों के अंगरक्षक और दूसरे कुछ साथी प्रगट हो गए।

रावर्ट ने आगे बढ़कर रायसाहब को अपना परिचय कराया और रहीम के बारे में बताया कि ये हिंदोस्तान के एक मशहूर शिकारी हैं, हिन्दोस्तान की सरकार ने इन्हें मेरी मदद के लिए मेरे साथ भेजा है।

रायसाहब के चेहरे से लगा कि उन्हें इस मौके पर रावर्ट का आना अच्छा नहीं लगा है। उन्होंने अफसर से रावर्ट साहब को बंगले पर पहुंचाने का प्रबन्ध करने के लिए कहा। लेकिन रावर्ट ने अग्नि-परीक्षा देखने में रुचि होने की बात उठाई तो रायसाहब को मन मारकर रावर्ट का परिचय ओझा से करवाना पड़ा। रावर्ट को ओझा ओल्ड अमेरिका पर बनी किसी फिल्म के रैड इंडियन पात्र जैसा लगा।

सब लोग अपनी-अपनी कुर्सियों पर सज गए। ढोल बजना बंद हो गया। ढोल वाले की जगह पर सिर पर लम्बे-लम्बे सींग सजाए लाल पोशाकों वाले दो नर्तक बाहर निकल आए और हाथों में पकड़ी छोटी-छोटी खड़तालें बजा-बजाकर अग्नि-परीक्षा देने वाली औरत और लक्कड़ से बंधे आदमी के

रहे थे। इस घेरे के एक तरफ खड़ा एक सजा-धजा आदमी अपने गले में एक अनोखे ढंग का लम्बा-सा ढोल लटकाए उसे लगातार पीटे चला जा रहा था। ढोल की आवाज़ पहाड़ों से टकराकर अनेक आवाज़ों में बदल रही थी।

रावर्ट और रहीम चट्टान की बगल से नीचे उतरने लगे तो सारी भीड़ गर्दनें घुमाकर उनकी तरफ देखने लगी। धीरे-धीरे उतरकर वे दोनों आने-जाने के लिए छोड़े रास्ते के पास आकर खड़े हो गए। कुर्सियों के पास खड़े, शायद इस तमाशे की व्यवस्था करने वाले सबसे बड़े अफसर ने रावर्ट के पास आकर अंग्रेज़ी में पूछा, "सर, आप कौन हैं और क्या चाहते हैं?"

रावर्ट ने उसे समझाया कि हमे रायसाहब ने अपना आदमी भेजकर बुलवाया है और हम उनके बुलावे पर उनसे मिलने आए हैं।

अफसर ने बता दिया कि रायसाहब कुछ ही पलों में यहीं पहुंचने वाले हैं। वे चाहें तो उनका यहीं इन्तज़ार कर सकते हैं, नहीं तो उनको रायसाहब के बंगले पर पहुंचा दिया जाता है।

रावर्ट ने रायसाहब के साथ इस तमाशे को देखना ज़्यादा ठीक समझा। "नहीं, हम यहीं उनका इन्तज़ार करेंगे।" बोलकर वह घोड़े से उतर गया। रहीम ने भी उसका अनुसरण किया। अफसर ने इशारा किया तो हरी वर्दी वालों में से एक आदमी दौड़ता हुआ आया और अफसर का आदेश पाकर घोड़े एक तरफ ले गया। अफसर बड़े अदब से उन दोनों को कुर्सियों तक ले गया और उन्हें किनारे की कुर्सियों पर बैठने का निवेदन किया।

रावर्ट ने बैठते ही अफसर से अंग्रेज़ी में ही सवाल किया, "यह सब क्या है?"

अफसर ने अंग्रेज़ी में ही जवाब दिया, "यह एक लड़की की अग्नि-परीक्षा हो रही है। यह जो सामने सजी-धजी लड़की बैठी है, इसने इस लड़की के साथ बंधे आदमी पर बलात्कार की शिकायत दर्ज कराई है। वह औरत सच्ची है या झूठी, इसका फैसला इस अग्नि-परीक्षा से किया जाएगा।"

रावर्ट को सचमुच में यह सब बड़ा रोचक लगा। जब वह भारत में था तब इस तरह की कहानियां वह भारतवासियों के बारे में सुना करता था लेकिन उन्हें अपनी आंखों से देखने का मौका उसे नहीं मिला था।

अंग्रेज अफसर अपने सिपाहियों को अन्दरूनी इलाकों तक जाने ही नहीं देते थे। उसे खुशी थी कि अब तीस-पैंतीस साल बाद वहीं कुछ देखने का अवसर मिल रहा था। उसे हैरानी भी थी कि आज़ाद होने के बाद भी रूढ़िवादिता के मामले में, इस देश में कोई खास फर्क नहीं आया था। जिस औरत के साथ बलात्कार हुआ हो उसे अपनी सच्चाई के सबूत में आग में जलने का जोखिम उठाना पड़े, यह उसकी जड़बुद्धि के लिए भी अनुचित बात थी। उसके दिमाग में आया कि हो सकता है इस इलाके की औरतों को बचपन में ही रस्सी पर चलने का अभ्यास करा दिया जाता हो और इनके लिए यह अग्नि-परीक्षा एक खेल हो। उसका दिल हुआ कि वह अग्नि-परीक्षा के लिए तैयार हुई लड़की से बात करे और उसके मन की दशा को समझे। वह उसे हर दृष्टि से सुन्दर लगी।

रावर्ट अपने मन की इस इच्छा को पूरा करने के लिए खड़ा ही हुआ था कि घेरे में बैठी सभी औरतें और मर्द खड़े हो गए। अग्नि-परीक्षा देने वाली लड़की भी जमीन पर दोनों पंजे गड़ाकर खड़ी हो गई। रावर्ट को बताया गया कि रायसाहब श्रीमान ओझा जी के साथ पधार रहे हैं।

पल-भर बाद ही अपनी रंग-बिरंगी पोशाक में ओझा, सफेद खद्दर की पोशाक में रायसाहब, इन दोनों के अंगरक्षक और दूसरे कुछ साथी प्रगट हो गए।

रावर्ट ने आगे बढ़कर रायसाहब को अपना परिचय कराया और रहीम के बारे में बताया कि ये हिन्दोस्तान के एक मशहूर शिकारी हैं, हिन्दोस्तान की सरकार ने इन्हें मेरी मदद के लिए मेरे साथ भेजा है।

रायसाहब के चेहरे से लगा कि उन्हें इस मौके पर रावर्ट का आना अच्छा नहीं लगा है। उन्होंने अफसर से रावर्ट साहब को बंगले पर पहुंचाने का प्रबन्ध करने के लिए कहा। लेकिन रावर्ट ने अग्नि-परीक्षा देखने में रुचि होने की बात उठाई तो रायसाहब को मन मारकर रावर्ट का परिचय ओझा से करवाना पड़ा। रावर्ट को ओझा ओल्ड अमेरिका पर बनी किसी फिल्म के रैड इंडियन पात्र जैसा लगा।

सब लोग अपनी-अपनी कुर्सियों पर सज गए। ढोल बजना बंद हो गया। ढोल वाले की जगह पर सिर पर लम्बे-लम्बे सींग सजाए लाल पोशाकों वाले दो नर्तक बाहर निकल आए और हाथों में पकड़ी छोटी-छोटी सड़तालें बजा-बजाकर अग्नि-परीक्षा देने वाली औरत और लकड़ी से बंधे आदमी के

रहे थे। इस घेरे के एक तरफ खड़ा एक सजा-धजा आदमी अपने गले में एक अनोखे ढंग का लम्बा-सा ढोल लटकाए उसे लगातार पीटे चला जा रहा था। ढोल की आवाज़ पहाड़ों से टकराकर अनेक आवाज़ों मे बदल रही थी।

रावर्ट और रहीम चट्टान की बगल से नीचे उतरने लगे तो सारी भीड़ गर्दनें घुमाकर उनकी तरफ देखने लगी। धीरे-धीरे उतरकर वे दोनों आने-जाने के लिए छोड़े रास्ते के पास आकर खड़े हो गए। कुर्सियों के पास खड़े, शायद इस तमाशे की व्यवस्था करने वाले सबसे बड़े अफसर ने रावर्ट के पास आकर अंग्रेज़ी में पूछा, "सर, आप कौन हैं और क्या चाहते हैं?"

रावर्ट ने उसे समझाया कि हमें रायसाहव ने अपना आदमी भेजकर बुलवाया है और हम उनके बुलावे पर उनसे मिलने आए हैं।

अफसर ने बता दिया कि रायसाहव कुछ ही पलों में यहीं पहुंचने वाले हैं। वे चाहें तो उनका यहीं इन्तज़ार कर सकते हैं, नहीं तो उनको राय-साहव के बंगले पर पहुंचा दिया जाता है।

रावर्ट ने रायसाहव के साथ इस तमाशे को देखना ज़्यादा ठीक समझा। "नहीं, हम यहीं उनका इन्तज़ार करेंगे।" बोलकर वह घोड़े से उतर गया। रहीम ने भी उसका अनुसरण किया। अफसर ने इशारा किया तो हरी वर्दी वालों में से एक आदमी दौड़ता हुआ आया और अफसर का आदेश पाकर घोड़े एक तरफ ले गया। अफसर बड़े अदब से उन दोनों को कुर्सियों तक ले गया और उन्हें किनारे की कुर्सियों पर बैठने का निवेदन किया।

रावर्ट ने बैठते ही अफसर से अंग्रेज़ी में ही सवाल किया, "यह सब क्या है?"

अफसर ने अंग्रेज़ी में ही जवाब दिया, "यह एक लड़की की अग्नि-परीक्षा हो रही है। यह जो सामने सजी-धजी लड़की बैठी है, इसने इस लड़की के साथ बंधे आदमी पर बलात्कार की शिकायत दर्ज कराई है। वह औरत सच्ची है या झूठी, इसका फैसला इस अग्नि-परीक्षा से किया जाएगा।"

रावर्ट को सचमुच में यह सब बड़ा रोचक लगा। जब वह भारत में था तब इस तरह की कहानियां वह भारतवासियों के बारे में सुना करता था लेकिन उन्हें अपनी आंखों से देखने का मौका उसे नहीं मिला था।

रावर्ट के भी पथरीले माथे पर पसीने की बूंदें चुहचुहा आईं।

खलवा का पैर रस्से पर से हट गया। थम्मी के साथ बंधे आदमी ने एक हल्की-सी मुस्कान के साथ खलवा के पैर को धन्यवाद दिया। ओझा को दिए गए थोड़े घूस के पैसे सफल हो गए थे। उन पैसों की कीमत खलवा ने एक मासूम और निर्दोष लड़की की जान लेकर चुका दी थी।

● ●

उत्सव समाप्त होने के तुरन्त बाद रावर्ट, रहीम और ओझा रायसाहब के बंगले के सजे-धजे कमरे में बैठे थे। ओझा रावर्ट को अफ्रीकी जंगलों की किसी नरभक्षी जाति का सरदार लग रहा था। जिन्दा जानवरों का व्यापार करने वाली एक अमरीकी कम्पनी में भर्ती होकर रावर्ट ने अफ्रीका के जंगलों का दौरा करते हुए ऐसे कई सरदारों से मुलाकात की थी। उन सरदारों के चेहरों पर भी ऐसी भयंकर घटनाएं घट जाने के बाद शिकन तक नहीं पड़ती थी। बल्कि वे ऐसी घटनाओं को देखने में आनन्द का अनुभव करते थे। वहां भी कई कबीलों के लोगों ने औरतों के बारे में ऐसे ही निर्दयता से भरे कानून बनाए हुए थे।

रावर्ट के कानों में अभी भी आग में जल जाने वाली उस सुन्दर लड़की की चीखें गूंज रही थीं! काले, सफेद, लाल रंगों की लकीरों से सजा ओझा का चेहरा भी उसके सामने था। उसने रायसाहब के अन्दर से आने तक के वक्त को काटने की गरज से ओझा से सवाल किया, "अगर लड़की रस्सा को पार कर लेता तो किया होना मांगता?"

रावर्ट का सवाल सुनकर ओझा के होंठ तनिक फैले, होंठों में से पीले दांतों ने थोड़ी झलक दिखाई। थोड़ा खांसकर ओझा रावर्ट की तरफ मुखातिब होकर बैठ गया और रावर्ट की भाषा को ही अपनाने की कोशिश करता हुआ बोला, "कुछ नहीं होना मांगता। लड़की का भाई, गरीब मां-बाप जुर्माने के रूप में बलात्कार करने वाला आदमी से कुछ रुपया मांगता। वह रुपया दे देता और अपने काम पर चला जाता।"

"वास्स?" रावर्ट का हाथ ओझा के मुंह के सामने खुल गया।

"कभी-कभी ज़रूरी समझा जाता है तो रायसाहब अपराधी को कोड़े भी लगवा देते है।" ओझा ने रावर्ट के 'वास्स' का जवाब दिया।

"लेकिन औरत की सज़ा के मुकाबिले में यह सज़ा तो कुछ भी नहीं है।" अब रहीम ने अपनी तकलीफ ज़ाहिर की।

"औरत और आदमी का मुकाबिला हो ही नहीं सकता।" ओझा ने रहीम की तरफ मुंह फिराया। "भगवान ने ही औरत और मर्द में अपने हाथों से फर्क डाला है। शेर के बाल होते हैं शेरनी के नही। मुर्गे की कलगी होती है मुर्गी की नही। इसी तरह आदमी के मुंह पर बाल होते हैं औरत के नही। आदमी औरत की निसबत काम भी ज्यादा कर सकता है। वह खेतों मे अपने कन्धों पर बैल की तरह हल रखकर खींच सकता है लेकिन औरत नही खींच सकती। इसीलिए…"

ओझा के कुतर्कों पर रहीम को हंसी आने को हुई, पर राबर्ट के सवाल ने ओझा का बोलना बीच मे ही रोक दिया तो उसने हंसी को मुंह पर हाथ रखकर खांसी दबाने के बहाने दबा दिया। रावर्ट का सवाल था, "पर औरत का जिन्दा वाडी को फायर में जलाना वौत बुरा हाय! आई मीन इट इज़ वैरी मच इल्लीगल!"

रावर्ट का अंतिम अंग्रेजी का वाक्य न समझने की वजह से पहले ओझा कुछ क्षण चुप रहा, फिर रहीम की तरफ मुंह करके बोला, "अग्नि परीक्षा एक धार्मिक काम है। रामायण काल से ही हमारे देश मे वह चला आ रहा है। मां सीता को भी तो अग्नि-परीक्षा देनी पड़ी थी। अगर परीक्षा देती हुई कोई औरत जल जाती है तो यह देवता की मर्ज़ी से होता है, इसमें हम या आप क्या कर सकते है?"

रावर्ट रामायण और सीता के बारे मे कुछ नही जानता था, इसलिए वह रहीम की तरफ देखता हुआ दांतों से होंठ चबाने लगा। सचमुच सीता की अग्नि परीक्षा तो हुई थी और वह भी सीता को अपनी सच्चाई और पवित्रता साबित करने के लिए। लेकिन एक गलत काम को ओझा जैसे लोग इसलिए सही कहकर चालू रखे हुए है कि उसका सम्बन्ध किसी धर्मग्रन्थ से है, यह भी उसे एक बहुत बड़ा कुतर्क लगा था। उसके मन में आया कि वह ओझा से कहे कि उस वक्त तो राजाओं-महाराजाओं का ज़माना था। जो शासक फैसला कर देता था, वही कानून समझा जाता था, लेकिन आज तो देश में प्रजातन्त्र है, जनता के प्रतिनिधि व्यवस्थापिका

के रूप में कानून बनाते है, और आज के कानून में, किसी को भी ज़िंदा जलाने के लिए परिस्थितियां बनाना, गैरकानूनी और दण्डनीय है, फिर आज यह सब आप लोग किस बिनाह पर किए जा रहे है ? पर वह मन में आया जुबान पर नहीं ला सका। क्योंकि इसी समय छोटी-छोटी घंटियां बजीं और रायसाहब मूंछों के बाल ठीक करते हुए अपनी घूमने वाली कुर्सी पर आ बैठे, जिससे चल रहा विषय एकदम थम गया और सब लोग उनकी तरफ मुखातिब हो गए।

अभी रायसाहब मेज के शीशे के नीचे रखे कागजों को निकालकर उलट-पलट ही रहे थे कि सोने के कड़े चढ़े किसी खास ही किसम के शीशे से बने तीन खूबसूरत प्याले मेज पर हाज़िर हो गए। रायसाहब की फैक्टरी में, विदेशों को निर्यात करने के उद्देश्य से बनने वाली बढ़िया शराब उनमें ढाली गई। राबर्ट ने प्याला मुह को लगाने से पहले रायसाहब से अंग्रेज़ी में पूछा, "लेकिन आपका पैग ?" रायसाहब ने जवाब दे दिया, "मैं शराब नहीं पीता।" राबर्ट ने बिना कोई आश्चर्य प्रकट किए प्याला खाली कर दिया। इससे बड़ा आश्चर्य उसके लिए क्या हो सकता था, जिससे वह कुछ देर पहले उत्सव में टकराकर आया था।

रहीम और ओझा ने शराब धीरे-धीरे पीनी शुरू की, चाय या काफी की मानिन्द, चुस्कियां ले लेकर।

राबर्ट का प्याला इस बार रायसाहब ने स्वयं अपने हाथ से पूरा भर दिया। राबर्ट उसे भी शर्बत की तरह गट-गट पी गया। रायसाहब ने दूसरी बोतल मंगवाकर प्याला भरा तो राबर्ट अब तृप्ति की सांस लेकर धीरे-धीरे पीने लगा।

"हां तो मास्टर राबर्ट आपके ख्याल में इस इलाके के आदमखोर जानवरों पर काबू पाया जा सकता है कि नहीं ?" रायसाहब ने मतलब की बात करने से पहले शिकारी राबर्ट की रुचि का विषय छेड़ा।

राबर्ट ने एक बार रायसाहब की पीठ पीछे लगे महात्मा गांधी के चित्र को देखा, फिर उसकी नजर चित्र की बगल-बगल लगे खूंखार जानवरों के चेहरों पर गई। अहिंसा के पुजारी के साथ हिंसा का यह मेल उसे अजीब लगा। राबर्ट ने सोच-समझकर अंग्रेज़ी में जवाब दिया, "इस तरह तो इन पर काबू नहीं पाया जा सकता।"

"किस तरह ?" रायसाहब के लिए स्वदेशी भाषा को अपनाने की

विवशता थी। वे अंग्रेज़ी समझ ज़रूर लेते थे लेकिन बोलने में उनको काफी दिक्कत पेश आती थी।

"मेरा मतलब है कानून को जंगली बनाकर या जंगल के पक्ष में बनाकर इन पर काबू कैसे पाया जा सकता है?" राबर्ट अंग्रेज़ी में ही बोला।

"और किस तरह पाया जा सकता है?"

"इस देश के पूरे जंगलों का सफाया करना होगा, उनकी जगह नये जंगल, मेरा मतलब है उपवन उगाने होंगे।"

रायसाहब के होंठों पर मुस्कान खेल गई। वे समझ गए कि राबर्ट नशे में बोल रहा है। बिना नशे में धुत्त हुए आदमी ऐसी अनहोनी और बेतुकी बात कर ही नहीं सकता। भला जंगलों का सफाया भी आज तक किसी ने किया है? उन्होंने विषय को सीमित किया, "इधर दमकड़ी और छदांग के आसपास जिस जानवर ने आतंक फैलाया हुआ है, उसके बारे में आपका क्या ख्याल है?"

"उसकी कोई समस्या नहीं है। वह तो एक बूढा तेंदुआ है। उसके ऊपर के दो शिकारी दांत टूटे हुए हैं। वह सिर्फ बच्चों और बूढों का ही शिकार कर सकता है। अपने बचे हुए दो शिकारी दांतो से जिन्दा शिकार के गले मे छेद करके शिकार का खून पीना ज्यादा पसन्द करता है। हमने उधर छदांग में एक लाश का पूरा मुआयना करके और जानवर के पैरों के निशानों का नक्शा तैयार करके सब पता लगा लिया है।"

"तो फिर?"

"उसको तो हम जब जी चाहे खत्म कर सकते है। पर हम उसे जिन्दा पकड़ना चाहते हैं। हमने आदमी भेजकर शहर से एक पिंजरा मंगवाया है। अभी हम उस पिंजरे का इंतजार कर रहे हैं।"

"ठीक है, आप उस पिंजरे का इंतज़ार कीजिए। लेकिन तेंदुआ अगर जिन्दा नहीं पकड़ा जाता तो आप उसे तभी खत्म करेंगे जब हम आपको उसे खत्म करने के लिए कहेंगे।" रायसाहब ने राबर्ट के प्याले को फिर भर दिया और बाकी बची शराब ओझा और रहीम के प्यालों मे उंड़ेल दी।

"ये तो खैर आपके हुक्म के मुताबिक हो ही जाएगा लेकिन हम आपसे एक अपने मतलब की बात भी करना चाहते है।" राबर्ट अब

असली बात पर आया।

"कैसे मतलब की ?" रायसाहब ने भेद-भरी नज़रों से ओझा की तरफ देखा।

"अपने एक निजी व्यापार की !" राबर्ट ने हाथ का आकार बनाकर व्यापार की तरफ संकेत कर दिया।

हाथ के आकार से रायसाहब व्यापार का स्वरूप बहुत अच्छी तरह से समझ गए। ऐसे व्यापार की बात अकेले में ही की जा सकती थी। रहीम और ओझा की उपस्थिति में तो उसका आभास तक भी देना उचित नहीं था। उन्होंने हाथ की घड़ी देखकर राबर्ट को समझाया, "बिजनस की बात करने के लिए हम आपको किसी दूसरे दिन बुलाएंगे। आज मुझे एक बहुत ज़रूरी मीटिंग में जाना है। राजधानी से कुछ लोग इसी मकसद से आए हुए हैं।"

"ठीक है !" कहकर राबर्ट प्याले में बची शराब छोड़कर खड़ा हो गया। रहीम और ओझा भी शराब छोड़कर खड़े हो गए। अचानक राबर्ट की निगाह जल रही ट्यूबों और बगल की तिपाई पर पड़े फोन पर चली गई। उसने खिसियाहट मिटाने के लिए इनके बारे में ही सवाल कर लिया, "इस जंगली इलाके में आपके पास बिजली और टेलीफोन ? सड़क तो यहां से बहुत दूर है ?"

"नहीं, इधर ऊपर के इलाके में सडक ज्यादा दूर नहीं है। वहीं से, गहरी घाटियों में से निकालकर, खुद अपने खर्च पर हम इन दोनों चीज़ों को यहां तक ले आए हैं। थोड़े दिनों तक ऊपर से यहां तक सड़क बन जाएगी, हम सरकार को राज़ी कर रहे हैं।"

"ऊपर से सड़क ? चिटमौला के डाक बंगले से क्यों नहीं ले आते ? वहां तक तो एक तरह से रास्ता भी बना हुआ है ?" राबर्ट ने हैरानी प्रगट की।

"यह राज़ हम आपको फिर समझाएंगे, इस वक्त ज़रा हम जल्दी में हैं।" बोलकर रायसाहब ने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया। केवल राबर्ट के साथ हाथ मिलाकर वे घंटियां टनटनाते हुए अन्दर चले गए।

अब उन दोनों को विदा करने का उत्तरदायित्व ओझा पर था। ओझा जब उनको बाहर तक छोड़ने आया तो बाहर खलवा और चेतू के साथ खड़ा अभियोग से मुक्त हुआ आदमी आगे बढ़कर ओझा के पैरों में गिर

पड़ा—इस धृष्टता के साथ कि आज के दिन उसकी इज्जत बचाने वाले ये ही हैं। ओझा ने हाथ का झाड़न उस आदमी के मुंह पर फिरा दिया, इस अंदाज में कि इस वक्त यहां आने की क्या जरूरत थी?

रावर्ट और रहीम ने भी उस आदमी को गौर से देखा। लेकिन वे किसी दूसरी ही धुन में सवार थे। इस देश के नेताओं की वास्तविकता को देखकर पैदा होने वाली धुन में।

उन्होंने आगे बढ़कर बंगले के सामने लाकर खड़े किए गए अपने घोड़े संभाले और ओझा तथा उसके अंगरक्षकों के साथ बंगले के रक्षकों के सलाम कबूल करके दमकड़ी की तरफ चल पड़े।



आखिर वह दिन भी आ ही पहुंचा जब रिहर्सल कर रहे लड़कों को अपने करतब दिखाने का मौका मिलना था। नृत्य के साथ खेली जाने वाली संक्षिप्त नाटिका के लिए पात्रों की वेशभूषा तो दिनेश ने आम ही रखी थी लेकिन मुंह और हाथ-पैरों की सफाई तो जरूरी थी, इसलिए सुबह से ही लड़के इनकी मैल उतारकर साफ-सुथरा बनाने में लगे थे।

दो-तीन लड़के, जिन्होंने अभिनय नहीं करना था, दवाईखाने के सामने की जगह को साफ करने में लग गए। डा० दादा भी उनकी मदद करते रहे। प्रोग्राम इस तरह रखा गया कि पहले करियाला पार्टी करियाला का नृत्य करेगी, फिर नृत्य को बीच में रोककर, अचानक दवाईखाने से निकलकर पात्र बाहर आ जाएंगे और लोगों को चौंकाते हुए अपना अभिनय शुरू कर देंगे। अभिनय समाप्त होते ही फिर समूह-नृत्य शुरू हो जाएगा। जैसा कि रिवाज है, करियाला और नृत्य देर रात तक चलते रहेंगे।

शाम होते ही लड़कों ने मैदान के बीचोंबीच अलाव जलाने के लिए लकड़ियों का ढेर लगा दिया। कुछ लकड़ियां बाद में काम आने के लिए दवाईखाने की बगल में रख दी। पुराने कपड़े और पुरानी रूई को लकड़ी के डंडों पर खास किस्म से मढ़कर चार मशालें तैयार की गईं। उनको तेल से तर करके चारों कोनों पर गाड़ दिया गया। कुछ देर तो अलाव

की आग की रोशनी काम करेगी और उसके बाद मशालों की। इस प्रकार अंधेरे का नामोनिशान नहीं रहेगा। इसके अलावा आम धारणा यह भी है कि आग से जंगली जानवर डरते है और उसके आसपास भूत-प्रेत भी बिलकुल नही फटकते।

सरपंच ने,नृत्य देखने के लिए रावर्ट, रहीम और उनके दूसरे साथियों को भी आमंत्रित कर लिया था। रावर्ट ने अपने आदमी भेजकर एक तरफ अपनी कुर्सियां लगवा दी थीं। पहले तो दिनेश और दादा ने कुर्सियां उठवाकर वापस भिजवाने का फैसला किया था पर सरपंच के इस आश्वासन पर कि अगर आज रावर्ट ने कोई गन्दी हरकत की तो सबसे पहला आदमी वही होगा जो उसका विरोध करेगा, उन्होंने रावर्ट की उपस्थिति को स्वीकार कर लिया था। साथ-ही-साथ यह संकल्प भी कर लिया था कि सरपंच चाहे कुछ करे चाहे न करे पर वे दोनों उसका विरोध जरूर करेंगे।

आसपास के गांवों को भी कुछ दिन पहले ही संदेश भेज दिए गए थे, इसलिए वहां के कुछ उत्साही युवक सज-धजकर छोटी-छोटी टोलियों में दोपहर से ही पहुंचने शुरू हो गए थे और अपने-अपने रिश्तेदारों या परिचितों के घरों मे जम गए थे। उन्हें करियाला में युवतियों के साथ नृत्य करने का अवसर मिलने वाला था। करियाला में आदिवासी युवक और युवतियों को आपस में मिलकर खुले तौर पर नृत्य करने की अपने-अपने परिवारों से इजाजत मिल जाती थी।

युवक जंगल से एक खास किसम की नशा देने वाली बूटी भी उखाड़ लाए थे। जहां-जहां वे ठहरे थे, उस बूटी का रस निकालने का बन्दोबस्त कर रहे थे। लगभग सभी घरों में सिलबट्टा घिसने की आवाजें आने लगी थीं। इधर युवतियां भी दोपहर से ही सजने-संवरने मे लीन हो गई थीं। करियाला पार्टी में सबसे ज्यादा आकर्षण बच्चों के लिए था। वे तम्बुओं को छोड़, सरपंच के कमरे के सामने इकट्ठे हो गए थे और वहीं अपना करियाला रच रहे थे।

दिन ढलते ही देउता की पूजा करने के बाद अलाव को आग दे दी गई। आग देते ही करियाला पार्टी का ढोलची अलाव के पास खड़ा होकर ढोल पीटने लगा। ढोल की आवाज सुनते ही लोग अपने-अपने घरों से निकलकर अलाव के चारों ओर गोल घेरे में जमा होने लगे। एक तरफ

खाट पर डा० दादा सूरज और रूपा को लेकर बैठ गए, दूसरी तरफ राबर्ट, रहीम और सरपंच कुर्सियों पर सज गए। दिनेश दवाईखाने के अन्दर लड़कों को अन्तिम निर्देश देने में व्यस्त हो गया।

आखिर ढोल बजना बन्द हो गया। मशालें जला दी गईं। दूर के अंधेरे में बैल के मुखौटे लगाए दो मानव-शरीर, पैरों के घुंघरू छनकाते आते दिखाई दिए। भीड़ ने तालियां बजाकर और बच्चों ने हो-हुल्लड़ मचाकर उन शरीरों का स्वागत किया।

करैलियों के मैदान में आते ही ढोल फिर बजना शुरू हो गया और ढोल के साथ ही एक तरफ बैठे साजिन्दों ने अपने परम्परागत साज भी बजाने शुरू कर दिए। दो छोटी-छोटी डफलियां, एक शहनाई की तरह का बाजा, एक मोटे बांस की बांसुरी और बीच-बीच में गुहार उठने वाली बड़े-से सींग को लेकर बनाई गई तीखी आवाज वाली शृंगी।

लाल चोगों से सजे बैल के मुखौटों वाले दोनों करैलियों ने चक्कर काट-काटकर और बांहें उछाल-उछालकर नाचना शुरू कर दिया, मानो किसी अदृश्य शत्रु से, हवा में हथियार घुमा-घुमाकर युद्ध कर रहे हों। लोग प्रफुल्लित चेहरों पर फैली आंखों में आनन्द की चमक लिए उनके नृत्य को देखने लगे।

जब करैलिये काफी नाच चुके तो उन्होंने एक तरफ खड़े होकर हाथ के इशारों से युवक और युवतियों को समूह-नृत्य के लिए आमंत्रित किया। आमन्त्रित होते ही सब के सब हो-हुल्लड करते हुए मैदान में उतर आए। युवतियों ने एक-दूसरी की बगल में बांहें डालकर एक पंक्ति खड़ी कर ली और उधर युवकों ने भी इसी तरह दूसरी पंक्ति बना ली। अब साज एक दूसरी ही थिरकन-भरी तर्ज पर बजने लगे। युवतियों के समवेत स्वर में एक हूक-भरी, फिर स्वर साजों की ताल पर झरने की आवाज की तरह निरंतर बहने लगा। साथ ही बहने लगे कड़ों के आपस में टकराने से हल्की-सी आवाज करते हुई युवतियों के नंगे पैर। युवकों के पैर खाली थे। वे भी जैसे धूल को उछाल-उछालकर कड़ों के आमंत्रण का जवाब देने लगे।

युवतियों की एक पंक्ति समुद्र की एक बड़ी लहर की तरह से एक तरफ से दूसरी तरफ जाती और दूसरी तरफ से आने वाली युवकों की लहर को काटकर आगे निकल जाती। लोग मुग्ध होकर पंक्ति-लहरों के इस

कटाव को देख रहे थे और साजिन्दे मस्त होकर साज बजा रहे थे। साजों के साथ गूंजने वाली गीत की कोई एक ही शब्द-पंक्ति, कुछ इस तरह की ध्वनि के साथ गूंज रही थी—हाहा हाहा हो ऽऽ हो ऽऽ! हाहा हाहा हो ऽऽ हो ऽऽ!!

एक घंटे तक यह मोहक नृत्य चलते रहने के बाद दवाईखाने के द्वार खोलकर दिनेश बाहर निकला। जैसा कि तय था करैलिये के हाथ का इशारा पाते ही साज बजने बन्द हो गए। नाचने वालों को नाच के बीच में नाटिका का दृश्य देखने की योजना का ज्ञान ही नहीं था। साजों के बन्द होते ही उन्होंने भी नाचना बंद कर दिया और भौंचक-से एक-दूसरे का मुह ताकने लगे।

तभी दवाईखाने के अन्दर से शेर के मुखौटे वाला एक पात्र बाहर निकला और दहाड़-दहाड़कर गोल दायरे से चक्कर काटने लगा। तीन-चार चक्कर काटने के बाद दहाड़ के साथ-साथ वह सम्वाद भी बोलने लगा, "मैं राजा हूं···मैं राजा हूं···इस परिरक्षित जंगल का बादशाह··· मैं खून पियूंगा···तुम लोगों का खून पियूंगा···हा हा हा हा हा गर्म-गर्म खून पियूंगा!"

लड़का इतनी तेज़ और जोशीली आवाज मे बोल रहा था और ऊंची दहाड़ें मार रहा था कि सब के सब हैरान और चौकन्ने होकर उसे देखने लगे। लेकिन राबर्ट को लड़कियों का नाच बन्द कर देना अच्छा नहीं लगा। वह बुझे सिगार को जलाकर खड़ा हो गया और जूतों से खचर-खचर की आवाज़ निकालता हुआ तम्बुओं की तरफ चल दिया। उसे जाते देख रहीम और उसके साथी भी उठकर उसके पीछे-पीछे चल दिए। सरपंच को राबर्ट और उसके साथियों के इस तरह उठकर जाने में कोई राज़ की बात लगी, इसलिए वह भी उठकर उनके पीछे-पीछे चल दिया। लोग पात्र के अभिनय में इतने खोए थे कि किसी दूसरे ने उनके जाने की तरफ कोई ध्यान ही नहीं दिया। हां, दो-चार बच्चों का ध्यान ज़रूर उनकी तरफ गया, क्योंकि वे कुर्सियां खाली होते ही उन पर बैठने की फिक्र में खिसककर उन तक पहुंच गए और सब की नज़रों को व्यस्त देख उन पर बैठ भी गए।

इसी समय दवाईखाने के अन्दर से नारी का भेष धरे हुए एक पात्र प्रगट हुआ और उसने दादा के पास बैठी रूपा को पकड़कर साथ ले लिया

और पैरों में घुंघरू बजाता हुआ ठुमक-ठुमककर गोल चक्कर में घूमने लगा। लोग उसके घूमने के रहस्य को समझने की कोशिश करने लगे।

जब नारी पात्र रूपा को अपने साथ घसीटताहुआ-सा दो चक्कर काट चुका तो पहले वाला राजा पात्र फिर गरजा, "हा हा हा हा हा एक औरत और एक बच्चा। मैं इनका खून पियूंगा। गर्म-गर्म खून पियूंगा! हा हा हा हा हा खून पियूंगा।" बोलते-बोलते उसने अपने लम्बे-लम्बे नाखूनों वाले हाथ रूपा की गर्दन पर डाल दिए। रूपा को भी इस हादसे के बारे में कुछ भी बताया नहीं गया था। वह गर्दन पर हाथ पड़ते ही ज़ोर-ज़ोर से चीखने लगी।

नारी पात्र ने तुरन्त आसमान की तरफ हाथ फैला दिए, "अरे कोई बचाओ। इस राक्षस से मेरी बच्ची को बचाओ। बचाओ! बचाओ!"

बच्ची की चीखों और नारी पात्र की पुकारों ने ऐसा असर किया कि चन्देरी—'अरे इस बच्ची को क्या कर रहे हो'—बोलती हुई खड़ी हो गई। उसे खड़ी होती देख दो-तीन युवक भी खड़े हो गए। पर डा० दादा ने उनके पास पहुंचकर उनको समझाकर बिठा दिया।

चन्देरी के बैठते ही अन्दर से हिरन की तरह छलांगें मारते हुए चार छोटे-छोटे लड़के प्रगट हो गए। उनको देखते ही राजा पात्र ने बच्ची को तो गोद में उठा लिया और वह लड़कों के साथ जैसे सचमुच में ही राम-लीला जैसा युद्ध लड़ने लगा।

इधर रूपा अपने आपको राजा पात्र के चंगुल से मुक्त कराने के लिए चीख-चिल्ला और हाथ-पैर फटकार रही थी और उधर चारों ओर लड़के राजा पात्र को घेरकर उससे युद्ध कर रहे थे। आखिर राजा ने बच्ची को छोड़ दिया। बच्ची गोली की तरह भागी और औरतों की भीड़ में बैठी अपनी मां जमना से जा लिपटी। इधर चारों लड़कों ने राज पात्र को धराशायी कर दिया और एक लड़का उसकी छाती पर बैठकर जैसे हाथ के छुरे का उस पर प्रहार करने लगा। दो-चार बार छटपटाकर राजा पात्र निश्चल हो गया, जैसे शेर मर गया हो।

भीड़ में सचमुच में राक्षस के मरने की खुशी की लहर दौड़ गई। सबने तालियां बजाकर और हो-हुल्लड़ मचाकर अपनी खुशी का इजहार किया। युवक तो अपनी जगह से मैदान में आकर नाचने लगे।

नाटिका खत्म होते ही दिनेश दवाईखाने से बाहर निकला। उसे देखते

ही लोगों ने फिर तालियां बजाईं। डा० दादा तो खड़े होकर उससे लिपट ही गए।

करैलिये के हाथ का इशारा पाते ही ढोल और दूसरे बाजे फिर बजने लगे। दिनेश युवक और युवतियों के साथ बैल की आकृतियों का नृत्य देखने लगा। लेकिन उनकी आंखें बार-बार औरतों की भीड़ में श्यामा को ढूंढ़ रही थीं और दादा भी चुपचाप कनखियों से उसकी आंखों का पीछा कर रहे थे।

● ●

पूरा उत्सव बिना किसी विघ्न के खुशी-खुशी समाप्त होने जा ही रहा था कि अचानक घटी दुर्घटना ने सारा गुड़ गोबर कर दिया। किसी ने चिल्लाकर कह दिया, "शेर आ गया, शेर।" बस शेर का नाम सुनना था कि सभी लोगों में भगदड़ मच गई। जिसको जहां भी कोई सुरक्षित स्थान मिला वह वहीं जा घुसा। रह गई बेचारी अपंग जमना, जिसके लिए घिसटकर तेज चलना संभव नहीं था।

जमना गेंद की तरह लुढ़कती हुई एक दरवाजे के सामने जाती पर उसे बन्द पाकर आगे के लिए बढ़ जाती। दरवाजे एक ही पल में बन्द हो चुके थे, उनके खुलने का अब सवाल ही नहीं पैदा होता था। आखिर जमना पूरी शक्ति लगाकर दवाईखाने की तरफ लौटी। वह अभी मशालों की रोशनी के दायरे में भी नहीं पहुंच पाई थी कि मौत विकराल मुंह खोले सचमुच में उसके सामने आ खड़ी हुई। निहत्थी जमना ने दोनों हाथ ऊपर उठाकर चीखना चाहा पर आदमखोर ने फुर्ती से झपटकर उसे गर्दन से दबोच लिया। उसकी चीख गले में फसी रह गई। जब तक दिनेश और दादा हथियार लेकर बाहर निकलें तब तक आदमखोर उसे बंधी गठरी की तरह मुंह में उठाकर गांव से बाहर जा चुका था।

अपने तम्बू में बैठा राबर्ट रहीम और सरपंच के साथ शराब पीने में मस्त था। शोर सुनकर वह बाहर आया। रहीम ने लाकर उसे राइफल भी थमा दी। राइफल पर लगी टार्च की रोशनी मे आदमखोर उसे जाता दिखाई भी दे गया। उसने ठीक उसकी छाती पर निशाना भी बांध

लिया पर जब उसने आदमखोर के मुंह में गठरी को पहचाना तो गोली नहीं चलाई। उसके सामने वह दृश्य कौंध गया कि किस तरह उस अपाहिज औरत ने दरवाजे पीट-पीटकर उसे बाहर आने के लिए मजबूर कर दिया था और किस तरह वह उसकी टांगों के साथ चमगादड़ की तरह चिपक गई थी। फिर रावर्ट की गोली चली थी, आदमखोर पर नहीं, जमना पर। गोली की आवाज सुनते ही आदमखोर जमना को छोड़कर भाग निकला था। जब उसकी लाश को उठाया गया था तो गोली ठीक उसकी खोपड़ी में घुसी मिली थी।

सवेरा होते ही मान लिया गया था कि रावर्ट का कोई दोष नहीं है। आदमी का निशाना चूक भी तो सकता है, सो चूक गया। लेकिन दिनेश, डा० दादा और नाटक मंडली के लड़के सरपंच के इस बेहूदा तर्क से सहमत नहीं हुए थे।

● ●

सूरज निकलने के बाद बाहर से आए युवक अपने-अपने घरों को लौट गए थे। करियाला पार्टी अपना पारिश्रमिक लेकर चलती बनी थी। लोग अपने-अपने काम में व्यस्त हो गए थे जैसे कुछ हुआ ही न हो। रह गए थे डा० दादा और दिनेश और जमना की लाश के साथ दो अबोध बच्चे।

ओझा के पास आदमी भेजा गया लेकिन उसने आने से साफ इन्कार कर दिया। धार्मिक नियम बताया कि जिस औरत का पति कानून तोड़ने के जुर्म में जेल की सजा काट रहा हो उसकी लाश को जलाते या दफनाते वक्त क्रिया-कर्म करने की कोई जरूरत नहीं।

आखिर दादा ने ही पं० रामरिख की मदद से अपने ही ढंग से जमना का दाह-संस्कार करने का फैसला किया। यह रहस्य सरपंच के पेट में ही रह गया कि बैटरी की रोशनी में उसने भी आदमखोर की हाथी जितनी बड़ी देह अपनी आंखों से देखी थी।

तीन-चार दिन बाद ही दमकड़ी गांव के लड़के जमना के साथ घटी दुर्घटना को भूलकर नये करियाला के लिए एक नई नाटिका तैयार करने में जुट गए। इस बार पहरुआ गांव के कुछ हरिजन लड़के भी उनके साथ आ मिले। फैसला किया गया कि एक मास बाद जो बसंत पंचमी का त्योहार आ रहा है, उसी पर इस बार करियाला पहरुआ गांव में करवाया जाए और नई नाटिका भी उसी अवसर पर खेली जाए।

इधर नई नाटिका की रिहर्सल चलती रही और उधर आसपास के गावों में पुरानी नाटिका का मंचन भी चलता रहा। इलाके में जहां कहीं भी कोई उत्सव होता, उसमें होने वाले करियाला में इस नाटक मंडली को भी जरूर आमंत्रित किया जाता। दिनेश और डा० दादा भी नाटक मंडली के साथ जाते और लोगों द्वारा उनका भरपूर स्वागत होता। यहां तक कि अब दिनेश का नाम ही नाटक मंडली वाला मास्टर पड़ गया। रायसाहब और ओझा के कुछ गुर्गों की आपत्तियों तथा विरोध के बावजूद यह नाटक मंडली वाला मास्टर अपने लड़कों के साथ नाटिका को निर्भीकता से खेलता। एक बार तो नौबत लड़ाई-झगड़े तक भी पहुंची। पता चला कि कुछ लोग रात को मंडली के लड़कों पर हमला करेंगे। लड़के थोड़ा विचलित भी हुए, पर गांव वालों ने हथियार बन्द पहरा लगाकर नाटिका को खिलवाया। यह दिनेश के लिए बिलकुल नई बात थी, इसलिए अब उसके भी हौसले बढ़ गए थे। सोए हुए लोग जाग रहे थे और दिनेश को इन लोगों की ताकत पर बड़ी आस्था थी।

लेकिन दिनेश के लिए एक नई समस्या भी पैदा हो गई। मनोहर बाबू से एक मास की तनखा के जो रुपये लाए गए थे उनके अलावा एक पैसा भी राजधानी से उसके पास नहीं पहुंचा। कहां तो वह जगतिया के दोनों बच्चों का बोझ भी अपने सिर लेकर चलना चाहता था और कहां अब उसे स्वयं भी डा० दादा पर निर्भर रहना पड़ने लगा। नाटिका के मंचन के समय थोड़े-बहुत इनाम के पैसे जरूर मिलते थे। लड़के अपने-अपने इनाम के पैसे दिनेश के सामने रख भी देते थे। पर दिनेश उन पैसों को इकट्ठा करके बराबर-बराबर लड़कों में ही बांट देता। अपने लिए उनमें से एक पाई भी न रखता। करियाला करवाने वाला घर

करैलियों को पैसे देते वक्त जो पांच रुपये नाटक मंडली को भी देना, दिनेश उन रुपयों को नाटक मंडली का नया सामान खरीदने के लिए दादा के पास जमा करवा देता। वह उसमें से भी अपने पर एक भी पाई खर्च न करता। दादा कुछ कहते तो बोल देता, "यह तो नाटक मंडली की अमानत है दादा, इसको नाटक मंडली पर ही खर्च होना है।" दादा उसे यही सलाह देते कि "शहर हो आओ! अपनी तनखा भी लेते आना और कुछ आवश्यक काम करने के साथ थोड़ा सामान भी।" इस पर भी वह इतना सा जवाब देकर टाल जाता, "अब तो जाना ही पड़ेगा!" पर जाने के रास्ते में कोई न कोई रुकावट पैदा होती ही रहती। उसे लगता रहता कि बाहर जाने के लिए उसके पास फुर्सत ही नहीं है। अगर फुर्सत निकाल-कर निकला भी तो पीछे से पता नहीं क्या घट जाए। इस बार कुछ भी घटते वक्त उसे घटनास्थल पर उपस्थित होना ही चाहिए।

लम्बे अर्से से श्यामा से भी मुलाकात नहीं हुई थी। एक-दो उत्सवों में बस शक्ल भर देखने को मिली थी। वह भी ऐसी शक्ल जैसे किसी अपरिचित की शक्ल हो। शैल भी लगभग इसी तरह का अजनबी हो गया था। बंगालन मां की तो शक्ल भी देखने को नहीं मिली थी। दिल होता था कि किसी न किसी बहाने पहरुआ की तरफ निकल जाए। बिलकुल सामने ही तो पड़ता है घर। उसी तरह कुत्ते भौंकने लगेंगे तो बंगालन मां बाहर निकलकर देखेंगी। अन्दर आने के लिए कहेंगी तो वह अन्दर चला जाएगा और बातों ही बातों में अपनी मजबूरी कह सुनाएगा।

लेकिन श्यामा के कहे हुए वे जहरीले शब्द?... शब्दों की याद आते ही उसका मन वितृष्णा से भर उठता। सोचता, उस दिन उसका श्यामा से जाकर मिलना क्या सचमुच में ही भावुकता थी? क्या मीना के प्रति भी वह भावुक है? जिस मीना ने पिछले तीन-चार साल से कोई पत्र-व्यवहार तक नहीं किया है, क्या वह भी उसके प्रति इसी तरह भावुक होगी? इन सवालों के जवाब उसे दुविधा में डाल देते। उसे लगता कि एक बार दसूहा जाकर मीना से मिल आना चाहिए। उसे बता आना चाहिए कि वह आजकल किन परिस्थितियों में जी रहा है। फिर ख्याल आता कि नहीं, मीना को कुछ भी पता नहीं चलना चाहिए। इन परि-स्थितियों में उसका इस तरह रहना वह बिलकुल बर्दाश्त नहीं कर सकेगी। कहेगी—बस, अब वापस जाने का कोई मतलब नहीं है, पिताजी की

दुकान पर बैठो और आराम से जिन्दगी बसर करो। आदमी जिन्दगी आराम से बसर करने के लिए पैदा होता है क्या ? कुछ करने के लिए पैदा होता है। आत्म विस्तार के लिए पैदा होता है। आत्म विस्तार अनुभवों के बिना कैसे हो सकता है ? और अनुभव, वह भी तो अपनी कीमत मांगता है। जितना बड़ा रिस्क या खतरा या बलिदान, उतना ही बड़ा अनुभव। इस इलाके में जो कुछ मिल रहा है, वह दूसरी जगह कहां धरा पड़ा है ? आदमी के अन्दर के देवत्व और राक्षसत्व से बिलकुल सीधे साक्षात्कार हो रहा है यहां। पता चल रहा है कि देवता अपने अहिमक हथियारों से राक्षसी वृत्तियों से नहीं लड़ सकता। राक्षसों को परास्त करने के लिए उसे राक्षसी हथकंडों को भी सीखना होगा। सीखना ज़रूर होगा, चाहे वह उनका इस्तेमाल करे चाहे न करे। इस्तेमाल तो शायद नहीं ही करना चाहिए। केवल जानकारी भर होना ही काफी है। नहीं तो देवता और राक्षस में फिर अन्तर ही क्या रहेगा ? इंसानियत और हैवानियत में भेद कैसे किया जा सकेगा ?

आज भी दिनेश रिहर्सल के लिए आए लड़कों के चले जाने के बाद, स्कूल के बड़े कमरे में अकेला बैठा इसी तरह के विचारों के साथ लड़ रहा है। बैठा वह उपन्यास के कुछ पृष्ठ लिखने के लिए था, पर घिर इन विचारों से गया। अक्सर उसके साथ ऐसा ही होता है। वह वर्तमान को समझने और समझकर विवेचन करने की कोशिश करता है तो अतीत बरबस उसके सामने आ खड़ा होता है। अतीत उसे बहुत आकर्षक लगता है और बहुत उत्तेजक भी। उसने अपने आपसे सवाल किया, तुम मानसिक रूप से बूढ़े तो नहीं हो गए ? जवाब पाने से पहले उसे पीछे से आवाज सुनाई दी, "तुम यहां अकेले बैठे क्या कर रहे हो ?"

दिनेश ने दादा की आवाज पहचान ली। पीछे मुड़कर देखा तो कंधे पर कैमरा लटकाए एक दूसरा शहरी आदमी भी उसे दादा के साथ खड़ा दिखाई दिया। "ये साहब कलकत्ता से 'जनमानस' पत्रिका की तरफ से आए हैं, यहां की रिपोर्ट हासिल करने के लिए। नाम है महेश वर्मा। और वर्माजी, ये ही वे दिनेश साहब हैं जिनकी रिपोर्ट आपने राजधानी के दैनिक में पढ़ी हैं।"

दोनों एक-दूसरे को हाथ जोड़ते हैं। फिर छूटते ही वर्मा साहब

दिनेश की बेबाक तारीफ करते हैं, "खूब लिखते हैं जनाब आप ! एक-एक लफ्ज़ अन्दर तक मार करने वाला और झकझोर देने वाला होता है !"

"अच्छा, तो मेरी दोनों रिपोर्ट छप गईं ?" दिनेश बच्चों की तरह चंचल हो उठा।

"जरूर छप गईं ! लगता है आपने अभी तक नहीं देखीं। मेरे पास दोनों ईशु मौजूद हैं। इन्हीं को पढ़कर तो मुझे यहां भेजने का फैसला किया गया है। लीजिए देखिए !" वर्मा साहब ने अपना ब्रीफकेस खोला, कुछ चीजें इधर-उधर की और दोनों अखबार कहीं नीचे से खींचकर दिनेश के हाथों में थमा दिए।

अखबारों को छूते ही दिनेश रोमांचित हो उठा। "कुछ काट-छांट तो नहीं की ना ?" बोलने के बाद ही उसे समझ आया कि वर्मा साहब को क्या पता हो सकता है कि कुछ काट-छांट हुई है या कि नहीं। उन्होंने कौन सा असल कापी देखी है। तनिक कांपते-से हाथों से उसने पृष्ठ पलटे। पांचवें पृष्ठ पर उसे अपना दिया हुआ शीर्षक दिखाई दे गया, "दरिन्दे सिर्फ जानवर ही नहीं होते।" इस शीर्षक के नीचे छोटी-सी सम्पादकीय टिप्पणी के साथ रिपोर्ट बहुत अच्छे ढंग से छापी गई थी। दूसरी रिपोर्ट का शीर्षक था, "इन्सानों की इस नस्ल को बचाओ !" इसके साथ भी सम्पादकीय टिप्पणी दी गई थी। दोनों को देखकर दिनेश पुलकित हो उठा। उसका मन हुआ कि सूरज और रूपा की तरह मचलकर दादा की देह के साथ जा लिपटे और उन्हीं की तरह किलकारी मारकर नाचने लगे। लेकिन मिस्टर वर्मा की उपस्थिति ने उस पर प्रतिबन्ध लगा दिया। उसने यह सब वहीं अन्दर ही कर भी डाला और फिर एक गम्भीर बौद्धिक की तरह अच्छी बातचीत करने के लिए वर्माजी को अपनी कोठरी में ले आया।

एक तरफ सिगरेट के बिखरे हुए टोटे और दूसरी तरफ हथेलियों में सिकोड़कर गोल किए गए कागजों का ढेर। ढीली-ढाली चारपाई पर बिछी दरी के ऊपर रखे दो कम्बल और एक सिरहाना। सिरहाने के ऊपर तहाकर रखा हुआ पुराना मफलर। एक कोने में बत्ती वाले स्टोव के साथ अलम्यूनियम की छोटी-सी केतली और निहायत जरूरी तीन-चार पीतल तथा चीनी के बर्तन। खूंटी पर लटकता झोला और झोले के

बिलकुल पास ही दीवार पर चिपका हुआ लेनिन का किसी पत्रिका से निकाला रंगीन चित्र। झोले के पास ही दीवार पर दूसरी कील गाड़कर लटकाए गए दो-एक पुराने कपड़े। छत चूने से दीवार पर बनी बेतहाशा लकीरें और कहीं-कहीं दीमक के सुरंगी रास्ते बनाने के निशान। छत की कड़ियों में फैले हुए जाले और एक मात्र चौखट के दरवाजों की चौड़ी-चौड़ी झिरियों में से झांकता हुआ आसमान।

मिस्टर वर्मा के मुंह से निकल गया, "यह कोई रहने की जगह है, यहां रहते हैं आप ?"

दिनेश मिस्टर वर्मा के मुंह की तरफ ताकता रह गया। फिर उसने एक मीठी-सी मुस्कान के साथ जवाब दिया, "यहां के आदिवासियों की झोपड़ियां देखेंगे तो आपको यह जगह महल दिखाई देगी। बहरहाल बिना दूध की चाय यदि कहें तो मैं आपके लिए एक मिनट में तैयार कर सकता हूं।"

"चाय तो मैं डाक्टर साहब के यहां पी चुका हूं।" वर्मा साहब को अफसोस हुआ कि अब वे अपने शब्द वापस नहीं ले सकते थे।

इसके बाद दिनेश ने मिस्टर वर्मा को इलाके की सारी कहानी कह सुनाई। जो प्रश्न अपनी ओर से वर्मा ने पूछे उनके उत्तर भी सहज ढंग से दे दिए। इस काम में डा० दादा ने भी उसका साथ दिया। वर्मा ने ज़मीन और उसकी जोत करने वाले किसानों के हकों के बारे में बने नए कानूनों की उसे जानकारी दी और बताया कि बन्धक रखकर तो किसी मजदूर से कोई आदमी काम ले ही नहीं सकता। उसने आश्चर्य प्रगट किया कि स्वतंत्र भारत में इस तरह के भी इलाके हैं जिनकी हालत बाबा आदम के जमाने की फूहड़ रियासतों से भी कहीं बदतर है।

इसके बाद मि० वर्मा ने इधर-उधर के कुछ चित्र खींचने तथा शिकारी राबर्ट से मिलने की इच्छा जाहिर की। दिनेश ने कोठरी को ताला लगाया और वह डा० दादा को साथ लेकर, मि० वर्मा की हर सम्भव सहायता करने के लिए निकल पड़ा।

इलाके के कुछ महत्त्वपूर्ण चित्र लेकर और गांव के कुछ निरीह लोगों से मुलाकात करके जब डा० दादा, दिनेश और मि० वर्मा राबर्ट के तम्बुओं मे पहुंचे तो राबर्ट धूप मे बैठा रहीम के साथ शतरंज खेल रहा था। रहीम के घोड़े और हाथी की मार से परेशान होकर उसका बादशाह इधर-उधर भागता फिर रहा था। तीनों को तब तक राबर्ट के अपनी ओर ध्यान देने की प्रतीक्षा करनी पडी जब तक उसने धोखे और कमीनगी से रहीम का घोड़ा नही मार लिया। रहीम ने घोड़े से राबर्ट के बादशाह को शह दी लेकिन जिस खाने में घोड़ा रखा उस पर राबर्ट के दूर बैठे फीले की मार थी। रहीम ने खाने के साथ छुआते ही घोड़ा ऊपर उठा लिया, यह कहकर कि यह तो बहुत गलत जगह है। लेकिन राबर्ट नहीं माना। उसने छू जाने को ही रखा जाना सिद्ध कर रहीम के घोड़े को उठाकर उसे निहत्था कर दिया। चूंकि अब रहीम के पास राबर्ट के वजीर और फीले के मुकाबले सिर्फ हाथी बचा था, इसलिए उसने अपनी हार मानकर खेल वहीं खत्म कर दिया और राबर्ट के होंठों पर जीत की खुशी फैल गई।

अब राबर्ट ने मुंह दिनेश की तरफ उठाया, इस अन्दाज में जैसे पूछ रहा हो— तुम्हें मेरे इस तम्बु मे आने की हिम्मत कैसे हो गई ?

दिनेश ने कलकत्ता से आए रिपोर्टर की बात उसे समझाई। उसने बेरुखी-सी दिखाते हुए अंग्रेज़ी में बोल दिया, "ठीक है, जो पूछना है जल्दी से पूछे, यह हमारा बदन पर मालिश करवाने का वक्त है।"

राबर्ट ने मि० वर्मा के थोड़े-से सवालों का जो व्याकरणहीन अंग्रेजी में जवाब दिया उसका आशय यही था कि इलाके में आदमखोर जानवर एक नही है, कई है। सबमे ज्यादा खतरनाक एक बूढा तेंदुआ है जिसके ऊपर के दो शिकारी दांत टूटे हुए हैं और जो किसी भी स्वस्थ आदमी या जानवर पर हमला करने से डरता है। मैं इन सब जानवरों को मारने की बजाए जिन्दा पकड़ना चाहता हूं। सरकार ने जिन्दा पकड़े आदमखोरों को इंग्लैंड ले जाने की इजाजत मुझे दे दी है। इंग्लैंड के चिड़ियाघरों मे पहले भी इस तरह के बहुत से आदमखोर जानवर सुरक्षित हैं। दो-चार दिन में एक खास किस्म का पिंजरा बनकर शहर से आने वाला है। बल्कि

मैं खुद ही लेने जाने वाला हूं। इस पिंजरे की सहायता से कुछ ही दिनों में सब जानवरों को पकड़कर हम इस इलाके से बाहर कर देंगे।

इस सवाल का कि यहां आप काफी दिनों से रह रहे हैं, इस इलाके के लोगों की कुछ और समस्याओं पर प्रकाश डालिए, रावर्ट ने उड़ती-उड़ती जुबान में यही जवाब दिया कि कोई समस्या नहीं है। इनको जिस तरह की जिन्दगी जीने की आदत है, उसमें समस्या नाम की कोई चीज ही नहीं है। जरूरत पड़ने पर कई आदिवासियों को मैंने सांप और कौए का मांस खाते देखा है। नगा घूमने में भी इनको रत्ती-भर शर्म नहीं आती और किसी भी पेड़ के नीचे ये बड़े आराम से रात काट लेते हैं। समस्या तो रायसाहब की है। उनको अपने धन्धे किसी अच्छी जगह पर जमाने चाहिएं थे। लेबर सस्ती मिलने के लालच में वे यहां खामखाह फंसे बैठे हैं। इन जानवरों में से बहुतों को तो यह भी पता नहीं है कि इनके देश का नाम क्या है। देश के नेताओं के नाम पर ये सिर्फ महात्मा गांधी का नाम जानते हैं या रायसाहब और उसके बड़े भाई जो एम० पी० हैं उनका। देश में कौन-सी सरकार है, और वह सरकार इनके भले और विकास के लिए क्या-क्या योजनाएं बना रही है, इसका इनको रत्ती-भर भी इलम नहीं है। इनकी जानकारी का केन्द्र है इलाके का धार्मिक और तान्त्रिक नेता ओझा। वह जो कुछ इनको बता देता है, बस वही इनके लिए आठवां सत्य होता है। इन लोगों में कोई सुधार पैदा नहीं किया जा सकता। सरकार या आप अखबार वालों को इनके लिए परेशान होने की कोई जरूरत नहीं है। ये लोग जिस हालत में हैं, खुश हैं। इनमें सुधार लाने के नाम पर इनकी जिन्दगी से छेड़छाड़ करना इन लोगों पर घोर अत्याचार करने के बराबर है।

डा० दादा, दिनेश और मि० वर्मा राबर्ट की बकवास को चुपचाप सुनते रहे। पहले तो वर्मा को लगता रहा कि सोचने वालों का यह भी एक पक्ष है, पर जल्द ही उसे पता चल गया कि यह कोई पक्ष नहीं है। उसने कलम चलानी बंद कर दी।

कलम बन्द हुई देख रावर्ट यकायक खड़ा हो गया और सबके सामने कपड़े उतारता हुआ मालिश के लिए अपने सेवक को पुकारने लगा।

सेवक एक खास किस्म के तेल की शीशी और बड़ा-सा तौलिया लेकर पहुंच गया। रहीम ने तम्बू के अन्दर से लाकर धूप में एक मखमली

गलीचा बिछा दिया। राबर्ट बड़े आराम से उस गलीचे पर औंधे मुंह लेट गया। सेवक उसके थुलथुल-पिलपिल शरीर पर तेल चुपड़कर बैटरी के सैलों से चलने वाली किसी मशीन से मालिश करने लगा।

कुछ देर तक तो तीनों, मालिश के आनन्द में आंखें बन्द करके लेटे राबर्ट को देखते रहे। फिर उन्हें राबर्ट के खुर्राटे सुनाई दिने लगे, जैसे पास ही कहीं रुक-रुककर बिना साइलेंसर की कोई मशीन चल रही हो। मि० वर्मा की आंखें दिनेश की आखों से मिलीं तो दोनों को बरबस हंसी आ गई। दादा भी उन दोनों को हंसते देख मुस्कुराने लगे। रहीम का ख्याल था कि उससे भी कोई न कोई सवाल ज़रूर पूछा जाएगा, इसलिए वह बड़ी देर से राबर्ट के जवाब न सुनकर अपने जवाब संजोने में लगा था। लेकिन तीनों ने उसको बहुत निराश किया। वे उसको बिना कुछ पूछे ही वापिस चल दिए।

दवाईखाने पहुंचकर सबने देखा—सूरज और रूपा उनका इंतज़ार कर रहे हैं। अब ये दोनों बच्चे डा० दादा के साथ ही रहते हैं। सुबह दूसरे बच्चों के साथ दवाईखाने के सामने ही दिनेश इनको पढ़ाता है। उसके बाद भोजन करने के उपरान्त नाटिका की रिहर्सल को देखता है। फिर वहीं से वे सगुआ और देवा चन्देरी के साथ खेत में चले जाते हैं। खेत से सांझ होने से पहले दवाईखाने में लौट आते हैं। डा० दादा ने मि० वर्मा को बताया, "ये ही वे जगतिया के दो बच्चे हैं, जिनका मैंने आपसे ज़िक्र किया था।"

मि० वर्मा ने सिरों पर हाथ फिराकर बच्चों को प्यार किया, "सच-मुच बहुत प्यारे बच्चे हैं। मेरे यहां काफी बच्चे न होते तो मैं इन्हें अपने साथ ले जाता। डा० साहब, आप दोनों इनका उत्तरदायित्व संभालकर सही रूप में इंसानियत का परिचय दे रहे हैं।" बच्चों का फोटो लेने के लिए वर्मा ने कैमरा खोल लिया।

"इंसानियत का परिचय क्या, गले पड़ा ढोल बजा रहे हैं।" बोलकर दादा ने रूपा को गोद में उठाकर धीरे से उसके गाल चूम लिए। रूपा ने भी दादा के गले में बांहें डालकर उनका मुंह चूम लिया। सूरज दादा से सटकर खड़ा हो गया और वर्मा ने इसी हालत में डा० दादा और बच्चों की फोटो खींच ली।

इसके बाद मि० वर्मा के रहने और खाने की समस्या सामने आई।

पर मि० वर्मा के यह कहने पर वह समस्या भी हल हो गई, "मेरे खाने और सोने के बारे में बिलकुल भी तकल्लुफ में पड़ने की जरूरत नहीं है। मैं पत्रकार हूं और सफल पत्रकार होने की पहली शर्त यही होती है कि वह विषम से विषम परिस्थितियों में भी धैर्य के साथ वक्त गुजार सके। और फिर कोई भी आदमी अगर एक रात बिना खाए और बिना सोए रह जाए तो मरता थोड़े ही है।"

फैसला किया गया कि सूरज और रूपा आज की रात दिनेश के साथ स्कूल की कोठरी में ही सोएंगे और मि० वर्मा दादा के यहां दवाईखाने में। भोजन सभी लोग डा० दादा के ही यहां इकट्ठे करेंगे।

दिनेश डा० दादा की इस सलाह को भी मान गया कि वह कल तड़के मि० वर्मा के साथ राजधानी निकल जाए। दोनों का साथ भी हो जाएगा और रास्ते में बाकी बची अन्दरूनी बातें भी हो जाएंगी। मि० वर्मा को भी दिनेश का मानना अच्छा लगा। लेकिन वे सिर्फ डाक बंगले तक ही दिनेश का साथ दे सकते थे, क्योंकि वहां से उनको ऐसे ही एक-दूसरे काम के लिए ऊपर की तरफ जाना था, वर्फ से ढकी चोटियों की तरफ।



डाक बंगले वाले बस स्टाप से मि० वर्मा से अलग होकर दिनेश जब राजधानी पहुंचा तो दोपहर हो चुकी थी। कई महीनों बाद उसे तारकोल की दुर्गन्ध के साथ अन्य महानगरीय दुर्गंधों का मिश्रण सूंघने को मिला था। उसे वह काफी भला लगा। दुर्लभ हो गई गन्दी से गन्दी चीज भी एक बार तो भली लगती ही है, कुछ देर बाद चाहे वह पहले से भी कहीं ज्यादा घिनौनी बन जाए।

बहुत थका होने पर भी वह शहर के काफी बड़े और घने बाजार में जा पहुंचा। उसका दिल हुआ कि वह किसी फुर्सत वाले आदमी को रोककर पूछे कि तुम्हें दूर-दराज के जंगली इलाके के बारे में भी कुछ पता है? इस चीज का ज्ञान है कि वहां के लोग किस तरह की जिन्दगी व्यतीत कर रहे हैं? पर ढूढ़ने पर भी उसे कोई फुर्सत वाला आदमी नहीं मिला। पूरा का पूरा शहर उसे दीमक की एक बहुत बड़ी बांबी जैसा लगा,

जिसके अन्दर हर आदमी बस भागमभाग में लगा है। किसी के पास भी एक पल के लिए रुकने की, रुककर बात सुनने की फुर्सत ही नहीं है। सबके सब जैसे अपना-अपना शिकार फंसाने के लिए मकड़ी की तरह जाले बुनने में मशगूल है। शिकार नहीं फंसता तो पहले बुने जाल को उदरस्थ करके फिर से नया जाल बुनते है। उनकी सारी ज़िन्दगी इसी तरह जाल को बुनने, उदरस्थ करने और फिर से बुनने में गुज़र जाती है। शिकार की प्रतीक्षा करने के क्षणों को वे शांति के क्षण कहते हैं। शांति के क्षण, यानी शरीर के निष्क्रिय और मन के शरीर से भी कहीं ज़्यादा सक्रिय होने के क्षण। जंगली जीवन के बिलकुल उलटा। हां, रानी दीमक की बात दूसरी है। वह शांति के खोल में पड़ी ज़रूर शांति और सुरक्षा का समय गुज़ारती है। मजदूर दीमकों के सहारे। मजदूर दीमकों के सिर पर।

चौराहे पर पहुंचकर उसे होटलों पर भुनते ममालों की खुशबू ने, राह चलती लड़कियों को आवारा लड़कों की फबतियों की तरह छेड़ा। उसके पेट की भूख छेड़ी गई किसी बुढ़िया की चिड़चिड़ाहट की तरह जाग गई। लेकिन पैसे तो गिने-गिने ही थे। जिनमें से कुछ डा० दादा की घर-गृहस्थी का सामान खरीदना था और बाकी से करियाला का नया सामान। सोचा— अभी नहीं, तनखा के रुपये मिलने के बाद डटकर शानदार शहरी खाना खाया जाएगा, तब तक के लिए छुट्टी। फैसला होते ही उसके पैर बाज़ार की चहल-पहल छोड़ ज़िला शिक्षा अधिकारी के दफ्तर की ओर मुड़ गए और दो-तीन तंग बाज़ारों तथा गलियों को पार करके वह मामूली-सी पूछताछ के बाद वहां पहुंच गया।

बड़ा गेट पार करते ही दिखाई दिया, सिनेमा हाल के बुकिंग आफिस की खिड़की जैसी एक खिड़की के सामने औरतों और मर्दों की लम्बी कतार लगी है। पता चला कि सब के सब उस जैसे ही अध्यापक और अध्यापिकाएं हैं और उसी की तरह तनखा लेने आए हैं।

दिनेश बिना किसी झंझट में पड़े सीधा मनोहर अंकल के कमरे में पहुंचा। लेकिन अब वह की कुर्सी पर कोई दूसरा ही आदमी विराजमान था। उस आदमी से पता चला कि मनोहर बाबू का तो तबादला हो गया है। यह सब इस कदर-जल्दी में हुआ कि वे किसी को सूचित भी नहीं कर सके? चौबीस घंटे के अन्दर-अन्दर उन्हें ज्वॉयनिंग रिपोर्ट देनी थी।

इससे ज्यादा कुछ भी बताने में आदमी ने रुचि नहीं दिखाई। दिनेश समझ गया कि कातिल न पकड़े जाने का गुस्सा साधू पर उतारा गया है।

वह बाहर आकर तनखा लेने वालों की कतार में लग गया। पूरे दो घंटे धीरे सरकने के बाद जब उसका नम्बर आया तो पता चला कि पे बिलों में उसका तो कहीं नाम ही नहीं है।

वह झल्लाकर हैड कैशियर के कमरे में जा पहुंचा। हैड कैशियर से पता चला कि सिर्फ दस दिन के पैसे मनीआर्डर से दमकड़ी गांव के पते पर भेज दिए गए हैं, लेकिन आगे उसकी नौकरी खत्म कर दी गई है। इस बारे में एक पत्र भी उसको दो मास पूर्व भेजा जा चुका है। पत्र का डिस्पैच नंबर उसने डिस्पैच क्लर्क के पास जाकर लेने का रास्ता सुझाया।

उसे डा० दादा के कहे शब्द याद हो आए—बस फिर समझो कि तुम्हारा तबादला हो जाएगा। लेकिन यहां तो नौकरी ही खत्म हो गई थी। वह इसके लिए तैयार तो था लेकिन यह सब इतना जल्द हो सकता है, इसकी तो उसने कल्पना तक नहीं की थी।

उसे सुझाव दिया गया कि वह शिक्षा अधिकारी से मिल ले। पर उसे यह सब भीख देने वाले के सामने गिड़गिड़ाने जैसा लगा। वह दुविधाग्रस्त स्थिति में शिक्षा अधिकारी के पर्दा लटकते दरवाजे तक गया जरूर पर उलटे पांव वापस आ गया।

किसी ने तरस खाकर सुझाव दिया कि हैडक्लर्क की मुट्ठी गर्म करो, नौकरी की बहाली तो क्या वह सदा-सदा के लिए सुरक्षित तक हो जाएगी। दिनेश सुझाव देने वाले का मुंह ताकता रह गया। उसे उस आदमी में दमकड़ी गांव के आदिवासियों की आत्मा बोलती नजर आई। सोचा, इस बेचारे को क्या पता है कि इस भ्रष्टाचार की जड़ें कहां तक फैली हुई हैं। उसने एक बार प्यार से उस आदमी के कन्धे को थपथपाया और दफ्तर के दायरे से बाहर आ गया।

घूमते-घूमते वह पहले वाले घने बाजार में जा निकला। होटल के पास से गुजरते हुए उसकी भूख फिर जाग उठी। अब उसने अपने आपको भूख के सामने निहत्था और कमजोर पाया। विचार आया कि डा० दादा का सामान तो सुमेरु से भी खरीदा जा सकता है, बस थोड़े से पैसे ही ज्यादा लगेंगे और तो कुछ नहीं! लेकिन भूख को आदमी कहां तक टाल सकता है?

भूख के पक्ष में तर्क मन में आते ही उसकी आंखें किसी सस्ते-से ढाबे की तलाश में लग गईं। लेकिन वैष्णो ढाबा वहां कहां था! बड़े बाजार में वैष्णो ढाबों का क्या काम! वहां के लिए तो जरूरी थे एक से एक बढ़कर सजे-धजे होटल, जिनके दरवाजे खोलने के लिए भी एक खास किस्म की हिम्मत चाहिए। नोटों से जेब भरी होने के बाद सहसा पैदा हो जाने वाली हिम्मत।

बाजार खत्म होने को आया तो उसकी नजर सचमुच में एक वैष्णो ढाबे के पुराने से साइनबोर्ड पर जा पड़ी। वह गद्‌गद होकर मुड़ा ही था कि एक कार से टकराते-टकराते बचा। भूख से बेहाल तो वह था ही और ऊपर से नौकरी के साथ खिलवाड़ किए जाने का गुस्सा। वह ड्राइवर पर बरसने ही जा रहा था कि कार के अन्दर पिछली सीट पर बैठी महिला को देखकर ठिठक गया। इस बालकटी महिला की शक्ल मीना से कितनी मिलती है। लेकिन मीना इस कदर मॉड और इस तरह कार में यहां? ...

महिला भी उसे पहचानते ही गुलाब की तरह खिल गई, "दिनेश तुम!" वह कार का दरवाजा खोलकर बाहर आ गई और उसने अपने बदन से जो गन्ध फैलाई वह दिनेश के अंग-अंग को रोमांचित कर गई।

दिनेश का शरीर सुन्न! बुद्धि गुम। जैसे वह अचानक फिसलकर तेज धूप में पिघली सड़क की तारकोल पर जा गिरा हो।

"आओ, मेरे साथ आओ!" बोलकर मीना ने दिनेश को कार के अन्दर धकेल दिया और कार "चलो अब होटल चलो, शापिंग कल हो जाएगी," का इशारा पाकर धीरे-धीरे मोड़ काटकर होटल की तरफ मुड़ गई।

● ●

भरे बाजार में कुछ देर चलने के बाद कार ने एक तंग-सा मोड़ काटकर सूनी तंग सड़क पकड़ी तो मीना का गुदगुदा हाथ दिनेश की बन्द मुट्ठी पर चला गया, "मुझे पता था कि तुम आसपास ही किसी दमकड़ी गांव के प्राईमरी स्कूल में हो! इन्होंने भी वहां चलने की कई बार सोची लेकिन क्योंकि कार का रास्ता नहीं था, इसलिए बार-बार टलता रहा।"

अब दिनेश को समझने में देर नहीं लगी कि मीना अब विवाहिता है और उसके 'इन्होंने' कार वाले कोई अमीर आदमी है। बस उसके होंठों से केवल इतना ही फूट सका, "तुमने शादी कर ली ?"

"हां, लेकिन तुम ऐसे क्यों पूछ रहे हो ?"

"कब की शादी ?"

"बस यही दो महीने पहले। तब से बस पहाड़ी इलाकों में हनीमून ही मनाते घूम रहे है। कई बड़ी-बड़ी मिलें है न इनकी। लगभग पचास प्रतिशत माल विदेशों में जाता है। फैक्टरी का काम छोटे भाइयों को संभाला तो बस छुट्टी।" मीना केवल मुंह से नहीं बल्कि अपने सारे शरीर से, शरीर के रोम-रोम से बता रही थी।

"तो पढ़ाई क्या बीच में ही···"

"हां, एम० ए० फाइनल का एग्जाम बीच में ही छोड़ना पड़ा। इनको बहुत जल्दी पड़ी थी। और फिर पढ़ना-लिखना तो सारी जिन्दगी चलता ही रहेगा ! पढ़ाई क्या इम्तिहानों के कोसों में रक्खी है ? तुम ही तो कहा करते थे कि असली पढाई तो डिग्रियां लेने के बाद शुरू होती है। बस अब असली पढ़ाई ही शुरू करेंगे।" बोलकर मीना ठहाका मारकर हंस पड़ी। उसके ठहाके से ड्राइवर भी चौंका। लेकिन दिनेश को उसी तरह गंभीर देख मीना संभली, "क्यों, तुम्हें मुझसे मिलकर खुशी नहीं हुई ?"

"नहीं मीना, तुम्हें इस तरह सुखी देख मुझे खुशी क्यों नहीं होगी।"

"ना ऽ ऽ ई !"

"मैंने कभी तुमसे झूठ बोला है क्या ?"

"आज तक तो नहीं बोला लेकिन अब बोल रहे हो।"

दिनेश ने मीना की आंखों में देखा। उसकी पुतलियों में उसके 'आदमी' को पीड़ित देखने की इच्छा तैरती नजर आई। वह आहत हो उठा। उसकी आंखें बेकाबू होकर नम हो गई।

दिनेश की आंखों में नमी देख मीना पुलकित हो उठी। इस बार फिर वह दिनेश के अंग-अंग को छू गई, "तुम मुझे पहले की ही तरह लव करते हो, मुझे प्रूफ मिल गया।"

कार होटल के लॉन में पहुंचकर कब रुक गई, मीना को इसका पता ही नहीं चला। दिनेश के सचेत हुए अंगों ने उसे सचेत किया। अपनी

आंखें साड़ी के पल्लू से बहुत अच्छी तरह से साफ करके वह बाहर आई और दिनेश को साथ लेकर लिफ्ट से, तीसरी मंजिल पर बने होटल के सबसे महंगे किस्म के कमरों में से एक में पहुंच गई।

"तुम एक मिनट बैठो, मैं अभी आई।" सोफे की तरफ इशारा करके मीना दायीं कलाई की ढेर सारी चूड़ियां बायें हाथ में संभालती हुई बाथरूम में चली गई।

दिनेश कमरे का निरीक्षण करने लगा। सम्पूर्ण घरेलू सुख-सुविधाओं से लैस होटल का कोई एक कमरा भी हो सकता है, यह उसके लिए बिलकुल नई जानकारी थी। रेडियो, रिकार्ड प्लेयर, टेलिफोन, टी० वी० सभी पर से उसकी नजर फिसलती हुई अन्ततः दीवार पर टंगे एक बड़े-से चित्र पर जा टिकी। दूधिया रंग की नंगी सुडौल युवती, कासनी रंग के झीने वस्त्र पहने, आसमान में उड़ती चली जा रही थी। उसे उस युवती के चेहरे और शरीर में मीना का अक्स दिखाई दिया। नहीं, मीना तो ऐसी बिलकुल भी नहीं थी। अब उसे क्या हो गया है? क्या यूनिवर्सिटी के छात्रावासों में रहकर छात्र ऐसे हो जाते हैं?—निश्चित, अय्याश और बेशर्म? क्या हमारी शिक्षा पद्धति बस यही कुछ देती है? आदमी को जहन और मानस से काटकर लहू और मांस तक पहुंचाना ही उसका ध्येय हो गया है?

वह अपने सवालों के साथ जूझ ही रहा था कि बाथरूम का दरवाजा खुला और सद्यस्नात देह को झीने से रेशमी गाउन में लपेटे मीना एक और रूप में उसके सामने प्रगट हो गई।

"बोर तो नहीं हुए? मैं बिना नहाए ही शापिंग के लिए निकल गई थी। तुम्हें भी जरूर मेरे बदन से उबकाने वाली महक-सी आई होगी। मुझे खुद आ रही थी। इनके बदन से आती रहती है ना! जब तक वे बाथ न ले लें तब तक मैं उन्हें अपने पास नहीं फटकने देती।" अचानक उसने झुककर टेलीफोन का चोंगा उठा लिया, "अम्...क्या लोगे...काफी या चाय?"

दिनेश को मीना का पृष्ठ भाग किसी चर्बीली सेठानी जैसा लगा। उसे उसके बदन से आंच पर पिघलती चर्बी की गन्ध आने लगी। उसका दिल हुआ कि कह दे मुझे सिर्फ रोटियां चाहिएं, पर वह मात्र मुस्कुरा-कर रह गया।

इसी बीच शायद दूसरी ओर से आवाज आ चुकी थी, "जरा रुकिये ...बोलो ना !" नाक को नखरे से सिकोड़कर मीना ने दायें हाथ से कुण्डलदार बालों को पीछे झटका तो खुशबूदार पानी की कुछ बूंदें दिनेश के चेहरे पर बर्फ पिघला गईं। "अच्छा ये कीजिए, हाफ सैट काफी और साथ कुछ खाने के लिए फौरन भिजवाइए...कुछ भी...जल्द से जल्द क्या आ सकता है...ठीक है बटर टोस्ट और कुछ भुने हुए काजू वगैरह ही भिजवाइए।" आर्डर देकर मीना ने चोगा रख दिया और वह एक हल्की-सी अंगड़ाई लेकर दिनेश के साथ ही सोफे पर आ गई।

उसने दिनेश का हाथ फिर अपनी हथेलियों में भर लिया, "तुम कुछ कमजोर लग रहे हो ?"

"नहीं तो, बहुत दिनों के बाद मिले हैं न, इसीलिए लग रहा हूंगा।"

"तुम बुझे-बुझे-से क्यों हो ? क्या मुझ से नाराज हो ?"

"अपनी शादी की खबर तो मुझे दी होती।"

"उससे क्या होना ? मैरिज और लव के बारे में तुम्हारी थिंकिंग से वाकिफ नहीं हूं क्या ! खबर देकर खामखाह तुम्हें बोर करती।"

दिनेश ने अपना हाथ मीना की हथेलियों में से बाहर निकाल लिया, "बस, इसी बलबूते पर मुझे समझ लेने का दम भरा करती थीं ?"

"मैं पुरुष के स्वभाव को समझ लेने का दम अब भी भरती हूं। यह दम अदनी से अदनी औरत भर सकती है। तुम क्या पुरुष नहीं हो ?"

"क्या है पुरुष का स्वभाव ?"

"पोजेशन ! कम्पलीट पोजेशन ! पुरुष जिस किसी भी चीज को चाहता है उस पर पूरा अधिकार और पूरा नियंत्रण चाहता है। क्यों, गलत कह रही हूं क्या ?"

"जब औरत को बेचारे पुरुष को दगा देना होता है तो वह उस पर इसी तरह का ब्लेम लगाया करती है।"

"दगा, ब्लेम ! कैसे लफ्ज इस्तेमाल कर रहे हो तुम।" मीना के माथे पर बल पड़ गए। तुम्हारे साथ कोई दगा नहीं किया। मैंने तुमसे प्यार किया था, अब भी करती हूं। शादी-ब्याह का प्यार से क्या सम्बन्ध ?"

"विवाह प्रेम की चरम सीमा है मीना, प्रेम अपनी चरम सीमा को पाने के लिए ही तो संघर्षरत रहता है !"

"मैं यह नहीं मानती। प्रेम एक अर्ज है। मन और आत्मा की मजबूरी है। लेकिन शादी एक एग्रीमेण्ट है, समझौता है। शादी का सम्बन्ध सिर्फ शरीर से होता है, मांस-रक्त और हड्डियों से। लेकिन प्रेम का सम्बन्ध मन और आत्मा से होता है। मैंने तुम्हें मन और आत्मा से चाहा था। अब भी चाहती हूं। इसमें दगा शब्द के लिए कहां स्थान है?"

"मन और आत्मा को शरीर से काटकर देखने की तुम्हारी यह फिलासफी मेरी समझ से बाहर है।"

"तुम्हारी समझ मुझे इतनी छोटी कभी नहीं लगी कि इतनी छोटी-छोटी बातें भी उसमें न समा सकें। सुनो, पिताजी की दुकान में एक आदमी टुकड़े-टुकड़े करके बोरी में बन्द किया पाया गया। तुम तो जानते ही हो कि लछमन सिंह पिताजी से कितनी खार खाता है। यह सब उसी की शरारत थी। पिताजी और माता जी दोनों खून करने के इल्जाम में बुरी तरह से फंस गए। उनकी जमानत भी बहुत मुश्किल से हुई। मुझे अपनी पढ़ाई छोड़, उनको बचाने के लिए भाग-दौड़ करनी पड़ी। इसी भागदौड़ में इनकी मदद मुझे मिली, लेकिन इस एग्रीमेण्ट के साथ कि अगर वे दोनों बच गए तो मैं इनसे शादी करूंगी। इनका एक छोटा भाई पुलिस का बहुत बड़ा अफसर है और दूसरा अपने इलाके का बहुत बड़ा नेता। जाहिर है कि माता-पिता बच गए और मैं अब इनकी पहली पत्नी के दो बच्चों की देखभाल कर रही हूं।"

"क्या कह रही हो तुम!"

"ठीक कह रही हूं।"

"उफ, यह सब हो गया और मुझे खबर तक नहीं।"

"इस दौरान तुम्हें याद खूब किया और बार-बार यह एहसास पीड़ित करता रहा कि काश मेरे कोई भाई होता। लेकिन न भाई था और न तुम्हारी कोई खबर-सार। तुम्हारा अता-पता तो मुझे तब चला जब मनोहर अंकल ट्रांसफर होकर एक दिन के लिए दसूहा पहुंचे और पिताजी के पास अफसोस करने के लिए आए।"

"मैंने एक चिट्ठी तो पिताजी के नाम लिखी थी, उसका जवाब नहीं मिला तो दुबारा लिखने का साहस नहीं हुआ।"

"हो सकता है पिताजी को मिली हो; लेकिन मुझे तुम्हारी कोई चिट्ठी

नही मिली ।"

"हो सकता है पिताजी ने तुम्हें दिखाई ही न हो, यह तो तुम जानती ही हो कि उस घटना के बाद उनके विचार मेरे और तुम्हारे सम्बन्धों के बारे में ..."

"हो भी सकता है और नहीं भी, लेकिन तुम्हारे अचानक दसूहा छोड़कर चले जाने के बाद न तो उस घटना का कभी मां ने जिक्र किया और न पिताजी ने । और फिर उन्होंने तुम्हें मुझ से लिपटे हुए ही तो देखा था, किसी ख़तरनाक हालत में तो नही । यह तो बहुत मामूली-सी बात थी। दरअसल पिताजी मुझे उन दिनों बहुत इनोसेंट समझते थे । उनको लगा होगा कि तुम मुझे एक्सप्लॉयट कर रहे हो । बस यही सोचकर उन्हें गुस्सा आ गया होगा। मैंने भी उनको पहली बार इतना सख्त बोलते सुना था ।"

"लेकिन मेरे लिए यह मामूली बात नही थी। मुझे लगा जैसे मैं बलात्कार करते पकड़ लिया गया हूं। अब उसके बाद उनको मुंह कैसे दिखाता ।"

"बलात्कार ! ये कैसे-कैसे लफ्ज़ इस्तेमाल कर रहे हो तुम ? शायद यह उस जंगली इलाके का असर है । खैर छोड़ो इन बातों को। अब गड़े मुर्दे उखाड़ने से क्या लाभ। तुम सुनाओ, तुम्हारी कैसे गुज़र रही है । सुना है तुम्हारा यह जंगली इलाका नेचुरल ब्यूटी के लिहाज़ से बहुत उम्दा है ।"

"शुरू-शुरू में मुझे भी ऐसा ही लगा था, लेकिन अब लगता है कि अगर धरती पर कहीं जहन्नुम है तो बस वहीं है ।"

"क्यों, ऐसा क्या है वहां ?" उत्तेजना से बाहर आते ही मीना को ख्याल आया कि कॉफी तो अभी तक आई ही नहीं। वह मैनेजर को थोड़ी डांट पिलाने के लिए उठ खड़ी हुई और फोन का चोगा कान के साथ लगाकर बड़े ही नखराना अन्दाज में टांग पर टांग चढ़ाकर खड़ी हो गई ।

"जंगल का आदिम शासन ! जहां नर-पिशाच भोली-भाली जनता का खुले आम खून पीते रहते हैं, पर कोई भी ताकत उन्हें रोकने तक का साहस नहीं करती ।" दिनेश उत्तेजना में खड़ा हो गया ।

"यह तो पूरे देश में हो रहा है। तुम्हें ऐसे इलाके में नौकरी ही नहीं करनी चाहिए थी ।" दूसरी तरफ फोन रिसीव कर लिया गया था शायद ।

वह सचमुच में मैनेजर को डांट पिलाने लगी । लग रहा था मैनेजर जैसे घिघिया रहा है । गुस्से में फोन बन्द करके वह फिर सोफे पर आ बैठी ।

"नौकरी भी अब कहां रही है, अस्थायी नौकरी थी और आज पता चला कि उसे खत्म कर दिया गया है ।" दिनेश भी बगल की कुर्सी पर बैठ गया ।

"चलो, अच्छा हुआ । मैं इनसे कहती हूं, तुम्हारी प्रतिभा का ये अपनी किसी फैक्टरी में लाभ उठा लेंगे । लेकिन तुम्हारा लेखन ?"

"वह भी जब से यहां आया हूं लगभग ठप्प-सा पड़ा है । एक उपन्यास जरूर शुरू किया है, इसी इलाके को लेकर । लेकिन लिखने के लिए फुर्सत ही कहां है !"

"यह तुम बहुत गलत कर रहे हो । तुम्हें लिखना बन्द नहीं करना चाहिए ।"

"पता नहीं क्यों, अब कुछ ऐसा लगने लगा है कि शब्द की शक्ति यहां बेकार हो गई है । चारों तरफ इस कदर जड़ता और बेहोशी की हालत दिखाई दे रही है कि शब्द उसके सामने बौना और असमर्थ होकर रह गया है ।"

"तो ?"

"ऐसी हालत में जो कलाकार सामाजिक परिवर्तन के सिलसिले में कला को कोई भूमिका देना चाहते हैं, उनको चाहिए कि वे अपने व्यवहार में भी कला को जीवन प्रदान करें, यानी कि कला में अभिव्यक्ति पाने वाले सोच को अमल में जीकर प्रमाणित करें ।"

"मैं तुम्हारा मतलब समझी नहीं ।"

"मेरा मतलब यह है कि कला इंसान की जिंदगी में परिवर्तन लाती है, उसकी सोई चेतना को जगाती है, इन सब फतवों को प्रमाणित करने के लिए कलाकार को अपनी स्वयं की जिन्दगी से प्रमाण प्रस्तुत करने चाहिएं, तभी साधारण आदमी के मन में कला के प्रति आस्था जागेगी । कलाकार का स्वयं नेपथ्य में रहकर केवल कला या शब्द की शक्ति के माध्यम से किसी भी प्रकार के परिवर्तन की कामना करना उचित नहीं है । कम से कम इन हालात में तो बिलकुल भी नहीं ।"

इसी समय दरवाजा खुला और बैरा ट्रे लेकर अन्दर पहुंच गया । मीना ने दो स्लाइसों के बीच सॉस, मक्खन और आमलेट का पीस रख-

कर बड़े प्यार से सैण्डविच बनाया और दिनेश की तरफ बढ़ा दिया, "अब सिर्फ पेट की बात, साहित्य और कला बाद में।"

"नहीं मुझे भूख नहीं है।" दिनेश ने सैण्डविच लेकर वापस प्लेट में रख दिया। उसने सचमुच में ही महसूस किया जैसे उसकी भूख मर गई है। उसने कॉफी का प्याला जरूर लिया लेकिन कॉफी भी उसे उबकाई देने वाली दवाई की तरह लगी।

इसी समय द्वार फिर खुला और अधेड़ उम्र का एक सांवला-सा मोटा, गंजा आदमी मीना की बगल में आकर खड़ा हो गया और दिनेश को गौर से देखने लगा।

मीना ने दिनेश से उस आदमी का परिचय कराया, "दिनेश, ये मेरे पति हैं, मिस्टर एम० एस० पालकीवाला; एण्ड स्वीट हार्ट, ही इज़ दिनेश, माई चाइल्डहुड फ्रेण्ड।"

"ओ, दिनेश! आई आलरेडी नो यू टू सम एक्स्टेण्ट। मीना आफन टॉक्स अबाउट यू।" पालकीवाला ने सचमुच में खुश होकर अपना हाथ दिनेश की तरफ बढ़ा दिया। दिनेश ने खड़े होकर पहले तो नमस्ते की, फिर जैसे गलती-सी महसूस करते हुए पालकीवाला का हाथ अपनी हथेलियों में भर लिया।

दिनेश को वह हाथ बहुत ठण्डा लगा और लगा जैसे हाथ को छूते ही ठण्डक उसकी हड्डियों में समा गई है!

● ●

मीना और पालकीवाला को सिर्फ एक सप्ताह राजधानी में रुककर आगे पहाड़ पर जाना था। अब सिर्फ एक दिन राजधानी के हिस्से में रह गया था, दूसरे दिन सुबह ही उनको चल देना था। सब जगह ट्रंककाल और तारें खड़क चुकी थीं, इसलिए प्रोग्राम टाला नहीं जा सकता था। दूसरे, दोनों बच्चों को भी हवाईजहाज से अपनी आया के साथ कल शाम को पहाड़ पहुंचना था। उनके पहुंचने से पहले मां-बाप का वहां होना जरूरी था।

पहले तो मीना की तरफ से प्रस्ताव यही आया कि दिनेश भी उनके

साथ पहाड़ जाए। दो-चार दिन उनके साथ रहे और अगर फिर भी उसका मन मिल का कोई काम सम्भालने को न बने, जैसा कि उसने रात ज़ाहिर किया था, तो वह अपने मिशन पर वापस लौट आए। पर इसके लिए भी दिनेश ने मजबूरी ज़ाहिर कर दी। बताया कि नाटक की चल रही रिहर्सल के कारण ये दो दिन भी वह मुश्किल से निकाल पाया है।

प्रोग्राम यही तय हुआ कि आज का पूरा दिन दिनेश अपने आवश्यक कामों पर लगाएगा। मीना कल की अधूरी पड़ी अपनी शॉपिंग पूरी करेगी, क्योंकि पालकीवाला अपने दफ्तर के कामों से पूरी तरह से निबट लिए हैं, इसलिए वे भी आज मीना का साथ देंगे। दोपहर बाद किसी अच्छी-सी फिल्म का शो देखा जाएगा और रात को होटल में हर शनिवार को होने वाला कैबरेडांस। दूसरे दिन जल्द से जल्द ब्रेकफास्ट लेकर सब लोग इकट्ठे ही चल देंगे, क्योंकि जिस स्थान तक दिनेश ने बस से सफर करना है। वह रास्ते में ही पड़ेगा।

नाश्ता लेने के तुरन्त बाद दिनेश होटल से निकलकर सीधा इण्डिया टाइम्स के सम्पादक से जाकर मिला। पिछली रिपोर्टें छापने का धन्यवाद किया और नई रिपोर्टें उनको सौंपी। इसके अलावा इलाके की पिछली तीन मास की, मि० वर्मा के आने तक की सारी कहानी उनको सुनाई और अपनी नौकरी समाप्त किए जाने के बारे में भी बताया।

इसके बाद सम्पादक महोदय द्वारा किए गए फोन की सहायता से वह सेंट्रल जेल में जाकर जगतिया से मिला। जगतिया ने तो मिलने से ही इंकार कर दिया था, पर जेलर साहब की कोशिश से बहुत कम समय के लिए यह मुलाकात संभव हो सकी। वह भी शाम को पौने पांच बजे, मिलने का समय खत्म होने के सिर्फ पन्द्रह मिनट पहले। आंखों में आक्रोश की लाली, बढ़ी हुई दाढ़ी, हाथों में छाले फूट-फूटकर बने हुए निशान, आवाज में विस्फोट और स्वभाव में ज़िद्दीपन, लेकिन मन से इतना द्रवणशील कि जमना के साथ घटी दुर्घटना को सुनकर वह फफक कर रो उठा और अपनी हथौड़े जैसी हथेलियां लोहे के सीखचों पर पटकने लगा।

सूरज ढलने के बाद वह वकील साहब के यहां पहुंचा। वहां जगतिया के केस की आगे अपील करने की योजना बनी और वकील साहब को यथासंभव कम से कम फीस पर इलाके के गरीब लोगों की सहायता करने

के लिए तैयार किया। इसके लिए इण्डियन टाइम्स में छपी रिपोर्टें भी काम में आईं, उसकी दो-दो प्रतियां उसे अखबार के दफ्तर से मिल गई थीं।

इसके बाद वह अंकल के ताला लगे मकान की तरफ से होता हुआ सीधा बाजार पहुंचा और बाजार से कुछ आवश्यक सामान खरीदकर सीधा होटल।

मैनेजर ने जब दोपहर के पिक्चर-शो का एक टिकट उसके हाथ में थमाया तो उसे याद आया कि उसने तो पिक्चर भी देखनी थी। मीना और पालकीवाला मैनेजर को दिनेश को पिक्चर हाल में भेजने की जिम्मेदारी सौंपकर पिक्चर देख आए थे और अब बहुत देर तक दिनेश की प्रतीक्षा करके कैबरे में चले गए थे।

दिनेश अपने कमरे में जाकर विश्राम करने लगा। सोचने लगा—आखिर मीना को अब उससे क्या लेना-देना है? क्या वह अपने अपराध का प्रायश्चित करना चाहती है? लेकिन प्रायश्चित कैसा? अगर उसकी स्थिति में वह खुद होता तो वह भी वही न करता जो उसने किया? यही सब सोचते-सोचते उसको नींद आ गई। ऐसी गहरी नींद कि डिनर के लिए बैरे के जगाने पर भी नहीं जागा। मीना ने भी उसे डिस्टर्ब करना उचित नहीं समझा। कल तक उसको कतई विश्वास नहीं था कि वह जंगली लोगों में रहते-रहते इतना जंगली हो गया है कि अब उसके दिल में इंसानियत और प्यार के लिए कोई जगह ही नहीं बची है।

सुबह हुई तो सब लोग जल्द से जल्द नाश्ता लेकर वहां से निकल पड़े। रास्ते में मीना ने दिनेश से कोई खास बात नहीं की। वह पालकीवाला से ही घरेलू समस्याएं डिस्कस करती रही। चिटमौला आया तो दिनेश को वहां छोड़ दिया गया। मीना और पालकीवाला डाक बंगले में एक-एक कप कॉफी लेकर आगे बढ़ गए।

● ●

दोपहर बाद तक दिनेश जब दमकड़ी पहुंचा तो गांव के लोग दवाईखाने के सामने इकट्ठे होकर डा० दादा से विचार-विमर्श कर रहे थे।

पता चला कि रावर्ट और रहीम पिंजरा बनवाने बाहर गए हुए हैं। पीछे से रात के अंधेरे में किसी ने उनके तम्बुओं को आग लगा दी, जिससे सब कुछ जलकर राख हो गया। उसके बाकी के साथी अब रायसाहब के मेहमान है और रावर्ट के लौटने की प्रतीक्षा कर रहे हैं। इधर दमकड़ी गांव के आदिवासियों और हरिजनों तक बार-बार ये खबरें पहुंच रही हैं कि रायसाहब के आदमी बदले में आज रात को इस पूरे गांव को जलाकर राख करने आएंगे।

समस्या बहुत गंभीर थी, क्योंकि रायसाहब और उसके आदमियों से कुछ भी उम्मीद की जा सकती थी। इस हालत में तो और भी ज्यादा जब रायसाहब को आदिवासियों के आक्रामक होने का प्रमाण मिल गया था। रावर्ट भी लौटकर कुछ भी कर सकता था, क्योंकि वह गांव वालों की केवल नपुंसकता से ही वाकिफ था, इस नये रूप से नहीं।

खाकी निकर वाले का विचार था कि गांव वालों को मिलकर इस चुनौती का सामना करना चाहिए। अपने-अपने हथियार तैयार कर लेने चाहिएं। अगर रावर्ट और रायसाहब के आदमी आग लगाने आते हैं तो ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिए।

पर बाकर इसके पक्ष में नहीं था। उसका विचार था कि रायसाहब के पास बहुत बड़ी ताकत है। रावर्ट भी सरकार द्वारा भेजा हुआ शिकारी है। वे गरीब और निहत्थे लोग इन बड़े लोगों का मुकाबला नहीं कर सकते। और फिर पुलिस, थाना, कचहरी भी सब इन्हीं के हक में है। वहां भी गरीबों की कोई सुनवाई नहीं है। इसलिए उचित यही है कि गांव के कुछ लोग रायसाहब के पास जाएं। उनसे हाथ जोड़कर माफी मांगें और प्रार्थना करें कि हम आग लगाने वालों को ढूंढकर आपके हवाले कर देंगे पर वे गांव को आग न लगवाएं। बहुत से अन्य लोग भी बाकर के विचारों के हामी थे।

लेकिन गांव की नाटक मंडली के सारे लड़के बाकर के प्रस्ताव से बिलकुल भी मुत्तफिक नहीं थे। उनका कहना था कि जो आदमी गांव की बहू-बेटियों की इज्जत लूटता रहा है, जिसने लोगों की गरीबी का नाजायज़ फायदा उठाकर पूरे गांव को एक वेश्यालय में तब्दील करने की नापाक कोशिश की, जिसने बेचारी जमना को मात्र इसलिए मार डाला कि उसने उसके जलील कारनामों का विरोध किया, उसके साथ जो कुछ भी हुआ

है बिलकुल सही हुआ है। अब अगर रायसाहब के आदमी या राबर्ट और उसके साथी हम पर हमला करते हैं तो हमें उस हमले का मुंहतोड़ जवाब देना चाहिए। निकर वाले के साथ चन्देरी भी इन लड़कों से सहमत थी।

डा० दादा के साथ कुछ अन्य प्रौढ़ लोगों का यह विचार था कि आग लगाने वालों को पकड़कर रायसाहब के हवाले करना तो गलत काम होगा, क्योंकि रायसाहब उनको जिन्दा नहीं छोड़ेगा। लेकिन फिजूल में झगड़ा ज्यादा नहीं बढ़ाना चाहिए। हम सबको सरपंच रामदास को तैयार करके अपने प्रतिनिधि के रूप में रायसाहब के पास भेजना चाहिए। वे राबर्ट की ज्यादतियां भी रायसाहब को बताएंगे। हो सकता है रायसाहब मान जाएं और राबर्ट को समझा-बुझाकर सरकारी रैस्टहाउस में जाने के लिए राज़ी कर लें।

आखिर में दिनेश ने अपना सुझाव रखा कि डा० दादा का सुझाव भी ठीक है लेकिन हमें अपनी तरफ से भी तैयार रहना चाहिए। अगर रायसाहब या राबर्ट ज्यादती करने पर उतारू होते हैं तो अपनी रक्षा के लिए हमें उनका मुकाबला करना चाहिए। आग में जलकर मरने से तो शूरवीरों की तरह शत्रु से लड़कर मरना कहीं ज्यादा अच्छा है। हमारे शास्त्रों में तो यहां तक लिखा है कि लड़कर मरने वाला आदमी सीधा स्वर्ग में जाता है। देवता भी उस पर प्रसन्न हो जाते हैं। इस बार रायसाहब को आदिवासियों की नई चेतना का भी परिचय मिल ही जाना चाहिए।

दिनेश की बातों का असर हुआ और जो लोग रायसाहब की ताकत के सामने घुटने टेक देने के हामी थे, वे भी उससे सहमत हो गए।

बैठक खत्म होने के तुरन्त बाद घर-घर में जंग लगी बन्दूकें साफ होने लगीं। जिन घरों में बन्दूकें नहीं थीं उनमें परम्परागत हथियार, तीर-कमान और भाले कसे जाने लगे। पत्थरों पर दरातियां और कुल्हाड़ियां तेज होने लगीं। गांव की सीमा पर दिनेश, डा० दादा और निकर वाले की देख-रेख में खंदकें खोदी जाने लगीं। औरतों ने अपने-अपने घरों की छतों पर और झोंपड़ियों में पत्थर इकट्ठे कर लिए।

जब यह रहस्य खुला तब दिनेश की हैरानी का ठिकाना नहीं रहा कि जिन्हें सारा गांव सबसे ज्यादा डरपोक और कायर समझता था, आग लगाने वालों में प्रमुख हाथ उन्हीं सगुआ और देवा का था।

इधर राबर्ट और रहीम की शहर से लौटने की प्रतीक्षा की जाने लगी और उधर पूरे इलाके में यह खबर आंधी की तरह फैल गई कि जेल के बाहर सड़क कूटते वक्त जगतिया ने किसी जेल अधिकारी का खून कर दिया। अधिकारी की पिस्तौल के साथ अब वह इसी इलाके में पहुंच गया है और रायसाहब, ओझा तथा राबर्ट से बदला लेने के लिए पागल हुआ घूम रहा है।

राबर्ट और रहीम तो वापस नहीं आए पर थोड़े ही दिनों में जगतिया वाली खबर की पुष्टि जरूर हो गई। वह इस तरह कि ओझा के एक अंगरक्षक ललवा की घात लगाकर हत्या कर दी गई और उसकी कीमती राइफल और कारतूसों की पेटी लाश के पास से गायब पाई गई।

ललवा का कत्ल डवरू गांव के रास्ते पर पड़ने वाले बरसाती नाले के किनारे के जंगली हिस्से में किया गया। गोलियां उसके सिर और पीठ में मारी गईं। बाद में कपड़े और जूते उतारकर उसे अलफ नंगा कर दिया गया। अब उसकी लाश झाड़ियों के बीच फंसी पड़ी थी। पास ही खून का फव्वारा बहकर जम गया था और आसपास के लोगों की काफी बड़ी भीड़ जमे हुए खून से थोड़ा हटकर गोल दायरे में खड़ी कानाफूसी कर रही थी।

खबर मिलते ही अपने दूसरे अंगरक्षक चेतू के साथ ओझा वहां पहुंच गया। लेकिन इस बार वह सादे कपड़ों में था, मानो हड़बड़ाहट में फौरन घर से निकला हो। उसके साथ उसका जादुई झाड़न भी नहीं था।

लाश पर नजर पड़ते ही ओझा हाथों से आंखें ढंककर धरती पर बैठ गया। फिर थोड़ी देर बाद एक झटके के साथ शरीर को तानकर खड़ा हो गया और आग बरसाती आंखों से भीड़ की तरफ देखता हुआ चीखा, "यह घिनौना काम किसने किया है, सामने आओ!"

ओझा की चीख सुनकर भीड़ पत्थर बन गई। फिर ओझा की नजर एक तरफ सहमे खड़े बाकर पर जा पड़ी। वह फिर चीखा, "एक पल के अन्दर-अन्दर इसपसट करो कि यह घिनौना काम किसने किया है, नहीं तो···"

जब भीड़ में से कोई फिर भी कुछ नहीं बोला तो ओझा के पांव

चाकर की तरफ उठे और देखते ही देखते उसका पंजा वाकर के सिर के बालों पर जा पड़ा, "कमीने ! शेर को मारने का ड्रामा तो खूब देखते हो और इस शरीफ आदमी को मारने का पता नहीं !"

पल-भर में ही वाकर झटका खाकर धरती पर जा पड़ा और चेतू की राइफल अपनी छाती पर देख गिड़गिड़ाने लगा, "नहीं-नहीं, मैंने इसे नहीं मारा, कसम देउता की, मेरे पास तो बन्दूक भी नहीं है।"

ओझा ने वाकर के मुंह पर थूक दिया और उसके पेट पर एक सख्त ठुड्डा जमाकर उसकी नजर फिर भीड़ पर चली गई। अब उसने एक काफी तगड़े लग रहे मोटे-से आदमी को हाथ का इशारा करके पास बुलाया। आदमी वहीं खड़ा-खड़ा हाथ जोड़कर गिड़गिड़ाने लगा, "नहीं, मैंने इसे कहां मारा है। हम ऐसा काम कर ही कैसे सकते हैं!" पर पल-भर बाद ही उसकी देह भी बालों से झटका खाकर वाकर के पास आ गिरी।

अब कन्धे के साफे से मुंह का पसीना पोंछकर ओझा ने दूसरा रुख अख्तियार किया, "हरामजादो, उठाओ इस शहीद को और फौरन गांव पहुंचाओ !"

हुक्म मुंह से निकलना था कि चेतू ने कन्धे से कपड़ा उतारकर लाश को ढक दिया। दूसरे मजबूत कपड़े को एक मोटे-से मजबूत डण्डे के किनारों पर बांधा गया। लाश को उसमें डालकर वाकर और मोटा आदमी उसे कन्धों पर लादकर गांव की तरफ ले चले। आगे-आगे चेतू और पीछे-पीछे ओझा। यह दृश्य ऐसे लग रहा था जैसे कोई शिकारी अपना शिकार उठवा कर ले जा रहा हो।

इन लोगों के आंखों से ओझल होते ही भीड़ फिर छोटे-छोटे झुण्ड बनाकर कानाफूसी में व्यस्त हो गई। एक ने कहा, "अब ओझा इस लहाम का सिर काटकर देउता पर चढ़ाएगा।" दूसरे ने कहा, "नहीं, पहले पूजा-पाठ करेगा।" तीसरा बोला, "कैसी बातें करते हो! अब देउता आदमी की बलि स्वीकार कहां करता है।" पहले ने कहा, "करता तो है पर आदमी अब मुश्किल से मिलता है।" इसी तरह कुछ दूसरे लोग भी इस फुसफुसाती बहस में शामिल हो गए। और यह बहस तब तक जारी रही, जब तक वाकर और वह मोटा आदमी लाश को छोड़कर वापस नहीं आ गए।

खलवा की हत्या के तीन दिन बाद ही जगतिया का सन्देश दिनेश और डा० दादा तक आ पहुंचा कि सूरज और रूपा को आज ही सूरज ढलने के फौरन बाद जंगल मे भैरो की चट्टान के पास पहुंचा दो, नही तो समझो कि आप लोगो की खैर नही है।

इस सन्देश के बाद सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं रही कि खलवा का कत्ल जगतिया ने ही किया है और जेल के अधिकारी की पिस्तौल के साथ खलवा की राइफल अब उसी के साथ है। लेकिन बीहड़ जंगल मे इन दोनों बच्चों का वह क्या करेगा ? यह दादा और दिनेश दोनो की ही समझ मे नही आया।

एक खयाल यह आया कि वह बच्चों को सिर्फ देखने के लिए मंगवा रहा है, देखकर उन्ही के साथ वापस कर देगा। लेकिन इसके विरोध में तर्क भी मौजूद था कि ऐसा तो वह रात के किसी समय खुद दवाईखाने में आकर कर सकता था, बीहड जंगल मे और वह भी सूरज ढलने के बाद, इन बच्चों को तकलीफ देने की क्या जरूरत थी ? और दूसरे अगर उसके मन मे बच्चों को सिर्फ देखने भर की बात होती तो वह सन्देश मे इतने सख्त इलफाज न इस्तेमाल करता।

दूसरा विचार यह बना कि उसने बच्चो को अपने पास रखने के लिए मंगवाया है। शायद वह बच्चों को साथ लेकर कहीं और जाना चाहता है और वह भी बहुत जल्द, इसी कारण उसने 'आज ही' शब्दों का इस्तेमाल किया है। लेकिन इस विचार के साथ एक खतरा भी उभरकर सामने आया कि बच्चो को प्राप्त करने के बाद हो सकता है, वह उन दोनो को वापिस न आने दे, क्योंकि बच्चो को प्राप्त करने और उन दोनों से मिलने के रहस्य को वह रहस्य ही रखना चाहेगा। हो सकता है उन दोनो को भी अपने साथ मिल जाने के लिए मजबूर करे।

पूरा सोच-विचार करने के बाद दोनो को यही लगा कि बच्चो को जगल में ले जाना खतरे से खाली नहीं है। प्रतिशोध की भावना से पीड़ित आदमी आधा पागल होता है, ऐसे आदमी से कोई भी उम्मीद की जा सकती है। लेकिन बिना ले जाए भी सुरक्षा नहीं थी, एक पागल आदमी द्वारा धमकी को सत्य मे बदलने पर भी शक करने की ज्यादा गुंजाइश

नहीं थी।

स्थिति बिलकुल साफ थी कि एक तरफ कुआं था और दूसरी तरफ खाई। रास्ता बस एक ही था कि बच्चों को यहीं दवाईखाने में छोड़कर भाग निकला जाए। डा० दादा तो माथे पर बल डाले बार-बार अपना सिर खुजला रहे थे। बच्चे भी गांधी जी के दो बन्दरों की तरह चुप बैठे उनकी बातें सुन रहे थे। सहमा दादा की हालत देखकर दिनेश को हंसी आ गई।

दिनेश को हंसता देख दादा बिगड़े, "यहां जान को बनी हुई है और तुम हंस रहे हो।"

"नहीं, मुझे तो इस बात पर हंसी आ रही है कि आप बार-बार सिर खुजलाए जा रहे है।"

"तुम भी तो बार-बार दाढ़ी के बाल सहलाए जा रहे हो।"

दादा की बात सुनते ही दिनेश का हाथ दाढ़ी पर से नीचे आ गया। सचमुच में दोनों परेशान थे। इस अजीब संकट से उबरने का कोई भी सरल रास्ता सुझाई नहीं दे रहा था। फैसला यही हुआ कि बच्चों को लेकर जाया जाएगा। इसके बाद जो कुछ होगा देखा जाएगा।

फैसला पक्के ही, दोनों बच्चों को गर्म पानी से नहलाया गया। अच्छा भोजन पकाकर खिलाया गया। दिनेश ने अपनी छड़ी वाली कटार को झटके के साथ एक-दो बार खोलकर बन्द करके देखा। डा० दादा ने भी अपनी साफ हुई बारह बोर की बन्दूक को दुबारा साफ किया। फिर सूरज जब ढलान की तरफ जाने के लिए तैयार हुआ तो बच्चों को साथ लेकर दोनों भैरों की चट्टान की तरफ चल पड़े।

बरसाती नाले के साथ-साथ चलकर पहले नदी के किनारे पहुंचे, फिर नदी के साथ-साथ चलकर झूलते हुए पुल तक। इसी पुल पर से होकर उन्होंने नदी पार की। नदी का किनारा छोड़ते ही अब वे बीहड़ जंगल में थे। ऐसे जंगल में, जहां सूरज की किरणों ने शायद ही कभी धरती को छुआ था।

दिनेश उस जंगल की सघनता और उसमें उगे अजीब-अजीब किसम के पेड़-पौधों और लता-बेलों को देखकर दंग रह गया। उसे बचपन में पढ़े कुछ जासूसी और तिलस्मी-उपन्यासों के दृश्य याद हो आए और दिल में धीरे-धीरे एक आतंक और एक दहशत ने पख फैलाने शुरू कर दिए।

"आगे जंगल और भी घना होता जाएगा और लगभग तीन कोस इसी तरह चलने के बाद भैरों की चट्टान आ जाएगी।" डा० दादा ने दिनेश को समझाया क्योंकि वे शिकारियों के साथ जंगल में खूब घूमे हुए थे।

अब बच्चे चलने में असमर्थ थे। उनके पैरों में कांटे चुभने की वजह से लहू बहने लगा था। अपनी ही मुसीबत में उलझे डा० दादा और प्रकृति की रहस्यमयता में खोए दिनेश का अब तक उनकी तरफ ध्यान ही नहीं गया था। सांप की तरह बल खाकर जाती एक छोटी-सी पगडण्डी और विश्राम करने के लिए भी वही, एकमात्र जगह दिखाई दे रही थी। पैरों की आहट सुनते ही छोटे जानवर पगडण्डी पर इधर से उधर भागते नजर आ जाते थे। गीदड़, सेह, नेवला, बन्दर, लंगूर, लोमड़ी, सभी तरह के जानवर, कोई बड़ा जानवर नहीं। पेड़ों पर तरह-तरह के पक्षी भी दिखाई दे रहे थे, जो दिनेश ने इससे पहले कभी नहीं देखे थे। चिड़ियाघर में भी नहीं। शायद वे प्रवासी पक्षी थे। एक छोटा-सा सांप तो पगडण्डी के बीचोंबीच काफी देर तक चलता रहा था। जब दादा ने लकड़ी उठाकर फेंकी थी तभी वह जंगल की तरफ मुड़ा था। थकावट महसूस हुई तो बच्चों को लेकर दोनों उसी पगडण्डी पर एक खुली-सी जगह देखकर बैठ गए और दादा तो मन ही मन अपने भाग्य को कोसने लगे।

बैठे-बैठे रूपा ने सवाल किया, "अभी और कित्ता चलना परेगा?"

"बस थोड़ा-सा और।" दादा ने दुलार से उसके तेल रहित खुरदरे बाल संवार दिए।

"अब हम और नहीं चल सकते दादा!" यह सूरज की आवाज थी।

"नहीं चलोगे तो अपने बापू को कैसे मिलोगे।" दिनेश ने उसे चलने के लिए उत्साहित किया।

पर बच्चों ने बापू से मिलने में कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। वे सचमुच में बहुत थक गए थे। खड़े होते ही उनकी टांगें कांपने लगती थीं। लेकिन उनको भैरों की चट्टान तक तो जाना ही था। आखिर उनको उठाकर ले चलने का फैसला किया गया। रूपा डॉ० दादा की पीठ पर आ गई और सूरज दिनेश की। दादा की बन्दूक भी दिनेश ने संभाल ली। बोझ पीठों पर होने की वजह से अब वे और भी धीरे-धीरे चलने लगे।

आखिर पगडण्डी एक खुले से मैदान में जाकर जैसे दोनों बांहें खोल-

कर अलग हट गई। मैदान में जगह-जगह आग जलने के निशान बने थे और भुने हुए जानवरों की नोची हुई हड्डियां इधर-उधर बिखरी थी। दादा ने बताया, "शायद कोई शिकारी टोली रात को यहां रुकी है और उसी ने शिकार के जानवर भूनकर खाए हैं!"

दिनेश छड़ी से उन हड्डियों को उलट-पलटकर देखने लगा। दादा को कोई महत्त्वपूर्ण बूटी नजर आ गई, वे उसके पत्तों को सूत-सूत कर कपड़े में इकट्ठा करने लगे और साथ ही बताने भी लगे, "मुद्दत बाद यह बूटी हाथ लगी है, सांप के काटे का इस बूटी से अच्छा कोई दूसरा इलाज नहीं है। चलो, मेरा आना तो भगवान ने सफल कर दिया।"

"लेकिन तब, जब सही-सलामत घर वापस पहुंच जाएं!" दिनेश को दादा के भगवान शब्द पर आपत्ति हो आई।

"उस मूरख ने अपने बच्चों को ही मिलना था तो चुपचाप नदी-किनारे पुल के पास मिल लेता; इन मासूमों को इस मुसीबत में डालने की क्या जरूरत थी? भगवान किसी बच्चे के बाप को डाकू न बनाए, नहीं तो बच्चे के साथ प्यार के दो शब्द बोलने वालों को भी मुसीबत ही मुसीबत? अब देखो ना, लौटते वक्त अंधेरा हो जाएगा। तब इस घने जंगल में इन बच्चों के साथ लौटना···तुम अपने साथ अपनी बैटरी तो लाए हो ना?" अचानक दादा को एक-दूसरे संकट की याद हो आई।

"जी हां, लाया हूं। उसे कैसे भूल सकता था।" दिनेश ने झोले के अन्दर से ही बैटरी का आकार दादा को दिखा दिया।

"अच्छा, तो फिर अब चलना चाहिए। जब मुसीबत उठानी ही है तो फिर उसका इंतजार किसलिए।" दादा ने फिर रूपा को पीठ पर लाद लिया और दिनेश ने सूरज को। अभी वे मैदान से आगे जाने वाली पगडण्डी को ही खोज रहे थे कि कहीं से कड़कती हुई आवाज़ आई, "हाल्ट! खबरदार जो थोड़ा-सा भी हिले, अपनी जगह पर वहीं खड़े रहो।"

दिनेश ने पीछे मुड़कर देखा तो उसे दो आदमियों के बीच राइफल को उनकी तरफ तानकर खड़ा जगतिया दिखाई दिया। वही बड़ी-बड़ी दाढ़ी और आंखों में आक्रोश की लालिमा और पैरों में बड़े-बड़े जूते। मल-मलकर धोने के बाद भी न मिटने वाले खून के धब्बों से भरे खलवा के कपड़ों में वह उसे कोई वनमानुष-सा लगा। दूसरे आदमियों में से एक के हाथ

में पिस्तौल था और दूसरे के हाथ में बिलकुल ताजे बांस को काटकर बनाया गया तीर-कमान। रायसाहब के बन्धक मजदूरों की नीली पोशाकें उनके जिस्मों पर थीं और पैरों पर जूतों की बजाय कपड़े बंधे थे।

दादा ने भी देखते ही जगतिया को पहचान लिया, "लो जगतू राम यहीं मिल गया!" बोलकर उन्होंने रूपा को पीठ पर से उतार दिया और उसकी उंगली पकड़कर जगतिया की तरफ बढ़ने को हुए कि जगतिया की आवाज फिर गूंजी, "खबरदार डाक्धर दादा! मुझे अब बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता। एक साल जेल में रहकर मैं आदमी की सभी चालाकियां और मक्कारियां देख आया हूं। तुम वहीं रुको और मेरी बच्ची को अकेली मेरी तरफ भेज दो।"

"ठीक है, जाओ बेटी जाओ!" दादा रूपा को हाथ से थोड़ा धकेलकर अलग हटकर खड़े हो गए।

लेकिन नन्ही रूपा अपने बाप को नहीं पहचान सकी। वह पलटकर दादा के साथ आ चिपटी। पर सूरज-जगतिया को पहचान गया। वह दिनेश की पीठ से उतरकर लड़खड़ाते पैर से भागा और जगतिया से जा लिपटा।

बाप ने अपने जिगर के टुकड़े को उठाकर छाती से लगा लिया। इसके बाद रूपा भी सूरज की नकल में भागकर जगतिया से जा लिपटी। जगतिया ने उसे सूरज से भी कहीं ज्यादा प्यार किया। दिनेश को लगा जैसे कोई मादा भालू खो गए, अपने बच्चों के अचानक मिल जाने पर उनसे लाड लड़ा रही है।

जगतिया ने इशारा किया तो साथ के दोनों आदमियों ने बच्चों को कन्धों पर लाद लिया। तीनों बच्चों समेत जंगल की तरफ जाने को हुए तो डा० दादा ने 'जरा रुको!' आवाज देकर उन्हें रोक लिया।

उनके मुंह फिराते ही डा० दादा आगे बढने को हुए तो जगतिया ने फिर उन्हें चेतावनी दी, "आगे मत बढ़ना डाकधर। जो कहना है वहीं से कहो।"

डा० दादा हाथ जोड़कर बोले, "तुम इस बीहड़ जंगल में इन मासूम बच्चों की हिफाजत कैसे करोगे? इन्हें हमारे साथ रहने दो, हम खुशी से इनका पालन-पोषण करेंगे।"

"शेर के बच्चे गीदड़ की खोह में नहीं पल सकते डाकधर, इन्हें शेर

की मांद चाहिए। अब ये मेरे साथ रहेंगे।"

"कुछ भी कहो जगतिया पर हमें गीदड़ मत कहो। तुम्हारे जैसे बहादुर आदमी के मुंह मे यह शब्द शोभा नहीं देते।" यह दिनेश की आवाज थी।

"मैं इन साथियों से तुम्हारे बारे मे सब कुछ जान चुका हूं माहटर। जब तुम जेल मेरे से मिलने आए थे तब तुम्हारे बारे मे मुझे कुछ भी पता नहीं था। मैं तुम लोगों को गीदड़ नहीं कहता, इस इलाके के बाकी लोगों को कहता हूं। इन पर क्या-क्या अत्याचार करते हैं रायसाहब के दरिन्दे, पूछो इन दो साथियों से। ये अपनी जान छुड़ाकर मुझसे आ मिले हैं। इसी तरह सब आ मिलेंगे। जाकर कह देना रायसाहब और उसके दरिन्दों से, अब वे ज्यादा दिन तक नहीं जी सकेंगे।"

"लेकिन इतनी बड़ी ताकत के साथ तुम अकेले···मेरा मतलब है···"

"हम अकेले थे लेकिन अब अकेले नहीं रहेंगे माहटर हम सारे के सारे बंधक मजदूरों की एक फौज बनाएंगे और फिर देखेंगे कि उस लाला और उस पाखण्डी ओझा की ताकत हमारा क्या बिगाड़ सकती है।"

"हथियार कहां से आएंगे इस फौज के लिए?"

जगतिया इस सवाल पर थोड़ी देर चुप रहा। शायद उसने भी इस समस्या पर अभी सोचा नहीं था। फिर उसे जेल में एक पढ़े-लिखे कैदी द्वारा बताई गई बात, छापामार युद्ध की सारी कहानी याद हो आई। लेकिन उस युद्ध के राज को उसने मास्टर को बताना उचित नहीं समझा। पढ़े-लिखे कैदी ने हिदायत दी थी कि छापामार युद्ध के रहस्यों को युद्ध को चलाने वाले कमांडर को ही अपने पास रखना चाहिए। बड़े चालाक से शब्दों में, "वह भी देखा जाएगा। हथियार भी कहीं न कहीं से मिल ही जाएंगे।" बोलकर जगतिया जंगल की तरफ चल दिया। उसके पीछे-पीछे बच्चों को कन्धों पर लादे उसके साथी भी चल दिए। डा० दादा और दिनेश उनको टिटर-टिटर देखते रह गए।

थोड़ी देर बाद कहीं पास ही से गोली चलने की आवाज आई। "शायद जगतिया या उसके किसी साथी ने बच्चों के भोजन के लिए छोटा जानवर मारा है!" जंगल से जल्द से जल्द बाहर निकलने की फिक्र में तेजी के साथ चल रहे डा० दादा ने पल-भर के लिए रुककर

दिनेश को समझाया। दिनेश ने भी गर्दन हिलाकर समझने का भाव दिखा दिया।



रावर्ट के तम्बू जलने की सबसे ज्यादा खुशी श्यामा को हुई थी। उसने तम्बू देखे नहीं थे, पर उनका एक काल्पनिक-सा चित्र उसकी आंखों के सामने घूमता रहता था। कभी-कभी उमंग उठती थी कि रात के अंधेरे में वह चुपके से रावर्ट वाले तम्बू में घुस जाए और चीखने-चिल्लाने से पहले ही उसका सिर-धड़ से अलग कर दे। पर यह उमंग मात्र उमंग ही रही। पहले इसलिए कि इसके बुरे नतीजे का कुछ न कुछ असर शैल और मां पर पड़ने का अन्देसा था और बाद में इसलिए कि उसने इस काम को दिनेश के हिस्से का काम मान लिया था। पर अब क्या हो सकता था? शिकार हाथ से निकल चुका था बिना किसी खरोंच के। वह चिटमौला तक आया तो जरूर था पर खबर सुनते ही कि जगतिया डाकू बनकर उसे तलाशता फिर रहा है, फौरन वापस चला गया था। अब उसके फिर से आने की भी उम्मीद नहीं बची थी। क्योंकि उसने अपना पिंजरा भी रायसाहब को सौंप दिया था। इस सन्देश के साथ कि यह पिंजरा मैं आपको आपके विद्रोही मजदूरों के लिए दे रहा हूं। अब रायसाहब उस पिंजरे को विद्रोही मजदूरों से भरने का कोई न कोई बहाना तलाश कर रहे थे।

समस्या पहले से भी ज्यादा गम्भीर थी। तब से तो खतरनाक भी बन चुकी थी जब से इस तरह की खबरें मिलने लगी थीं कि रायसाहब के गुण्डे दमकड़ी के साथ ही पहरुआ गांव को भी जलाकर खाक करने की योजनाएं बना रहे हैं।

सुचित्रा भी इन खबरों से चिंतित थी। वह इस सचाई से वाकिफ थी कि महाजनी जहनियत का कोई भी आदमी यह कभी नहीं बर्दाश्त कर सकता कि जिन मजदूरों के सिर पर उसका सारा कारोबार और धन्धा चलता हो, वे एक साधारण-से आदमी के बहकावे में आकर विद्रोही हो जाएं। फिर रायसाहब की तो फितरत ही दूसरी थी। वे फन खुलने

से पहले ही उसको कुचल देने पर विश्वास करते थे। सुचित्रा उनको वर्षों से देखती चली आ रही थी। भागने के बाद पुनः पकड़े जाने वाले मजदूरों के प्रति वे जिस तरह का वहशियाना रवैया अख्तियार किए हुए थे, उसमें भी उनकी झुंझलाहट का पता चलता था। मजदूरों की भीड़ के सामने वे पुनः पकड़े गए मजदूर को इतनी यातनाएं दिलवाते थे कि उसके जीने और मरने के बीच बहुत ज्यादा अन्तर नहीं रहता था। मात्र इस ख्याल से कि दूसरे मजदूरों पर इसका असर पड़े और वे भागने की हिम्मत न करें। इसके बावजूद मजदूरों के भागने और भागकर जगतिया से जा मिलने का सिलसिला जारी था। सुचित्रा और श्यामा की खुशी का ठिकाना नहीं रहा था जब उनको यह सूचना मिली थी कि दो बन्धुआ औरतें भी भागकर जगतिया से जा मिली हैं। श्यामा तो किसी न किसी तरह उन औरतों के दर्शन करना चाहने लगी थी।

कभी-कभी श्यामा के मन में यह भी उठता कि वह स्वयं जाकर जगतिया से मिले और पूछे कि उसका हिंसा के पीछे क्या तर्क है और उसकी योजना क्या है? अगर वह सिर्फ बदले की भावना से यह सब कर रहा है तो गलत कर रहा है। ऐसी हालत में जनता उसका साथ नहीं देगी। जनता का समर्थन पाने के लिए उसे यह साबित करना होगा कि वह एक क्रान्तिकारी है, लुटेरा या डाकू नहीं है।

यह सब सोचते वक्त उसे दिनेश की भी याद आती। याद आते वे सारे के सारे शब्द और जुमले जिन्हें वह अक्सर जोश में आकर बोलता था, "वर्गगत होने से हिंसा-हिंसा नहीं रह जाती, महान् से महानतम अहिंसा हो जाती है।"····"उन क्रान्तिकारियों की हिंसा को हम पूजा भाव से क्यों देखते हैं जिन्होंने देश की आजादी के लिए बड़े से बड़े बलिदान दिए थे और अत्याचारी अंग्रेजों की नाक में दम कर दिया था?"··· सुकरात, ईसामसीह, गुरुगोविन्द सिंह और भगतसिंह जैसी महान् आत्माओं के साथ होने वाले व्यवहारों में भी हिंसा ही थी, चाहे वह यथास्थितिवादियों की तरफ से बरती गई थी। जाहिर है कि किसी भी प्रकार का ठोस परिवर्तन लाने के लिए हर समय हिंसा की भारी जरूरत पड़ती है, चाहे वह किसी भी पक्ष से क्यों न बरती जाए। बिना हिंसा की तेज आंच के रूढ़ मान्यताओं की जंग को चलाना संभव नहीं है!" ऐसी हालत में उसे लगता कि दिनेश ज्यादा सही और ज्यादा सार्थक ढंग से

सोचता है । उसका यह सोचना बहुत बड़ी सचाई पर आधारित है, इस सचाई पर कि जब तक साधारण आदमी को गहरी नींद से जगाया नहीं जाता तब तक दुनिया को बेहतर बनाने के सारे सपने बेकार हैं।

बेचैनी बहुत ज्यादा महसूस हुई तो श्यामा खाट से उठकर कमरे में ही टहलने लगी। टहलने से मन शान्त नहीं हुआ तो वह घर से निकलकर बाहर के पेड़ों के नीचे आ गई। यहां खुली हवा में थोड़ी राहत महसूस हुई पर सवाल फिर सामने आकर खड़ा हो गया कि इन आदिवासियों और हरिजनों को जगाया कैसे जा सकता है ? मिट्टी के ढेलों को प्राणवान और चेतन कैसे बनाया जा सकता है ?

उसके ज़हन में बीरबल के नाम पर मशहूर हुआ वह चुटकला उभर आया, जिसमें बीरबल ने गधे को साबुन से नहलाकर गाय बनाने का तमाशा करते हुए अकबर को एक महत्त्वपूर्ण ज्ञान से नवाज़ा था। लेकिन जगतिया की दिलेरी और दिनेश के नाटकों के प्रभाव से बदले लोगों के सामने रखकर उसे यह चुटकला कोरी बकवास लगने लगा। प्रमाण बिलकुल सामने था कि रावर्ट के तम्बुओं को आखिर किसने जलाया है ? सबसे ज्यादा कमज़ोर और भोंदू समझे जाने वाले सगुआ और देवा ने। यह अलग बात है कि उसकी प्रेरणा उनको कहीं और से मिली। जब सगुआ और देवा जैसे शियाल जाग सकते हैं तो दूसरे लोग क्यों नहीं जाग सकते ? पहरुआ के हरिजन क्यों नहीं जाग सकते ? इनको भी सारी कायरता और सारे डर त्यागकर अपनी रक्षा के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिए। दमकड़ी गांव के लोगों की तरह हथियार बाहर निकालकर मोर्चे खोद लेने चाहिएं।

निर्णय पर पहुंचते ही अब श्यामा का मन काफी स्थिर था। अब उसे हवा में थोड़ी मादकता महसूस होने लगी और पक्षियों की आवाजों में भी आनंद दिखाई देने लगा। आनन्द के इन क्षणों में उसका मन दिनेश से मिलने के लिए लालायित हो उठा।

उसे लगा कि बचपन से सम्बन्धित किसी दूसरी लड़की का तो दिनेश ने सिर्फ बहाना किया है, असल बात यह है कि वह अपने जन-आन्दोलन के मिशन के प्रति समर्पित है और अगर लड़की है भी, तो उसका दिनेश के इस मिशन से क्या सम्बन्ध ? प्रेम और शादी नितान्त व्यक्तिगत मामले हैं। इनको लेकर उठने वाले सवाल, समस्याएं और दुख-सुख

इन सबको व्यक्तिगत स्तर पर ही लिया जाना चाहिए। इनके अन्दर से पैदा होने वाले कचरे को समष्टिगत या वर्गगत मसलों और सवालों की स्वच्छ धारा के बीच मिलाने की कोशिश नहीं की जानी चाहिए।

निर्णय पकते ही श्यामा को लगा कि वह बहुत हल्की है। दिल और दिमाग में फंसी फांस को जैसे किसी ने एक हल्के-से दर्द के साथ निकालकर बाहर कर दिया हो। वह उठकर मां के पास बाड़े में चली आई और उसे बाहों में घेरकर बोली, "मां, एक बात पूछूं ?"

"हां-हां पूछो।" मां ने भी उसे बांहों में ले लिया।

"तुम्हें कभी दिनेश जी की याद नहीं आती ?"

मां बेटी के चेहरे की तरफ देखती रह गई। उसे बेटी की आंखों में एक नई रोशनी दिखाई दी। किसी बहुत बड़ी झील के काले सन्नाटे पर बहती किश्ती में बंधी लालटेन की रोशनी। मां की बांहों की जकड़न ढीली पड़ गई, "याद क्यों नहीं आती। वह भी कोई भुलाया जा सकने वाला लड़का है।"

"तो शैल को भेजकर किसी दिन उसे बुला भेजिए ना।" बेटी की बांहों में तनिक और कसाव आ गया।

"ठीक है, मैं कल ही शैल को भेजकर देखूंगी।" मां ने बेटी की ठोड़ी पर प्यार का स्पर्श देकर सहमति जाहिर कर दी।

"कल क्यों, आज ही क्यों नहीं।" बेटी मां के सामने दूध पीती बच्ची बन गई।

"ठीक है, शैल को आ जाने दे, किसी को साथ करके आज ही भेज दूंगी।" मां को भी बेटी के बचपन की जिदें याद हो आईं।

अब श्यामा शैल का इन्तजार करने लगी। इन्तजार की घड़ियां भारी महसूस होने लगी तो जहन में सवाल उभरा कि वह खुद ही जाकर दिनेश से क्यों नहीं मिल आती ? उत्तर में उसे अपने ही कहे हुए शब्द याद हो आए। वे शब्द जो थोड़ा-सा भी एकान्त पाते ही दूर के किसी पुराने मन्दिर में बजने वाले घड़ियालों की तरह सुनाई देने लगते थे और इस वक्त भी वे उसे उसी तरह सुनाई दे रहे थे—

'लेकिन इस वक्त तो तुम भावुक बनकर आए हो मेरे पास। तुम ही आधे घण्टे से मेरा पीछा कर रहे हो। मैं तो तुम्हारे पास अपनी भावुकता लेकर नहीं गई।'

सुबह होते ही शैल, एक मजबूत-से आदमी को साथ लेकर, दिनेश की ताला लगी कोठरी से होता हुआ जब दवाईखाने के सामने वाले मैदान मे पहुंचा तो वहां उसने और ही अनोखा नजारा देखा।

एक तरफ चट्टानों के पास, जमीन मे गड़ी बल्लियों पर शीर्षासन के रूप में एक बड़े-से जंगली जानवर की लाश बंधी थी। एक हाथ और पैर एक बल्ली पर और दूसरा हाथ और पैर दूसरी बल्ली पर। धड़ और पंजों तक की पूरी खाल खींच ली गई थी। नीचे लटकते मुंड और ऊपर झूलती पूछ से ही पता चलता था कि वह तेंदुआ है। नीचे के जबड़े के दो शिकारी दांत सफेद कटारों की तरह चमक रहे थे। इन्ही कटारों से वह शिकार की गर्दन मे छेद करके पहले गर्म-गर्म खून पीता था और उसके बाद गोश्त खाता था। गोल-मटोल चमकदार आंखों को देखकर अब भी दहशत पैदा होती थी। मजबूत-सा आदमी तो डरकर दूर ही ठिठक गया था। हालांकि उघड़े मांस को कई जगह से कौओं और गिद्धों ने नोच डाला था। कुछ गिद्ध अब भी आसमान पर मंडरा रहे थे और कुछ छोटे-छोटे दल बनाकर पास की चट्टानों पर बैठे थे ताकि तमाशा देखने वाले लोग हटें और वे सब कुछ हजम कर जाएं।

औरतें मकानों की छतों पर जमी इस अजीब दृश्य को देख रही थीं और मर्द गली के मुहाने पर छोटे-छोटे झुण्डों में खड़े कानाफूसी करने में मशगूल थे। सबको यह तो पता चल गया था कि जगतिया और उसके साथियों ने जंगल के खूंखार दरिन्दों को मारना शुरू कर दिया है, क्योंकि जंगल से अक्सर गोलिया चलने की आवाजें आती रहती थी, पर वे मरे हुए जानवरों को खाल उतारकर इस तरह रात के अंधेरे मे बल्लियों पर लटका जाएंगे, इस हिम्मत की तो किसी ने कल्पना तक नही की थी।

जैसे-जैसे इस विचित्र घटना की खबर इलाके मे फैलती चली जा रही थी, वैसे-वैसे दवाईखाने के सामने भीड़ बढ़ती चली जा रही थी। धूप फैलने तक पास के गांवों के लोग भी भीड़ में दिखाई देने लगे थे। खाकी निकर वाले ने एक काम अपने आप ही अपने सुपुर्द कर लिया था—वह हर नये आने वाले के सामने बड़े ही उत्साह के साथ खुद पेश होता और नमस्कार जैसी प्रारम्भिक औपचारिकता निभते ही एक ही जैसे बंधे-बंधाए

शब्दों में अपनी कहानी दोहराने लगता, "सवेरे उठकर जंगल पानी के लिए इधर निकला तो देखता क्या हूं कि इधर गिद्धों और कौओं का मेला लगा है। सोचा, कोई न कोई बात जरूर है। या तो किसी बूढ़े जानवर ने छोटे जानवर को मारकर छोड़ दिया है या कोई पालतू जानवर खाई में गिरकर मर गया है। थोड़ा आगे बढ़ा तो देखता क्या हूं, इन बल्लियों पर खाल उतरी किसी जानवर की देह लटक रही है। मैंने सोचा, होगी कोई गाय या भैंस…किसी ने चमड़ी उतारने का यह नया तरीका निकाला होगा। पर नजदीक जाकर देखा तो मेरे तो रोंगटे खड़े हो गए। घिग्गी बंध गई भाई। अरे यह तो तेंदुआ है, और वही बूढ़ा तेंदुआ जिसके दो शिकारी दांत टूटे हुए हैं। और जो खुलेआम जमना को उठाकर चलता बना था। और जिसने पता नहीं कितने जानवरों, बूढ़ों और बच्चों को प्रेत की तरह निगल लिया था। खैर मैंने डा० दादा को आवाजें देकर उनका दरवाजा खुल-वाया। वे भी यह सब देखकर भौंचक्के रह गए। बोले, "रात मुझे थोड़ी खचपच महसूस तो हुई थी, पर मैंने सोचा सियारों या लंगूरों का झुण्ड आ गया होगा। खेतों वाले अपने आप सुलझ लेंगे। पर इस बात का तो मुझे ख्याल तक नहीं था। ख्याल कैसे होता? ऐसी घटना कभी देखी या सुनी हो तब ना! हो सकता है यह जगतिया का काम हो। हां ऽऽऽ यह जगतिया का ही काम है। वह पहले इन जानवरों से ही बदला ले रहा है। उसे सजा इन जानवरों की ही बदौलत मिली थी ना! और फिर जमना को भी तो जानवर ने ही खत्म किया है। मैंने और डा० दादा ने पत्थर मार-मारकर गिद्धों और कौओं को इस पर से हटाया, नहीं तो अब तक सब खत्म हो गया होता। गिद्ध तो घायल जानवर को भी नहीं छोड़ते, घेर कर नोच-नोच कर खा जाते हैं। देखो साला कैसे घूर रहा है। जैसे अभी छलांग मारकर झपट पड़ेगा। लेकिन अब ये क्या झपटेगा। अब तो इसपर गिद्ध ही झपटेंगे और हज़म कर जाएंगे इसका ताना-बाना।"

लेकिन लोग थे कि निकर वाले की रामकहानी की तरफ ध्यान ही नहीं दे रहे थे। वे कानाफूसी में व्यस्त थे। हर आने वाला नया आदमी भी उनके साथ व्यस्त हो जाता था। शैल के साथ आया आदमी भी व्यस्त हो गया और बाकी के लोगों की तरह सिर्फ जबड़े हिलाने वाले खिलौनों की तरह होंठ हिलाने लगा। जैसे बाकी के अंगों का होंठों के साथ कोई रिश्ता ही न हो।

औरतों के तो होंठ भी नहीं हिल रहे थे। वे बस देखे जा रही थीं, कभी बल्लियों पर लटके जानवर की तरफ, कभी लोगों की तरफ तो कभी गिद्धों या पहाड़ की चोटियों की तरफ। सब के चेहरों पर राहत के चिह्न ज़रूर दिखाई दे रहे थे, बहुत बड़े त्रास और संकट से मुक्त हो जाने के बाद की राहत के चिह्न। इसी राहत को शैल अपने मन के किसी कोने में भी खिलती महसूस कर रहा था। सोच रहा था कि अब वह बेधड़क दूर-दूर की घाटियों में अपनी भेड़ों को चराने ले जा सकता है और बूढ़े सरपंच को भी अब अपने साथ रखवाले लेकर चलने की जरूरत नहीं है। उसका दिल हुआ कि वह सरपंच के चेहरे पर भी राहत की दमक को देखे। पर ढूंढ़ने पर भी सरपंच उसे कहीं दिखाई नहीं दिया। डा० दादा और दिनेश भी कहीं नज़र नहीं आए।

अब वह भीड़ से मन हटाकर दवाईखाने की तरफ मुड़ा। चौखट के पास पहुंचा तो उसे डा० दादा की आवाज़ सुनाई दे गई। दादा काफी जोश में बोल रहे थे। शैल वहीं ठिठककर उनके जोश के कारण को पहचानने की कोशिश करने लगा।

"माना कि जानवर हमें नुकसान पहुंचा सकते हैं, उनसे हमें खतरा है, लेकिन इसका यह मतलब तो नहीं कि दुनिया के सारे जानवरों को खत्म कर दिया जाए। उन्हें मार-मार कर गिद्धों के लिए बल्लियों पर टांग दिया जाए।"

"लेकिन दादा, अपनी सुरक्षा का हर प्राणी को अधिकार है। अगर बहुतों की सुरक्षा किसी एक को मारने से ही संभव हो रही हो तो उसको मारना किस धर्म, नीति और न्याय में बुरा माना गया है ? कोई पागल कुत्ता अगर आसपास के लोगों की जान के लिए खतरा बना हुआ हो तो उसे मारना कोई जुल्म नहीं है।" शैल ने इस आवाज़ को भी फौरन पहचान लिया। यह मास्टर दिनेश की आवाज़ थी।

"नहीं, उस कुत्ते को मारने का आपको कोई हक नहीं है। सिर्फ उसमें अपनी हिफाज़त करने का हक है। इस तरह से तो अपनी हिफाज़त के उपाय सोचने की बजाय दुनिया-भर के सारे सांपों को मार डालेंगे आप। उनके ज़हर से आपकी जान को खतरा है ना। मार डालिए उन बेचारे निरीह प्राणियों को।" यह डा० दादा का तर्क है।

"सांप को पागल कुत्ते के साथ नत्थी करके हम किसी नतीजे पर नहीं

पहुंच सकेंगे डा० दादा। सांप तब तक किसी को कुछ नहीं कहता जब तक उसकी अपनी जान पर कोई संकट न आ पड़े। लेकिन पागल कुत्ता तो बेमतलब ही दूसरों को काटता है। एक तीसरी किसम भी होती है जोंक की किसम, जो पैदा ही दूसरों का खून चूसने के लिए होती है। मेरे विचार में पागल कुत्तों और जोंकों को मार देने में कोई बुराई नहीं है। आदमियों में भी जोंक और कुत्तों की तरह के आदमी मिल जाते हैं। भले ही वे अनुपात में बहुत ज्यादा नहीं है, लेकिन थोड़े होकर भी उन्होंने इस धरती को जहन्नुम बना रखा है। क्या आपने पर-पीडन में आनन्द लेने वाले ड्रैकुला की कहानियां नहीं पढ़ीं? ड्रैकुला जैसे प्रेतों का अन्त करने को आप किस तर्क के तहत बुरा साबित कर सकते हैं?"

इसके बाद थोड़ी देर के लिए चुप्पी रही फिर सहमा डा० दादा की पस्त और जोश रहित आवाज उभरी, "देखो दिनेश, तर्क में मैं तुम्हारा मुकाबला नहीं कर सकता, क्योंकि मैं तुम्हारे जितना पढ़ा-लिखा नहीं हूं। लेकिन एक बात मैं जोर देकर कहूंगा कि तर्क द्वारा साबित हो जाने वाला सत्य ही अन्तिम सत्य नहीं होता, और···"

"तो अन्तिम सत्य क्या होता है?" दिनेश ने डा० दादा को बीच में ही टोक दिया।

डा० दादा थोड़ी देर के लिए फिर चुप हो गए, फिर जैसे जोश को संकलित करते हुए बोले, "जिन्दगी में से, व्यवहार मे से, हमारे संघर्षों में से फूटकर निकलने वाला सत्य।"

"आखिर उसे समझा तो तर्क के माध्यम से ही जाएगा, या कि वह सत्य यूं ही समझ मे आ जाएगा?"

"कुछ भी हो मैं हिंसा के किसी भी रास्ते के खिलाफ हूं।" अब दादा की आवाज में थोड़ा गुस्सा झलकने लगा था। "मानता हूं कि यह संसार हिंसक लोगों से भरा पड़ा है। और यह भी मानता हूं कि मैंने डरकूला··· यही नाम लिया था न तूने?···"

"ड्रैकुला!" दिनेश ने स्वीकारात्मक सिर हिला दिया।

"माना कि मैंने ड्रैकुला की कहानियां नहीं पढ़ी, पर उस जैसे लोग जरूर देखे हैं और सुने हैं। पैसे वाले लोग आमतौर पर ऐसे ही होते हैं। घमण्ड और पाखण्ड के कारण उनकी आदतें शैतानी हो जाती है। धन इकट्ठा करने की लत को खुराक देते वक्त वे इंसानी जिन्दगी को पहुंचने

वाले नुकसान में भी आनन्द लेने लगते हैं। दूसरों के दुख से अपने सुख के आधिक्य को मापने लगते हैं। लेकिन फिर भी हिंसा का जवाब हिंसा नहीं है। हिंसा को ईसामसीह की तरह सूली पर चढ़कर और महात्मा गांधी की तरह छाती पर गोलियां खाकर भी परास्त किया जा सकता है और राम तथा कृष्ण की तरह रावण और कंस को सपरिवार मारकर भी। लेकिन ये दो अलग-अलग रास्ते हैं। एक अहिंसा से हिंसा को परास्त करने का रास्ता और दूसरा हिंसा से हिंसा को समाप्त करने का रास्ता। मैं जानता हूं कि तुम दूसरे रास्ते के हामी हो लेकिन तुम्हें भी जान लेना चाहिए कि मैं पहले रास्ते का हामी हूं।"

"मैं जानता हूं।"

"लेकिन तुममें एक नई बात जरूर है कि तुम पूरी जनता को जगाकर उसे राम और कृष्ण की अदम्य शक्ति में परिवर्तित करना चाहते हो। किसी अलौकिक शक्ति का आह्वान न करके उसे जनता के मनों के अन्दर से ही पैदा करने के इच्छुक हो। जनता के अन्दर से ही शक्ति पैदा करने वाले तुम्हारे इस तरीके से मैं शत-प्रतिशत सहमत हूं। लेकिन उस शक्ति का स्वरूप यह भी तो हो सकता है कि आदमी नरक के डर और स्वर्ग के लोभ से मुक्त हो जाए। वह ईंट का जवाब पत्थर से देने की बजाए ईंट को सहने के लिए अपने आपको फौलाद बना ले— आकाश की तरह अकाट्य, समुद्र की तरह अमोख और हिमालय की तरह अडिग। ऐसी हालत में ड्रैकुला तो क्या महाकाल भी उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता! क्यों, गलत कह रहा हूं क्या?"

अब दिनेश की चुप होकर सोचने की बारी थी। उसने दादा से माचिस मांगी और कुछ क्षण बाद ही सिगरेट का धुआं उड़कर शैल तक पहुंच गया। शैल को लगा अगर उसने धुएं वाली हवा से अपना बचाव न किया तो उसको खांसी आ जाएगी और वह अंतरंग तर्क-वितर्क सुनने से वंचित हो जाएगा। उसने अन्दर से आ रहे धुएं की तरफ पीठ कर ली और खांसी न आने देने के लिए आमादा हो गया। कुछ पल बाद ही दिनेश की आवाज उभरी, लेकिन अब उस आवाज में पहले जैसी तल्खी नहीं थी, एक ठण्डापन था, चिंतन की गरिमा थी।

"आप आध्यात्मिक लोगों जैसी बातें कर रहे हैं डा० दादा, जिसमें आत्मा के उन्नयन की बात को बुनियादी सत्य के रूप में स्वीकार करके

चला जाता है। मैं इस रास्ते को बुरा तो नहीं कहता पर इसे नितान्त वैयक्तिक रास्ता मानता हूं। कोई भी आदमी अपने मन की, मात्र अपने मन की शान्ति के लिए इस रास्ते को खुशी से अपना सकता है। ऋषि-मुनि समाज से कटकर, बीहड़ जंगलों में बैठकर, इस रास्ते से अपनी आत्मा के लिए शान्ति की तलाश करते भी रहे है। लेकिन वर्गगत उन्नयन के लिए इस रास्ते को प्रयोग में लाया गया हो और उससे समाज या व्यवस्था बदली हो, इसकी मिसाल इतिहास में कहीं नहीं मिलती। मसीह या गांधी के बलिदान दे देने के बाद उनसे सम्बन्धित इलाकों की आज की व्यवस्था और तंत्र सबके सामने हैं। लेकिन जिन देशों में दूसरे, अर्थात् क्रान्ति के रास्ते अपनाए गए थे, उन देशों की हालत भी दुनिया के सामने है। एक व्यवस्था दूसरी व्यवस्था के खिलाफ चाहे प्रचार कितना भी करती रहे लेकिन सच्चाई पर पर्दा नहीं डाला जा सकता। और फिर मेरा देश तो आध्यात्मिक रास्ते पर चलने वालों का देश है। इस देश की इस वक्त क्या हालत है, इस बारे में शायद कुछ भी बताने की जरूरत नहीं है।"

"हमारा देश आध्यात्मिक था लेकिन अब नहीं है।"

"चलो, आपकी बात को मान भी लिया जाए, तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता। सवाल यह है कि अगर वह रास्ता इतना अच्छा था तो छोड़ा ही क्यों गया? अच्छे और लाभप्रद रास्ते को कौन छोड़ता है?"

"छोड़ा नहीं, कुछ स्वार्थी लोगों ने छुड़वाया है।"

"बस-बस, इन्हीं स्वार्थी लोगों को मैं पागल कुत्ता कहता हूं। अगर इनके पागलपन का कोई इलाज हमारे पास नहीं है तो इन्हें जिन्दा रखना या रहने देना स्वयं इन कुत्तों के साथ भी कोई अच्छा व्यवहार करना नहीं है।"

"हां ऽऽऽ, अब आए ना, सही जगह पर। अगर इनके पागलपन का इलाज नहीं है!" डा० दादा ने पागलपन और इलाज शब्दों को थोड़ा फैलाकर कहा। "यहां मैं तुमसे सहमत हूं। प्राथमिकता इलाज को मिलनी चाहिए न कि नष्ट करने को, मैं भी तो यही कहता हूं।"

"हां, इलाज करके तो देखा ही जाना चाहिए।"

"बस ठीक है, अगर कोई बुराई लाइलाज है तो उसे नष्ट कर देने में कोई बुराई नहीं है।"

"बुराई को या बुराई से भरे शरीर को?"

"अं···दोनों को ही।" जवाब देकर दादा ठहाका मारकर हंस पड़े। दिनेश भी दबी-दबी-सी हंसी में उनका साथ देने लगा।

इधर शैल को भी लगा कि सुनने के लिए अब कुछ बाकी नहीं बचा है। उसने चलने का निश्चय किया, पर मां तथा श्यामा का सन्देश दिनेश तक पहुंचाने के लिए नहीं उलटे बातचीत और जानवर को टांगने की घटना मां और श्यामा तक पहुंचाने। दादा की उपस्थिति में केवल दिनेश को मां द्वारा बुलाने का संदेश देना उसको दादा की उपेक्षा करने जैसा लगा। और दादा का उसके मन में दिनेश से भी कहीं अधिक सम्मान था।

शैल ने एक नजर साथ आए आदमी पर डाली, वह अब भी खुसर-फुसर में पहले जितने ही उत्साह से लगा था। शैल को लगा, जैसे अब उस आदमी की उसे जरूरत नहीं है। वह एक बार फिर तेंदुए की लाश की तरफ देख, बिना किसी आतंक और भय के पहरुआ की ओर चल दिया।



थोड़े दिन बाद ही दमकड़ी गांव और जंगल के अलग-अलग हिस्सों पर मंडराने वाले गिद्ध ओझा श्री बागपत महाराज के मकान की बगल वाले पेड़ों के झुरमुट पर मंडराने लगे। कौओं की बहुत बड़ी बारात ने पेड़ों पर और ओझा के घर की मुंडेरों पर घड़ल्ले से आसन जमा लिया और वे कुरला-कुरलाकर ओझा की नींद हराम करने लगे।

तंग आकर ओझा ने चेतू को आवाज दी, पर चेतू ने कोई जवाब नहीं दिया। घर के दो दूसरे नौकर जरूर घबराकर उसके सामने आ खड़े हुए। ओझा उनपर ही बरस पड़ा, "इधर तुम घोड़े बेचकर सो रहे हो और उधर बाहर कौए हाहाकार मचाए हुए हैं। क्या बात है, बाहर जाकर पता लगाओ!"

हुक्म होते ही नौकर बाहर निकल आए। जब वे काफी देर तक लौटकर नहीं आए तो ओझा ने लिहाफ छोड़ा और कम्बल ओढ़कर बाहर आया। जिस तरफ कौए कूद-कूदकर पड़ रहे थे उस तरफ नजर दौड़ाई तो उसके गुस्से का ठिकाना नहीं रहा। पेड़ों के दो तनों पर दो बड़े-बड़े जानवरों के खाल उतरे धड़ उलटे लटक रहे थे और दोनों नौकर मुंह

ऊपर उठाए इस स्थिति को समझने की कोशिश कर रहे थे ताकि अन्दर जाकर मालिक को माजरा बता सकें। भेड़ या बकरी का धड़ उलटा लटका तो वे देखते ही रहते थे, बल्कि खुद अपने हाथों से लटकाते और उतारते थे। लेकिन वे दोनों धड उन्हें बाघ और शेर के लग रहे थे, इसलिए वे निर्णय ही नहीं कर पा रहे थे कि वापस जाएं तो कैसे जाएं और जाकर मालिक को क्या बताएं।

सब कुछ समझकर ओझा अपनी आदत के मुताबिक दांत भींचकर गुर्राया और उसकी आग बरसाती आंखें चेतू को ढूंढ़ने लगीं।

सारी रात पहरा देने के बाद भोर के उजास की थोड़ी-सी आभा दिखाई देते ही चेतू बगल वाली झोंपड़ी में जाकर विश्राम करने लगा था, इस ख्याल के साथ कि अब कोई खतरा नहीं। इसी बीच पता नहीं कब और किन लोगों ने जानवरों की लाशें लाकर पेड़ों पर लटका दी थीं। दूसरे ओझाओं के घर वहां से काफी दूर थे, इसलिए वहां के पहरेदारों की इन तक नज़र पहुंचने का सवाल ही नहीं उठता था। इसके अलावा बागपत महाराज की सम्पन्नता और स्वभाव को देखते हुए इस तरफ से वे वैसे भी आश्वस्त रहते थे। ओझा स्वयं भी बहुत अच्छा निशानेबाज़ था। कई बार उसने एक साधारण-सी बन्दूक से उड़ते हुए पक्षियों का शिकार करके दिखाया था।

झोंपड़ी मे घुसते ही ओझा ने एक लात नींद में बेहोश पड़े चेतू के चूतड़ों पर जमाई, "कमीने! भूतनी की औलाद! इसी को पहरा देना कहते हैं?"

"कौन है?" अंगरक्षक भभककर उठ बैठा और बगल में पड़ी बन्दूक की नाली ठीक ओझा की छाती पर तन गई।

"हरामज़ादे, बाहर आकर देख क्या गुल खिल रहे हैं और तू घोड़े बेचकर सो रहा है।"

आवाज़ पहचानकर चेतू ने नींद से भरी आंखें पांच-सात बार झपकीं। ओझा की विकराल छाया-सी लग रही देह के पीछे उगे भीए कुदबते नज़र आए और साथ ही उसके कानों में तेज़ बुरलाहट भी पड़ने लगी।

मुख पर हैरानी और शर्म के भाव लेकर चेतू उठा और बाहर आकर उसने जो कुछ देखा उससे वह भी भौचक-सा खड़ा रह गया।

"कब हुआ, कब हुआ ये बूचड़खाना?" ओझा उंगली पेड़ों की तरफ

उठाकर फिर चीखा।

चेतू क्या जवाब दे? क्षमा-याचना के भाव से उसकी गर्दन झुक गई। ओझा ने आगे बढ़कर उसकी गाल पर ऐसा थप्पड़ जमाया कि मुंडेरों के कौए पटाखे की आवाज़ सुनकर उड़ गए। ओझा गुस्से में अपनी छाती मलता हुआ अन्दर लौट आया और खिड़की खोलकर बाहर के नजारे का जायज़ा लेने लगा।

थोड़ी देर बाद ही ओझा के घर के सामने भी दमकड़ी गांव की तरह ही भीड़ इकट्ठी होने लगी। भीड़ को देखते ही ओझा ने उन धड़ों को जमीन खुदवाकर गड़वा दिया। उसे एक नया खतरा महसूस हुआ कि कहीं भीड़ पर से उसकी शक्ति का सम्मोहन खत्म न हो जाए। एक बार भीड़ को यह पता चल गया कि ऐसे लोग भी हैं जो ओझा से भी नहीं डरते और ओझा उनका कुछ बिगाड़ भी नहीं सकता तो फिर क्या बचेगा? सब कुछ एक झटके के साथ खत्म हो जाएगा। एक डर ही तो है जो आदिवासियों की हर नस्ल और हर कबीले को उसका दास बनाए हुए है। अगर वह डर ही जाता रहा तो उसको मान्यता कौन देगा? क्या फर्क रह जाएगा आम आदमी और ओझा में? जानवरों के धड़ों को गहरे से गहरे गड्ढों में गड़वाकर भी ओझा चिन्ता में डूब गया।

इसी चिन्ता ने ओझा का दिन का चैन और रात की नींद हराम कर दी। वह रायसाहब के पास जाकर भी इस घटना का बखान कैसे करे? साफ स्वीकार करे कि अब उसका आतंक और रुआब खत्म हो गया है। अब उसके साथ भी वैसा ही व्यवहार होने लगा है जैसा कोई भी आदमी किसी भी वक्त गाय या भैंस के साथ कर देता है। नहीं-नहीं यह खबर स्वयं अपने मुख से रायसाहब के पास नहीं पहुंचाई जा सकती।

ओझा को अन्दर ही अन्दर यह विश्वास बांस में लगे घुन की तरह लगा कि अब वह दिन दूर नहीं, जब उसे भी लोग उसी तरह फालतू समझने लगेंगे जिस तरह पुराने जमाने के धर्म गुरुओं, ब्राह्मणों और साधु-सन्तों को समझने लगे हैं। उसका भी उसी तरह अपमान होने लगेगा जैसे घर-घर का चक्कर लगाने वाले कुत्ते का होना है। लोग उस पर भी जूते चलाने का साहस करने लगेंगे। बच्चे उस पर पत्थर फेंकने लगेंगे और वह हर [illegible] से हाथ जोड़कर और गर्दन झुकाकर [illegible] करेगा। [illegible] बन्धुआ मजदूरों और कमीनजात के लोगों की तरह। नहीं, नहीं, ऐसा

नहीं हो सकता। ऐसा होने से पहले ही वह आत्महत्या कर लेगा। स्वयं अपने हाथों से अपनी कनपटी में गोली मार लेगा। ऐसी जिन्दगी से तो मौत बेहतर।...हां मौत बेहतर...ठीक है वह मरना ही पसन्द करेगा। ...मरना पसन्द करेगा...

साथ ही साथ ओझा इन कल्पित दिनों को न आने देने का उपाय भी सोचने लगा, उसे पश्चात्ताप होता कि उस मास्टर के बच्चे को उसने पहले दिन अस्वीकार करके यहां से क्यों नहीं भगा दिया। उसे उस गलती का भी एहसास होता जिसमें उसने झूठी गवाही देकर जगतिया को जेल भिजवाया था। न जगतिया जेल जाता और न वह पुलिस अफसर का हथियार लेकर डाकू बनता, न उसके खलवा का खून होता और न इस तरह जानवर बांधने की बत्तमीजी करने का साहस किसी के अन्दर पैदा होता। यह सब न होता, तो रायसाहब के बन्धुआ मजदूर भी भाग-भागकर जगतिया से न मिलते। ज्यादा अच्छा होता, अगर जगतिया को रायसाहब के पालतू आदमियों से वैसे ही खत्म करवा दिया जाता जैसे बहुत-से दूसरे लोगों को खत्म करवाया गया था। उफ, इतनी नन्ही-सी गफलत की इतनी बड़ी सजा। हे देउता, तेरा यह कैसा न्याय है। तू तो न्याय करने वालों का सरताज है। मेरी इज्जत बनाए रखो मेरे मालिक, मेरी इज्जत बनाए रखो। बीच-बीच में उसे यह भी लगता रहा जैसे देउता अब जगतिया की रक्षा कर रहा है, क्योंकि वह जब जी चाहता है खूंखार जानवरों को मारकर जहां जी चाहे खुलेआम लटका जाता है। उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ पाता। जैसे उसने कोई महाप्रेत सिद्ध कर लिया हो और ये सारे काम खुद न करके उस महाप्रेत से ही करवा रहा हो।

आखिर ओझा को एक उपाय सूझा। रायसाहब को कहकर जगतिया, मास्टर, डा० दादा, श्यामा और भागे हुए सारे बन्धुआ मजदूरों को नक्सलवादी करार दिया जाए। अखबारों में खूब प्रचार किया जाए और विधानसभाओं तथा लोकसभाओं में भी इनके आंतक के सवाल उठवा दिए जाएं। बस, फिर सरकार खुद ही इन सबसे निपट लेगी। सरकार की पुलिस और सेना की विकराल ताकत स्वयं इनको आकर खा जाएगी, इसलिए उसे और रायसाहब को रत्तीभर भी कोशिश करने की जरूरत नहीं पड़ेगी।

इस विचार के दिमाग में आते ही ओझा को बहुत खुशी हुई। वह

रायसाहब के यहां कई बार नक्सलवादियों और उनके प्रति सरकार के रवैये के बारे में बहुत कुछ सुन चुका था। सुन चुका था कि हजारों नक्सलवादी मुद्दत से जेलों में बन्द हैं। सरकार उन पर मुकद्दमे तक चलाने के लिए तैयार नहीं है। साधारण जनता भी उनकी तरफ कोई ध्यान नहीं दे रही। क्योंकि नक्सलवादी हत्याएं करते हैं, खून खराबे पर विश्वास करते हैं और आतंक फैलाते हैं। इस देश का साधारण आदमी खून खराबे से बहुत डरता है। खून का सुर्ख रंग देखने की और देखकर सामान्य रह जाने की उसकी आदत नहीं है। इसलिए सरकार खून बहाकर क्रान्ति लाने पर विश्वास करने वालों के साथ जैसा जी चाहे सख्त से सख्त व्यवहार करती है। साधारण जनता उस व्यवहार के प्रति रत्तीभर भी रुचि नहीं दिखाती।

ओझा ने झट से मन्दिर के सामने पहुंचकर देउता को दण्डवत किया, क्योंकि उसकी बुद्धि ने यही समझा कि इतना कीमती विचार देउता ने ही उसके दिमाग को बख्शा है। नहीं तो नक्सलवाद का तो इस इलाके में नामो-निशान तक नहीं है। उसने देउता से प्रार्थना की, "प्रभु! जगतिया के हाथ से दो-चार आदिवासियों और हरिजनों की हत्या करवा, ताकि सरकार को विश्वास आ सके कि वह सचमुच में ही नक्सलवादी है और उनका सफाया करना देश-हित के लिए निहायत जरूरी है।"

प्रार्थना करने के बाद वह बिना सुबह का नाश्ता किए ही रायसाहब की तरफ चल दिया। लेकिन आज की इस यात्रा में उसके हाथ में झाड़न नहीं था बल्कि चेतू के पास एक राइफल होने के बावजूद सौ गोलियां एक ही साथ छोड़ने वाली दूसरी विदेशी राइफल थी, जो उसने साथ वाले ओझा परिवार से बड़े ही आग्रह के साथ मंगवाई थी।



अंगरक्षक को साथ लेकर ओझा जब रायसाहब के बंगले पर पहुंचा, तब रायसाहब, छोटे बेटे किशोर के साथ, बड़े कमरे में गद्दों के सहारे पसरे, अपने खास आदमियों को खास निर्देश देने में व्यस्त थे।

रायसाहब के साथ भी एक विचित्र घटना घट चुकी थी। एक दिन पहले

ही सुमेरु के गोदामों से जो माल खच्चरों और मज़दूरों की पीठ पर लाद-कर चिटमौला भेजा गया था उसे जगतिया तथा उसके साथियों ने रास्ते में ही लूट लिया था। हथियार बन्द रक्षकों के हथियार भी छीन लिए गए थे और कहलवाकर भेज दिया गया था कि अगर रायसाहब अपनी और अपने परिवार की सलामती चाहते हैं तो एक हफ्ते के अन्दर-अन्दर इस इलाके को छोड़कर चले जाएं।

रायसाहब इस घटना से परेशान ज्यादा थे और गुस्से में कम, लेकिन दिखा वे ज्यादा गुस्सा ही रहे थे। आज उनके कपड़ों से इत्र की खुशबू भी नहीं आ रही थी और सदा साफ-सुथरी रहने वाले गालों पर सफेद बाल चमक रहे थे।

किशोर का विचार था कि दमकड़ी गांव के स्कूल का नया मास्टर दिनेश किसी विदेशी जासूस कम्पनी का ट्रेंड सदस्य है और आन्तरिक तौर पर जगतिया से भी मिला हुआ है। नहीं तो नौकरी छूट जाने पर भी कोई भी आदमी इस तरह के जंगली इलाके में रहकर अपना खर्च कैसे चला सकता है और बड़े-बड़े अखबारों में अपनी बे-सिर-पैर की भद्दी रिपोर्टें कैसे छपवा सकता है? ज़रूर वह अखबारों के रिपोर्टरों और सम्पादकों को मोटी-मोटी रकमें खिलाता है। हो न हो, राजधानी में भी गुप्तचरों के किसी गुप्त अड्डे के साथ उसका गहरा सम्बन्ध है। पिछले दिनों चिटमौला के डाक बंगले तक इसे कोई कार छोड़ गई थी, नहीं तो इस तरह के कंगाल और अदने आदमी का कारों से क्या सम्बन्ध।

रायसाहब भी किशोर से सहमत थे और इस बात के लिए पश्चात्ताप कर रहे थे कि अखबारों में नाम चमकने से पहले ही इस पाजी मास्टर का कोई इंतज़ाम क्यों नहीं किया। वे इस बात से भी सहमत थे कि जब से यह मास्टर इस इलाके में आया है तभी से पूरे इलाके में अफरा-तफरी मची हुई है। नाटक दिखा-दिखाकर पता नहीं इसने लोगों पर ऐसा क्या जादू कर दिया है कि बैलों जैसी जिन्दगी जीने वाले बन्धुआ मज़दूर भी अब आंखें दिखाने लगे हैं और संगठित होकर लड़ मरने के लिए मोर्चे बांधने लगे हैं। ऊपर से जगतिया के जेल से भाग आने से आग पर घी का काम किया। इससे इन चूहों के हौंसले और भी बुलन्द हो गए हैं। मर्द तो मर्द, औरतें भी काम छोड़कर भागने की हिम्मत करने लगी हैं।

इस बातचीत में दूसरे लोगों की तरफ से डा० दादा, श्यामा, बंगालन

मां, चन्देरी और खाकी निकरवाले के भी नाम उभरे, पर रायसाहब ने उनको अधिक महत्त्व नहीं दिया। इन सबको वे मुद्दत से जानते थे। जब बंगालन के साथ मुकद्दमेबाजी शुरू हुई थी तो कलकत्ता के एक कम्यूनिस्ट नेता ने बंगालन की सिफारिश की थी और उस सिफारिश की वजह से ही रायसाहब इस परिवार के प्रति नरमी का रुख अपनाते आ रहे थे। लेकिन उस नेता के साथ बंगालन के क्या सम्बन्ध हैं, इसका उनको आज तक पता नहीं चला था। उन्होंने पता लगाने की कोशिश भी नहीं की थी। हां, इस नरमी की कीमत के रूप में उन्होंने नेता से अपने एक-दो महत्त्वपूर्ण काम जरूर निकलवा लिए थे। अब उस नेता के साथ इनके काफी सम्बन्ध थे। उन्हें विश्वास था कि बंगाली परिवार को जब जी चाहे उस नेता की मदद से ही सीधे रास्ते पर लाया जा सकता है। बाकी किसी को भी वे भेड़-बकरी से ज्यादा अहमियत नहीं देते थे। हां, जगतिया और दिनेश जरूर उनके सिर का दर्द बन गए थे। दर्द भी ऐसा, जिसका कोई आसान इलाज उनको नहीं सूझ रहा था। किसी खूंखार इलाज के वे फिलहाल पक्ष में नहीं थे, क्योंकि अखबारों की वजह से प्रकाश में आए इस इलाके पर लोकसभा और विधानसभा के अधिवेशनों में विरोधियों द्वारा थोड़ा-बहुत वावेला मचाए जाने की पूरी सम्भावना थी। सवाल उठ जाने पर मुख्यमंत्री और फिर प्रधानमंत्री की नजरों से भी गिर जाने का खतरा था। आने वाले इलैक्शनों में इस बार वे विधानसभा की बजाए लोकसभा की सदस्यता पाना चाहते थे। सोचते थे कि प्रान्तीय सरकार मे तो उनका बोलबाला है ही अब केन्द्रीय में भी अपनी आवाज के लिए कोई स्थान बनाया जाए। यह तभी संभव था जब उनकी गैर-कानूनी हरकतें खुलकर दूसरे प्रान्तों की जनता के सामने आ जाएं। लोकसभा और विधानसभा मे सवाल उठते ही पूरे देश की नजर इस जंगली इलाके की तरफ लग जाएगी। आदमखोर जानवरों की खबरों ने वैसे भी लोगों का ध्यान इस ओर लगा रखा है। आदमियों के विद्रोही हो जाने की बात बाहर निकल गई तो उनकी जवाबदेही मुश्किल हो जाएगी। और अगर कुछ विद्रोही एम० पी० कुछ अखबार नवीसों को लेकर इधर निकल आए, जैसा कि अब एक रिवाज-सा चल पड़ा है तो समझिए कि बंधी-मुट्ठी पसरा हुआ हाथ बन जाएगी। फिर पता नहीं किस-किसका थूक हथेली पर लेना पड़ेगा। थूक लेकर भी पता नहीं पूरी

बात बन पाए या न बन पाए। यही सब सोचकर, रायसाहब दुविधा की आग में जल रहे थे। मास्टर दिनेश उन्हें सांप के मुंह में कोर-किरली की तरह लग रहा था और जगतिया पूछ में चुभे कांटे की तरह। किशोर और उनके दूसरे हितैषी भी इसका कोई कारगर हल नहीं सुझा पाए थे।

ओझा की अनुभवी नज़रों ने रायसाहब के मन की दशा को भांप लिया। ताड़ लिया कि आदमखोर चीता आदमियों को संगठित और सचेत देखकर भयभीत हो उठा है। इससे अच्छा अवसर कोई दूसरा नहीं हो सकता था। अवसर का लाभ उठाने के लिए ओझा खड़ा हो गया, "अगर आप इजाज़त दें तो मैं अपनी छोटी-सी बुद्धि के मुताबिक एक छोटा-सा सुझाव देना चाहता हूं।"

रायसाहब, किशोर और बाकी के लोगों की नज़रें ओझा के जुड़े हुए हाथों की तरफ उठ गईं। इससे पहले ओझा को किसी ने इस तरह गया बना नहीं देखा था। सबको वह एक चालाक भेड़िये जैसा लगता था। रायसाहब भी उसके इस रूप पर हैरान हुए। वे समझ गए कि ओझा भी उनकी तरह भयभीत और आतंकित है। रायसाहब ने उसकी पेशकश का स्वागत किया, "हां-हां, कहिए ओझा जी, आप भी हमारे परिवार के सदस्यों की तरह हैं।"

उत्साहित होकर ओझा ने अपने मन की बात कह सुनाई और साथ ही यह अन्देशा भी प्रकट कर दिया कि अगर इस समस्या को सुलझाने में ज़रा कुताही नहीं बरती गई तो, जो पानी कमर तक आ पहुंचा है, उसे सिर के उपर तक आने में भी देर नहीं लगेगी।

ओझा का सुझाव सुनकर रायसाहब की बांछें खिल गईं। सचमुच नक्सलवादियों वाला रामबाणी नुस्खा तो उनके दिमाग में ही नहीं आया था। यह नुस्खा उन्हें इतना कारगर लगा कि उन्होंने इसके बुरे नतीजों पर विचार करने की ज़रूरत ही नहीं समझी और तुरन्त कार्रवाई शुरू कर दी।

किशोर ने भी इस नुक्ते की खुलकर तारीफ की और ठीक वक्त पर ठीक सुझाव देने के लिए ओझा की भी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की।

रायसाहब ने बड़े बेटे मोहन को तुरन्त काल बुक करवाई ताकि वह राजधानी में बैठकर इस नुक्ते का प्रचार करे और मुख्यमंत्री महोदय से मिलकर पुलिस फोर्स को इस इलाके में लाने का प्रबन्ध करे।

इसके अलावा उन्होंने अपने खास आदमियों को हिदायत दी कि वे जंगली रास्तों पर कड़ी निगरानी रखें। जगतिया का कोई आदमी या भागा हुआ कोई बन्धक मजदूर यहीं भी दिखाई दे तो उसको गोली से उड़ा दें और उसकी लाश का कीमा बनाकर सोन नदी में फेंक दें।

कारखानों, बागों और खेतों में भी उन्होंने सख्त पहरे बिठा दिए और माल लाने तथा ले जाने वाली पार्टियों के साथ भी आधुनिक हथियारों से लैस संरक्षकों का बन्दोबस्त कर दिया। इसके अलावा दिनेश को लेकर भी ऐसी योजना बनाई जाने लगी जिससे सांप तो मर ही जाए पर लाठी को खरोंच तक न आए।

● ●

रायसाहब के यहां से लौटता हुआ ओझा अपने आपको काफी आश्वस्त अनुभव कर रहा था। रायसाहब को अपनी ही तरह उद्विग्न देखकर उसको काफी तसल्ली मिली थी। इस पर भी उसको पक्का यकीन हो गया था कि पुलिस या फौज के हस्तक्षेप करते ही ये सारी खुराफातें धुएं के बादलों की तरह उड़ जाएंगी। इलाके के इन अनपढ़-गंवार आदिवासियों की तो बिसात ही क्या है बड़े-बड़े अखबारों के संवाददाता और सम्पादक भी, यहां तक कि वामपंथी शक्तियों के पैरोकार नेता भी अपना रुख बदलकर, इलाके की शान्ति को भंग करने और खून-खराबा करने के जुर्म में नक्सलवादियों को कड़ी से कड़ी सजा देने की मांग करने लगेंगे। जगतिया और मास्टर दिनेश के खत्म होते ही इलाके में फिर पहले जैसे दिन लौट आएंगे। या तो रायसाहब होंगे या वह खुद, तीसरी कोई शक्ति कहीं देखने को भी नहीं मिलेगी। तीसरी शक्ति होगी भी तो मात्र देउता की। लेकिन देउता तो उनके अपने हैं। युगों-युगों से, पीढ़ी दर पीढ़ी, पैतृक विरासत की तरह अपने। इस कार्य के सम्पन्न होते ही इस बार विशेष यज्ञ का आयोजन किया जाना चाहिए और उस यज्ञ में नरबलि की भी व्यवस्था की जानी चाहिए, चाहे वह गुप्त रूप से ही क्यों न की जाए।

खुशी और उमंग में ओझा की चाल काफी तेज थी। विचारों के

आवेग में कभी तो वह दौड़ने-सा लगता था। ग़ुस्से का ज्वार ज्यादा बढ़ा तो उसने चेतू के सामने उसे अभिव्यक्त करना चाहा। उसकी चाल मंद पड़ गई और चेतू की बगल में आ गया तो वह गर्दन मरोड़कर उसकी तरफ उन्मुख हुआ, "देखो, दो-चार दिन में पुलिस यहां आ जाएगी। रायसाहब के हाथ बहुत लम्बे हैं, मुख्यमंत्री उनके बड़े लड़के मोहन का कहना नहीं टालेंगे। उस वक्त तुम्हारा भी यह फर्ज होगा कि तुम पुलिस की सहायता करो। तुम जंगल के कोने-कोने से परिचित हो। जगतिया और उसके साथी किस-किस गुफा में छुपे हो सकते हैं, यह भी तुमसे बेहतर कोई दूसरा नहीं जानता। तुम्हारी कोशिश यही रहनी चाहिए कि शत्रु पक्ष में से एक भी जिन्दा न बचने पाए। हालात कुछ इस तरह के बनें कि पुलिस को उन्हें मारना ही पड़े। जो आदमी जेल से एक बार भाग सकता है वह दूसरी बार भी भाग सकता है। पिंजरा तोड़कर भागा जानवर बहुत खतरनाक होता है। उसे दुबारा पिंजरे में लाना इतना आसान नहीं होता। आसान बस यही होता है कि उसे जिस तरह से भी हो, मेरा मतलब है साम, दाम, दण्ड, भेद सभी तरीकों से खत्म कर दिया जाए।"

पर चेतू के चेहरे से ओझा को लगा जैसे वह उसके कथन और हुक्म को मानने के पक्ष में नहीं है। यह लगना था भी ठीक। खलवा की आकस्मिक मौत के बाद चेतू के दिल में एक दहशत-सी बैठ गई थी। इस दहशत के प्रभाव में उसे जगतिया की ताकत के सामने ओझा की ताकत बहुत अदनी और बौनी लगने लगी थी। लगने लगा था कि जगतिया को ओझा की डाकनियों से कहीं बड़ी डाकनियां सिद्ध हैं। नहीं तो वह ओझा की नाक के ठीक नीचे इस तरह खाल उतरे जानवर लटकाने में कैसे सफल हो जाता। हालात देखकर उसके मन में, किसी न किसी बहाने, ओझा से अलग होने की बात जाग उठी और वह मौके की तलाश में था। इस वक्त उसने जो साहस अर्जित किया उसने उसके मुह से केवल इतना ही उगलवाया, "पुलिस अपने आप ही बहुत बड़ी ताकत है, उसको मेरे जैसे अदने आदमी की क्या जरूरत पड़ेगी?"

दोनों अंगरक्षकों ने आज तक कोई बात अस्वीकार करने या काटने की हिम्मत नहीं की थी। चेतू की यह विनीत भाषा भी ओझा को पसन्द नहीं आई। उसके रक्त ने उसे आपे से बाहर होने के लिए उकसाया,

पर अवसर देखकर उसने अपने आपको संयत कर लिया, "पुलिस अपने आप में बहुत बड़ी ताकत तो है पर उसे जंगल के गुप्त स्थानों का तो पता नहीं।"

"गुप्त स्थानो का तो आपको भी बहुत अच्छी तरह से पता है, आप भी तो बहुत बड़े जंगली शिकारी रहे हैं अपनी जवानी के दिनों में।"

चेतू की चर-चर करती जबान ने अब् ओझा का संयम तोड़ दिया। वह एक भद्दी-सी गाली देकर चेतू को फटकारने ही जा रहा था कि सहसा किसी चट्टान के पीछे से एक कड़कती हुई आवाज़ गूंजी, "हाल्ट, खबरदार जो एक भी कदम आगे बढ़ाया! वहीं जम जाओ!"

ओझा ने कन्धे की राइफल को उतारकर सीधा करना चाहा पर बायीं चट्टान के पीछे से धाएं की आवाज़ हुई और गोली चटाक से ओझा की बाज़ू में आ घुसी।

एक गहरी गुर्राहट के साथ ओझा गोली लगे बाज़ू को छाती और दूसरे हाथ के बीच दबाकर झुक गया और उसके हाथ की राइफल छिटक-कर दूर जा गिरी।

ओझा की हालत देख चेतू राइफल फेंक, दोनों हाथ ऊपर उठाकर खड़ा हो गया। जब कुछ देर कोई हलचल होती दिखाई नहीं दी तो वह सिर पर पांव रखकर भाग निकला। पर थोड़ी ही दूरी पर चट्टानों के पीछे से चार आदमियों ने निकलकर उसे दबोच लिया। "नहीं-नहीं! मैंने कुछ नहीं किया! मैं निर्दोष हूं!"···चेतू अपने आपको छुड़ाने की कोशिश करने लगा।

एक आदमी ने जल्दी से उसके मुंह में कपड़ा ठूस दिया और उसके जाल में फंसे कबूतर की तरह फड़फड़ाते जिस्म को घसीटते हुए चारों आदमी चट्टान के पीछे ओझल हो गए।

इधर ओझा थोड़ा संभला तो उसे अपने चारों ओर मौत नाचती दिखाई दी। वह भागकर एक पेड़ की ओट में जा छुपा और वहीं से पूरी शक्ति लगाकर दर्द मिश्रित आवाज़ में चीखा, "जगतिया बेटा, मुझे मत मारो! मेरे कोई सन्तान भी नहीं है जो पीछे से मेरा घर-बार संभाल लेगी! मैं तुम्हारे समर्थकों में से एक हूं, मैं तुम्हारी हर तरह से मदद करने को तैयार हूं। मुझे मत मारो!"

आवाज़ के जवाब में जगतिया चट्टान के पीछे से वनमानुष की तरह

कूदकर रास्ते के बीच आ खड़ा हुआ। उसने पत्थरों के बीच अटकी ओझा की राइफल उठाई और उसे कन्धे के हवाले किया। अब उसके चेहरे पर क्रूरता आ चिपकी और वह दांत किटकिटाकर गुर्राया, "तुम्हारी झूठी गवाही की वजह से मैं पूरे तेरह महीने जेल में सड़ता रहा हूं। जेल में मुझ पर क्या-क्या जुल्म नहीं ढाए गए उस कुत्ते रायसाहब के इशारों से। नहीं, अब तू मेरे हाथ से नहीं बच सकता। कमीने, बुला अपनी डायनों, डाकनियों, प्रेतात्माओं और चुड़ैलों को, जो तुझे मरने से बचा सकें। पुकार अपनी सिद्धियों और दैवी ताकतों को, जो इन गोलियों में बारूद की जगह भुस भर दें। पुकार कमीने पुकार, यह तेरी आखिरी पुकार है।"

ओझा को गवाही की तो याद ही नहीं आ रही थी। उसे तो दूसरी ही बातें याद आ रही थीं, जो इस गवाही से कहीं ज्यादा बड़ी और ज़ालिम थीं। जिनमें ओझा के पहाड़ जैसे पाप तथा ज्वालामुखी जैसी निर्ममताएं छुपी थीं। अब ओझा की आवाज पस्त होकर घिघियाने लगी, "जगतिया बेटा, तुम जितना धन चाहो मैं तुम्हें देने के लिए तैयार हूं, तुम मुझे मत मारो। इसके अलावा मैं तुम्हें रायसाहब के ऐसे रहस्य बताऊंगा जो मेरे सिवा कोई दूसरा नहीं जानता और जिनसे उसका शैतानी रूप बिलकुल बेनकाब हो जाएगा।"

जगतिया ठहाका मारकर हंस पड़ा, "मुझे इस वक्त सिर्फ तुम्हारी जान चाहिए, जान। उस जान के बदले अगर तुम मुझे तीनों लोकों का राज भी दो, तो वो भी मुझे मंजूर नहीं है।"

जगतिया का क्रूर फैसला सुनते ही ओझा पेड़ की ओट को छोड़ नीचे की तरफ भागा ताकि थोड़ी-सी दूरी पर दिखाई देने वाली झाड़ियों में पहुंचकर मौत की आंखों से ओझल हो सके। लेकिन धाएं-धाएं की दो आवाज़ों के साथ घाटियां एक बार फिर गूंज उठीं और ओझा एक पल के लिए स्थिर होकर पछाड़ खाकर गिर पड़ा और ढलान पर लुढ़कता हुआ नीचे तक पहुंचकर दो पेड़ों की सन्धि के बीच अटक गया।

हाथ का इशारा पाते ही चट्टानों के पीछे से दस-बारह आदमी जगतिया के इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गए। चार के पास रायसाहब के आदमियों से हासिल की गई बन्दूकें थीं, बाकी के पास तीर-कमान, भाले, कुल्हाड़ियां और दरातियां। अब दो बढ़िया राइफलों के साथ बहुत-सी गोलियां और हाथ लग गई थीं। इस तरह के असले की उनको सख्त जरूरत थी।

चेतू के गले की पेटी उतारकर उसे जिन्दा छोड़ दिया गया—इस समझ के साथ कि वह भी उन जैसा ही गरीब और सताया हुआ आदमी है, उसे मजबूरन, पापी पेट के लिए ओझा का हुक्म बजाना पड़ता है, उसका कोई दोष नहीं।

चेतू जगतिया के पैरों पर गिर गया, जैसे उसने अपने सब पाप कबूल कर लिए हों। साथ ही उसने एक वफादार साथी की तरह जगतिया के साथ रहने की प्रार्थना की जिसे बिना किसी संकोच के स्वीकार कर लिया गया। जगतिया को बहुत तेज़ निशानेबाजों की सख्त ज़रूरत थी।

इसके बाद ओझा की लाश को मारे गए शिकार की तरह हाथ-पैर बांधकर लकड़ी पर उठा लिया गया और सब के सब झाड़ियों और चट्टानों में से होते हुए जंगल की तरफ चले गए।

दूसरे दिन सूरज निकलने से बहुत पहले, ओझा के घर के पास के पेडों पर, अब जानवरों की जगह ओझा की लाश लटक रही थी और उस लाश से काफी हटकर भीड़ छोटे-छोटे समूहों में बंटी कानाफूसी करने में मशगूल थी।

● ●

थोड़े दिन बाद ही नीली बसों और खाकी जीपों का बहुत बड़ा काफिला चिटमौला के डाक बंगले के सामने आकर खड़ा हो गया। अनेक बड़े अफसरों से लेकर साधारण नौसिखिये रंगरूटों सहित सैकड़ों आदमी। सब के सब आधुनिक हथियारों और संचार के आधुनिकतम उपकरणों से लैस, जैसे किसी छोटे से द्वीप पर एक छोटा-सा आक्रमण किया जाना है। और उस आक्रमण के लिए सेना की सारी ज़िम्मेदारियां पुलिस को सौंप दी गई है।

डाक बंगले में पहले से ही इस काफिले के स्वागत की पूरी तैयारियां की गई थीं। सबसे पहले, सब के गलों के लिए, पहाड़ी फूलों का एक-एक खूबसूरत हार, इसके बाद खाने वालों के लिए खाने की और पीने वालों के लिए पीने की उम्दा चीज़ों के अलावा बड़े अफसरों के लिए मनबहलाव के साधनों का भी पूरा इंतज़ाम।

पूरा विश्राम करने के बाद काफिला अब जंगली इलाके की ओर बढ़ा। भारी सामान खच्चरों पर और हल्का सामान बन्धुआ मजदूरों की पीठों पर। रास्ता दिखाने वाले रायसाहब के खास आदमी और पुलिस अफसर घोड़ों पर चले और साधारण सिपाही तथा बन्धुआ मजदूर पैदल। अफसरों के हाथों में खुले हुए पिस्तौल और सिपाहियों की संगीनियां राइफलों के घोड़ों पर। जैसे किसी भी वक्त किसी बहुत बड़े मुकाबले के होने का पूरा यकीन हो और उसके लिए हर पल चौकस रहने का खास हुक्म हो।

रास्ते में जो भी खेत में काम करता या राह चलता आदमी मिला, पुलिस ने उसी को धर दबोचा। सवालों का जवाब सही-सही मिल गया तो ठीक नहीं तो हथकड़ी लगाई और भेड़-बकरियों की तरह साथ हांक लिया। डाकुओं को पनाह देने वाले लोगों की पुलिस को सबसे पहले तलाश थी।

बेगमस्त और भोले-भाले लोग जिन्होंने आज तक पुलिस की वर्दी तक के दर्शन नहीं किए थे, बिना किसी विरोध और हुज्जत के साथ होते गए। शायद यही सोचकर कि हमारे देश पर किसी दूसरे देश ने हमला बोल दिया है, हमलावर फौजें इस इलाके तक बढ़ आई है और ये वर्दी वाले हथियारबन्द लोग उन्हीं हमलावर फौजों के लोग हैं।



सूरज नरम पड़ने से पहले ही काफिला दमकड़ी गांव तक पहुंच गया और वहां जाकर रुक गया जहां बल्लियों के आसपास अब जानवरों की बिखरी हुई हड्डियां ही रह गई थीं। वे भी शायद इसलिए कि जगतिया के डर से किसी ने उनको हाथ लगाने की हिम्मत नहीं की थी। नहीं तो ये हड्डियां आदिवासियों के लिए सोने से भी अधिक कीमती थी।

काफिले के पहुंचने से पहले ही खबर पहुंची तो गांव के अधिकांश लोग घर-बार छोड़ खेतों और गारों की तरफ निकल गए थे। जो घर-बार देखने के लिए बच रहे थे, वे कपाट बन्द करके अन्दर दुबक गए थे।

सबसे पहले डा० दादा को तलब किया गया, लेकिन जब दवाईखाने

के बाहर ताला लगा मिला तो दो सिपाही भेजकर सरपंच को बुलाया गया। सरपंच हाथ जोड़कर हाजिर हो गया। कुछ देर सरपंच से कोई गोपनीय गुफ्तगू की गई फिर एक-एक करके सब घरों की तलाशी शुरू हुई। जिस आदमी और लड़के पर रायसाहब के आदमियों और सरपंच ने उंगली रखी, उनको हथकड़ी लगाकर, पहले पकड़े आदमियों में मिला लिया। जिसने फूं-फां की उसकी खुलेआम मुरम्मत कर दी गई और एक हाथ पर हथकड़ी लगाने के बजाए दोनों हाथ पीठ पीछे जकड़ दिए गए ताकि डाकुओं के आतंक से भी यहीं बड़े आतंक का एहसास लोगों को करा दिया जाए।

इसके बाद काफिला जब स्कूल की तरफ बढ़ा। आगे-आगे बन्दी बनाए गए लोग, उनके पीछे घोड़े, घोड़ों के पीछे सामान लदी खच्चरें और बन्धुआ मजदूर, और अन्त में सिपाहियों के पैदल दस्ते।

काफिला जब स्कूल के अहाते में पहुंचा तो दिनेश कोठरी के बाहर कुर्सी निकालकर, अपने उपन्यास का, कई दिनों से अधूरा पड़ा एक अंश पूरा करने में तल्लीन था। तब तक उसे काफिले की भनक तक महसूस नहीं होने दी गई जब तक घुड़सवारों ने हथियार तानकर उसे चारों तरफ से घेर नहीं लिया।

एक अफसर घोड़े से उतरकर आगे आया और फाइल के पन्ने उलट-पलटकर अपने आप से ही बोला, "अच्छा, तो ये है मास्टर दिनेश।"

इसी बीच घोड़ों से उतरकर दो-तीन और अफसर आगे आ गए और वे दिनेश को गौर से देखने लगे। एक पतली-सी देह वाला, बिलकुल मासूम-सा लगने वाला कच्ची-सी उम्र का साधारण-सा लड़का। उनकी हैरानी का ठिकाना न रहा और वे एक-दूसरे की तरफ देखकर मुस्करा उठे।

किसी नक्सलवादी नेता की उनके जहन में बिना किसी आधार के गढ़ी हुई कोई और ही तस्वीर थी। बड़ी-बड़ी मूंछें, भारी-भरकम शरीर, अंगारों की तरह दहकती लाल आंखें, कन्धों पर लटकते विदेश में बने आधुनिक हथियार, गले में पहनी चमड़े की पेटी में लगे गोलियों के मैगजीन तथा हथगोले, पैरों में घुटनों तक पहने हुए रबड़ के जूते, सिर पर फौलादी टोप और लाल रंग के झोले में छपे हुए कुछ लाल रंग के पर्चे तथा थोड़ा-सा खाने का सामान। यानि कि पूरी की पूरी एक जालिम

छापामार की तसवीर जो अखबारों की खबरों के आधार पर किसी भय और आतंक की स्याही से उनके मानस पटल पर बन गई थी।

दिनेश भी चुपचाप कुर्सी पर बैठा उन सब को घूरता रहा, जैसे यह सब उसे एक मजाक लग रहा हो और वह एकदम निर्णय न ले पाया हो कि इस मजाक का क्या जवाब दे।

पहले वाले अफसर ने पैन जेब से निकालकर, दूर से ही पहला सवाल किया, "अच्छा तो आप हैं नक्सलाईट नेता मिस्टर दिनेश सिंह ?"

अब दिनेश की समझ में सारी स्थिति आ गई और वह खड़ा हो गया, "जी नहीं, नक्सलाईट नेता नहीं और न ही सिंह, सिर्फ दिनेश, यहां के लोग मुझे मास्टर दिनेश कहते हैं।"

"कहां के रहने वाले हो ?"

"पंजाब का।"

"माता-पिता का नाम ?"

"वे दोनों ही अब इस दुनिया में नहीं है।"

"जो दुनिया में नहीं हैं उनका नाम तो कुछ होगा ही ?"

"पिता का नाम श्री सोमनाथ शर्मा और माता का नाम···"

"माता के नाम की कोई ज़रूरत नहीं है।" दूसरे, शायद पहले से बड़े अफसर ने हाथ हवा में छटकारकर बीच में दखल दिया तो दिनेश के होंठों पर आया मां का पवित्र नाम अपवित्र होने से बच गया। इस बात से उसने राहत महसूस की।

"इस इलाके में किसलिए आए हो ?" पहले अफसर ने फिर सवाल किया।

"सरकारी स्कूल में मास्टर बनकर आया हूं।"

रायसाहब के एक आदमी ने बीच में स्पष्टीकरण दिया, "इस वक्त तो यह सरकारी नौकरी से बरतरफ किया हुआ आदमी है सर।"

"अच्छा।" पूछताछ कर रहे अफसर ने हैरानी जाहिर की और फिर सवाल किया, "क्यों, ये साहब ठीक कह रहे हैं ?"

"जी, ठीक कह रहे हैं ?"

अफसर की आवाज़ थोड़ी सख्त हुई, "तो फिर इस वक्त तुम इस इलाके में क्या कर रहे हो ?"

"बस, यूं ही, समाज सेवा के इरादे से रह रहा हूं।"

"हूं ऽ ऽ ऽ, समाज सेवा। लोगों का खून करना, राह चलते राहगीरों को लूटना और शरीफ लोगों को जान से मारने की धमकियां देना समाज सेवा है ?" अफसर ने अंतिम शब्द–काफी लम्बे करके और ज़ोर से बोले।

रायसाहब के आदमी ने व्यंग्य किया, "नक्सलाईट समाज सेवा इसी को कहते है।"

इस व्यंग्य को सुनकर दूर खड़े सिपाही दबी-दबी-सी हंसी हंस पड़े।

इस सब ने दिनेश को अन्दर तक हिला दिया, "लोगो का खून, राह चलते रहगीरो को लूटना और शरीफ लागो को धमकियां-देना, लगता है लोग मुझे गलती से जगतिया समझ रहे है।"

"हूंऽऽऽ, जगतिया समझ रहे है। हथकड़ी लगाओ इस घुमक्कड़ को।" बोलकर अफसर ने तपाक से फाइल बन्द कर दी।

हुक्म पाते ही दो सिपाही आगे बढ़े और दिनेश के-दोनों हाथ पीठ पीछे मरोड़ा खाकर हथकड़ी मे कैद हो गए।

खाकी निकर वाला, सगुआ और करियाला पार्टी के कुछ युवा सदस्यों के साथ कुछ बिलकुल अपरिचित चेहरे देखकर दिनेश पल-भर में ही समझ गया कि अब उसका वास्ता केवल रायसाहब के ही साथ नही है बल्कि सरकार के साथ भी है। उस सरकार के साथ जिसे जनता ने अपनी इच्छा से, भारी बहुमत देकर वोटों के ज़रिये चुना है। अब अभावग्रस्त लोगों के अभाव तथा गरीब लोगों की गरीबी दूर करने तथा ला एण्ड आर्डर को कायम रखने की पूरी ज़िम्मेदारी इसी सरकार पर है।

दिनेश को एक तरह से इस नये बदलाव से खुशी ही हुई। वह यही तो चाहता था कि सरकार सीधा हस्तक्षेप करे, इलाके मे आकर देखे कि जिन आदिवासियों के जीवन-स्तर को सुधारने के लिए सरकार ने करोड़ों रुपयों की योजनाएं बनाई है, उनका व्यावहारिक रूप क्या है। इसलिए, गिरफ्तार होने के अपमानजनक ढंग से भी उसे बहुत ज्यादा शिकायत नहीं थी।

अब काफिला स्कूल से सीधा सुमेरु की तरफ चल दिया। रायसाहब उसके इंतज़ार में थे। इधर दमकड़ी गांव की औरतें, बूढे और बच्चे मकानो की छतों पर चढ़कर दूर से ही काफिले को जाते देखने लगे। उन्हें भी प्रतीक्षा थी कि कोई आकर उन्हें बताए कि मास्टर जी के साथ पुलिस

ने क्या सलूक किया।

● ●

पुलिस अपने पूरे दलबल के साथ एक रात रायसाहब की मेहमान रही। उस रात यही लगता रहा कि रायसाहब के यहां बहुत बड़ा जश्न हो रहा है।

ऐसे जश्न आमतौर पर तब होते थे जब रायसाहब इलेक्शन जीतते थे, या फिर तब जब राजधानी से कुछ जाने-माने नेता जंगली आनन्द उठाने के लिए इस इलाके में आते थे। बाप-दादों के जमाने मे इस तरह के जश्न तब होते थे जब अंग्रेज अफसरों की कोई पार्टी शिकार खेलने के लिए विशेष रूप से आमंत्रित होती थी। इतिहास था इन जश्नों का। लेकिन इस इतिहास में यह पहली मरतबा हुआ था कि इस बार जश्न पुलिस के लिए हो रहा था। पुलिस को बहुत अदना चीज समझने वाले रायसाहब आज उसको खुश करने के पूरे सामान मुहैया करने के लिए अपने आपको मजबूर पा रहे थे।

एक तरफ से उठती हुई पहाड़ी मुर्गे भूने जाने की मसालिया खुशबू, दूसरी तरफ बोतल पर बोतल खुलने से फैलने वाली मादक गन्ध, तीसरी तरफ नोच-खरोच के लिए हाजिर बन्धुआ मजदूरिनों के गठीले बेबस जिस्म और चौथी तरफ लाल से लेकर नीले तक, हर रंग के नोटों की पंखिया फड़फड़ाहट। इसके इलावा नदी का किनारा और धमनियों में चिंगारियां सुलगा देने वाली पहाड़ की जंगली हवा। गरज यह कि आदमी की हवसों को तृप्त करने वाला पूरा का पूरा सामान मौजूद। बदले में एक अदना-सा काम। सरकारी हथियारों की गोलियों और विद्रोही हो गए चन्द जिस्म।

● ●

सुबह होने से पहले ही गुप्तचर ने रायसाहब को सूचना पहुंचाई,

"जनाब ! मुर्दा जानवरों को खाने वाले पहाड़ी गिद्ध आज ठीक सुमेरु के ऊपर मंडरा रहे हैं।"

रायसाहब ने यह सूचना पुलिस को भेज दी।

फिर सूरज की पहली किरण के साथ ही नई सूचना मिली, "जनाब ! सोन नदी की तरफ उतरने वाले चौड़े रास्ते के किनारे वल्लियों पर भेड़ियों के दो खाल रहित जिस्म लटका दिए गए हैं और एक भेड़िए की छाती पर चिपके कागज़ पर लिखा है, कल इसी जगह पर रायसाहब और उसके बेटे किशोर की लाशें लटकाई जाएंगी।"

इस सूचना को लेकर रायसाहब खुद पुलिस के पास पहुंचे। पर रात के जगराते के कारण पुलिस अभी गहरी नींद में सो रही थी। बन्धुआ औरतें भी जहां कहीं जगह मिली थी, जमीन पर ही बेखबर पसरी हुई थीं। उनके चेहरों और जिस्मों के लाल धब्बे अब नीले पड़ चुके थे। कौए खुली खिड़कियों से होकर अन्दर घुसते थे और कोई अधनुची हड्डी उठाकर आंखों से ओझल हो जाते थे। एक कुत्ता कौए के मुंह से गिरी हड्डी को पंजों में दबोचे जबड़ों से तोड़ने की कोशिश कर रहा था और थोड़ी दूरी पर बैठा एक छोटा कुत्ता ललचाई नज़रों से उसे देख रहा था। यह सब देख रायसाहब वापस लौट आए और बेचैनी से पुलिस के जागने की प्रतीक्षा करने लगे।

जब पुलिस के जाग जाने की सूचना मिली तो इस बार रायसाहब ने खुद न जाकर अपने एक खास आदमी के जरिए पुलिस को दोनों सूचनाएं भिजवाईं और साथ ही भेड़िए की छाती से उतरवाया गया कागज़ भी प्रमाण रूप में पुलिस को भेज दिया।

कागज़ हाथ में आते ही बड़ा अफ़सर मज़ाक की हंसी हंसने लगा। दूसरे अफसर भी उस कागज को एक-दूसरे के हाथों पहुंचाकर चुहल करने लगे जैसे कागज पर कोई चुटकला लिखा हो जिसे पढ़कर किसी के लिए भी हंसी रोक पाना असंभव हो जाता हो। पर कागज़ लाने वाले आदमी को हंसी नहीं आई क्योंकि वह जगतिया की हिम्मत को पहचान चुका था। ओझा जैसे तांत्रिक का खून करने की हिम्मत जगतिया ने की थी।

बड़े अफसर के हुक्म से अब पुलिस ने तैयार होना शुरू किया। बढ़िया किस्म के खुशबूदार साबुनों को बेरहमी से घिस-घिसकर खुशबूदार गर्म पानी से स्नान। स्नान के बाद बेहतरीन किस्म के इत्र, क्रीम और पाउडर।

बाल ठीक करने के लिए हज्जाम और जूते चमकाने के लिए पॉलिश वाले। जिन पुलिस वालों को मालिश का शौक हो या कानों से मैल निकलवाने की लत हो, उनके लिए भी एक छोटे-से कमरे में अलग से इंतजाम। और इसके बाद हलुआ, पटांडे और बुसारू का बढ़िया किस्म का पहाड़ी नाश्ता।

इस सबसे निपटने के बाद आखिर सभी अफसरों द्वारा मिलकर बनाई गई योजना के मुताबिक एक छोटे अफसर के साथ दस सिपाही रायसाहब के बंगले की सुरक्षा के लिए छोड़ बाकी की पूरी की पूरी फोर्स जंगल की तरफ कूच कर गई।

सबसे पहले फोर्स उस जगह पर पहुंची जहां रात के अंधेरे का सहारा लेकर कोई गुस्ताख खाल उतरे भेडिए लटका गया था। वहां से प्रशिक्षित कुत्तों की मदद लेकर फोर्स लटकाने वालों की तलाश में निकली। लेकिन कुत्ते नदी के किनारे आकर थम गए और दूसरे किनारे जाकर भी इधर-उधर की झाडियां सूंघकर रह गए।

इसके बाद पुलिस ने जंगल के पानी के स्रोतों पर कब्जा जमाने का फैसला किया, इस समझ के साथ कि दुश्मन भोजन तो जंगली कंदमूल और शिकार किए जानवरों के मांस के रूप में हासिल करता रहेगा पर पानी के लिए उसे या तो जंगल का आश्रय छोड़ नदी के खुले किनारे पर आना पड़ेगा या इन जलस्रोतों पर। किसी जलस्रोत पर कोई एक भी नक्सलवादी हाथ लग गया तो बस फिर समझिए कि न रहेगा बांस और न बजेगी बांसुरी।

कुछ बड़े-बड़े जलकुण्डों पर कब्जा जमाने और नदी के किनारों की देख-रेख के लिए कुछ दूरबीन धारी सिपाही तैनात करने के बाद पुलिस ने जंगल के कुछ हिस्सों की छान-बीन भी की। पर इस छान-बीन में उसे जगतिया या उसके किसी साथी की किसी भी प्रकार की खोज-खबर पाने में कोई सफलता नहीं मिली। उलटे एक नई खबर ने पुलिस को और भी चौकस कर दिया कि कुछ लोग एक-एक गांव घूमकर आदिवासियों को पुलिस और रायसाहब के खिलाफ हथियार उठाने के लिए भड़का रहे हैं। सरकार पर भी आरोप लगा रहे हैं कि सरकार रायसाहब की काली करतूतों पर पर्दा डालने के लिए बेकसूर लोगों पर अत्याचार करवा रही है। कुछ जगह पेड़ों पर हाथ से लिखे इश्तिहारों में लिखा पाया गया, राय-

गाहय पुलिस के ज़रिए इलाके में आई जागृति को कुचलने का षड्यंत्र रच रहे हैं, जागृत लोगों को संगठित होकर इस षड्यंत्र का मुकाबला करना चाहिए और जान को हथेली पर रखकर जागृति को फिर से बेहोशी में बदल देने की कोशिश करने वाली काली ताकतों को ईंट का जवाब पत्थर से देना चाहिए।

मजबूर होकर पुलिस को अपनी एक टुकड़ी जनता को उत्तेजित करने वाले इस प्रचार को बन्द करवाने के लिए बस्तियों की तरफ भी भेजनी पड़ी, इस सख्त हुक्म के साथ कि ऐसा भौंडा प्रचार करने वालो को फौरन गिरफ्तार किया जाए और अगर कहीं हिंसा देखने को मिले तो वहां पर गोली चलाने में भी रत्ती-भर संकोच न किया जाए।

लेकिन पुलिस बस्तियों मे प्रचार करने वाले इन प्रचारकों को पकड़ने में भी नाकाम रही। उसे बस्तियों में रहने वाला हर मर्द, औरत और बच्चा प्रचारक लगा। वह किस-किसको गिरफ्तार करती। इसके अलावा अधिकांश लोग रायसाहब के खेतों, बगीचों और कारखानों में काम करने निकले हुए थे; उनसे पूछताछ करना आसान काम नहीं था।

एक रहस्य पुलिस के सामने यह भी खुला कि पूरे इलाके मे, मुश्किल से ही कोई ऐसा घर होगा जिसके किसी न किसी सदस्य ने अपने शरीर और मन पर बन्धुआ मज़दूर होने का कलंक न ढोया हो। एक आदमी या औरत बूढे हो गए तो उसकी जगह दूसरे जवान लड़के या लडकी ने ले ली। फिर दूसरे की जगह तीसरे ने और तीसरे की जगह चौथे ने, इस तरह कई परिवारों में तो बन्धुआपन का यह सिलसिला पीढ़ी दर पीढ़ी चलता रहा। इसके बावजूद मजदूरों के बाप-दादाओं ने रायसाहब के बाप-दादाओं से जो रुपये उधार लिए थे उनका सूद तक भी अभी तक चुकता नहीं हुआ था। औरतों की दशा तो और भी खराब थी, उन्हें मज़-दूरी करने के साथ-साथ बाल-बच्चे और गृहस्थी भी संभालनी पड़ती थी। पिछले दिनों ऊपर के आंचल से एक सड़क निकाली गई थी। तब इन्हीं बन्धुआ मर्द-औरतों को एक-दूसरे ठेकेदार को सौंपकर रायसाहब ने हज़ारों रुपये अपनी तिजोरी में डाले थे। बन्धुआ मजदूरों को मिलता रहा था तन के ज़रूरी हिस्सों को ढकने के लिए खादी ग्रामोद्योग द्वारा तैयार किया हुआ मटमैला खद्दर और पेट भरने के लिए सस्ते चावलों और मोटे अनाज के आटे से बना जानवरी खाना। बस यहीं वे ऊपर से अपनी किस्मत में

लिखवाकर लाए थे और किस्मत को कौन बदल सकता है ? पुलिस की किस्मत में भी यह लिखा था कि वह इन निहत्थे और मजलूम लोगों से आकर टकराए और वह टकरा रही थी। टकरा-टकराकर पछता रही थी, क्योंकि उसे लग रहा था जैसे वह केंचुओं और चींटियों पर अपनी शक्ति का अपव्यय कर रही है। पर फिर भी, पुलिस की इस टुकड़ी को कुछ न कुछ तो दिखाना ही था। बड़े अफसरों को खुश करना था। इसलिए उसने सांझ तक दस-बारह मासूम औरतों और मर्दों को गिरफ्तार किया और अपने नये अड्डे पर लौट आई।

नया अड्डा था, जंगल के ही बीचोंबीच बना सरकारी रैस्ट हाउस। बाकी की रातों को जश्न मनाने के लिए पुलिस को अब यहीं ठहरना था। जो सुख-सुविधाएं रायसाहब ने सुमेरु में मुहैया की थी, वे सब की सब इस जंगली रैस्ट हाउस में भी मुहैया की गईं। अफसरों के लिए तो यह कोई नई बात नहीं थी लेकिन नये रंगरूट खुश थे। इस तरह की आवभगत और मेवा उन्होंने जिन्दगी में पहली बार भोगी थी।

सप्ताह-भर पुलिस का इसी तरह दिन में खोज-बीन, पकड़-धकड़ और रात को जश्नबाजी का दौर-दौरा चलता रहा। आखिर एक शाम एक जल कुंण्ड पर चुपके से पानी लेने आए जगतिया की टोली के एक सदस्य चेंगू को पकड़ने में पुलिस कामयाब हो गई। मामूली-सी डांट-फटकार के बाद सरकारी गवाह बना लिए जाने के लालच में आकर उसने सब कुछ उगल दिया। जगतिया के संगठन की एक कमजोर कड़ी पुलिस के लिए वरदान बन गई।

अब पुलिस ने एक पल भी खराब करना मुनासिब नहीं समझा। जिन दो गुफाओं में जगतिया और उसके साथी पनाह लिए बैठे थे, बड़े ही योजनाबद्ध तरीके से उनको जा घेरा।

जगतिया को इस बात का ज्ञान तब हुआ जब पूरी मोर्चाबन्दी कर लेने के बाद पुलिस ने बैटरी से चलने वाले लाउडस्पीकर से वार्निंग दी कि, "जगतिया, तुम पूरी तरह से घिर चुके हो, अब तुम्हारा बचकर निकलना मुश्किल है। बेहतरी इसी में है कि अब तुम अपने साथियों के साथ गुफा से बाहर निकल आओ। हम तुम्हें विश्वास दिलाते हैं कि तुम्हें मारेंगे नहीं। पकड़कर कानून के हवाले कर देंगे। हो सकता है कानून तुम्हें मुआफ कर दे।"

लेकिन उत्तर में गुफा के अन्दर से गोली चली और एक सिपाही के गाल तथा कान को छेदती हुई एक खच्चर की पीठ में जा धंसी। खच्चर जोर से हिनहिनाकर भाग खड़ा हुआ लेकिन खच्चर की पीठ पर लदे सामान को वापस लाने के लिए कोई सिपाही मोर्चा छोड़कर बाहर नही निकला।

साथ आए चिकित्सकों ने जख्मी हुए सिपाही को संभाला। नई हिदायतें जारी की गईं। जब सब कुछ ठीक-ठाक हो गया तो एक बार फिर लाउडस्पीकर की आवाज जंगल मे गूंजने लगी, "तुम फिजूल में मुकाबला कर रहे हो जगतिया, इसमें कोई फायदा नही है। मैं बड़ा अफसर एस० पी० बोल रहा हूं। तुम लोग हाथ ऊपर उठाकर गुफाओं से बाहर आ जाओ, मैं विश्वास दिलाता हूं कि तुम लोगों को कोई नुकसान नहीं पहुंचेगा, बल्कि जयप्रकाश जी द्वारा बनवाए गए कानून के मुताबिक पुलिस तुम लोगों को छुड़वाने की पूरी कोशिश करेगी।"

लेकिन जवाब में फिर गोलियों की बौछार आई, जिससे सुरक्षित स्थानों पर बैठे टोपधारी सिपाहियों को कोई नुकसान नही पहुंचा, अलबत्ता मामूली-सी दहशत बरपा जरूर हुई।

अब लाउडस्पीकर की आवाज में झल्लाहट और गुस्सा था, "तुम लोगों ने इसके बाद एक भी गोली चलाई तो-जगतिया, तुम लोगों में से एक भी जिन्दा नहीं बचेगा। मैं लास्ट वार्निंग दे रहा हूं कि तुम लोग अपने हथियार गुफाओं में छोड़कर बाहर निकल आओ, नही तो हमें मजबूरन अपने हथियारों से काम लेना पड़ेगा और उसका नतीजा बहुत खतरनाक होगा।"

अब की बार लाउडस्पीकर की आवाज के बदले गोली नही आई। लगा कि सब लोग आपस मे सलाह-मशविरा कर रहे हैं। समय का लाभ उठाकर चार सिपाही हथगोलों समेत रेंगते हुए गुफाओं की बगलों तक पहुंचाए गए। दो सिपाही एक गुफा की बगल में और दूसरे दो दूसरी गुफा की बगल में।

अब लाउडस्पीकर की आवाज फिर जमीन और आसमान को एक करने लगी, "हमारा मकसद तुम लोगों को मारना नही है बल्कि हिंसा के रास्ते से हटाकर अहिंसा के रास्ते पर लाना है। महात्मा गांधी का यही सन्देश है और हम महात्मा गांधी के देश के रहने वाले उनके बताए रास्ते

पर चलना अपना धर्म समझते हैं। तुम लोग बिना किसी शक और डर के गुफाएं छोड़कर बाहर आ जाओ। हम विश्वास दिलाते हैं कि तुम सब के साथ पूरा इंसाफ किया जाएगा। जयप्रकाश नारायण के बनवाए हुए कानून के मुताबिक…"

लेकिन एस० पी० साहब का भाषण समाप्त होने से पहले ही चारों सिपाहियों ने चार हथगोले दोनों गुफाओं के अन्दर फेंक दिए। भयंकर धमाकों से ज़मीन और आसमान एक हो गए। स्याह धुएं के साथ ही जिस्मों, कपड़ों और घर-गृहस्थी की कुछ चीजों के टुकड़े और चिथड़े उछलकर गुफाओं से बाहर आ गिरे। परिन्दे अपने घोंसले छोड़ आसमान पर मंडराने लगे। उनकी डरी हुई आवाज़ें मातमी संगीत में बदल गईं।

फिर धीरे-धीरे सब कुछ शान्त हो गया। पुलिस मोर्चा छोड़कर बाहर निकल आई। मुहिम पूरी हो गई थी। मकसद में कामयाबी हासिल हो चुकी थी। हर अफसर और जवान के चेहरे पर खुशी की लहर थी। सबको अपने-अपने पद की उन्नति अपनी मुट्ठी में दिखाई दे रही थी और दिखाई दे रहे थे वे तमगे जो केन्द्रीय विभाग द्वारा इसी तरह की वीरता और साहस दिखाने के लिए हर साल बहुत बड़ी भीड़ के सामने बंटते थे।

● ●

दोपहर होने से पहले-पहले गुफाओं में से निकाली गईं पूरी बारह लाशें दमकड़ी गांव के दवाईखाने के सामने सजा कर रख दी गईं। बच गए घायल मुजरिमों को, प्रारम्भिक मरहम पट्टी करके इन लाशों की बगल में बिठा दिया गया। दोनों भागी हुई बन्धुआ औरतों और सूरज तथा रूपा की लाशों को ठीक बीच में सजाया गया। इसके बाद सभी छोटे-बड़े अफसरों ने लाशों के साथ खड़े होकर, साथ आए कैमरामैन से फोटो खिचवाई—बिलकुल वैसे ही जैसे छोटे-बड़े सभी प्रकार के शिकारी शिकार के साथ खड़े होकर खिचवाते है। एक छोटे अफसर का विचार था, "लाशों के जिस्म बाघ, तेन्दुए और चीतों की खूबसूरत खालों से ढके हुए है, फोटो खूबसूरत आएगी!"

जगतिया और उसके आदमी जिस भी जंगली जानवर का शिकार करते थे, उसकी लाश तो इधर-उधर लटका देते थे लेकिन खाल उतारकर अपने जिस्मों पर पहन लेते थे। दोनों-बच्चों के जिस्म सिंह शावकों की खालों से ढके थे, दोनों औरतों के जिस्म बाघिनो की खालों से और बाकी मे आदमियों ने अपने जिस्मों को इसी तरह के खूखार जानवरों की खालों से ढका हुआ था। जगतिया की धारणा थी कि इन खालों को पहनने मे आदमी का साहस बढा रहता है और जंगल के झाड़-झंखाड़ों में छुपकर बैठने में भी कोई दिक्कत पेश नही आती। उसे क्या पता था कि इन कवचो को पुलिस के हथगोलों का भी सामना करना पडेगा। हथगोलो की बारूदी मार से जिस्म तो अंग-भंग हुए ही थे, साथ ही खालें भी जगह-जगह से कट-फटकर बदरंग हो गई थीं।

सूरज का एक हाथ गायब था और रूपा का एक पैर। उनके बाकी के कोमल अंगों पर भी बड़े-बड़े गहरे घाव थे, जैसे उन घावों मे मे मास निकालकर अलग कर लिया गया हो। बाकी की कई लाशो की तो इससे भी कहीं बदतर हालत थी। जगतिया का आधा पेट ही गायब था, आतों को कपड़े से बांधकर बाहर आने से रोका गया था। बच्चों के पैरो पर जूतियों की जगह कपड़े लपेटे हुए थे, कई दूसरी लाशों के पैरों की भी यही हालत थी।

लेकिन इन लाशो को देखने के लिए गांव की औरतें अपने मकानो की छतों पर नही थीं। आदमियों की भीड़ का भी कहीं नामो-निशान नही था। जबकि इन लाशों को औरतों और भीड़ के लोगों को दिखाने के लिए ही रखा गया था। हा, कुछ बच्चे जरूर इधर-उधर छोटी-छोटी टोलियों मे खड़े थे जो बदली हुई नजरों से उन सिपाहियों को घूर रहे थे जो रायसाहब की तरफ कूच करने वाले अफसरों ने इन लाशों के पास हिफाजत के लिए छोड़े थे।

● ●

रायसाहब को अन्तिम नमस्कार करने गई पुलिस सूरज सिर पर पहुंचने से पहले ही फिर दमक्ड़ी लौट आई। बहुत दिन हो गए अपने

बीवी-बच्चों से बिछुड़े, अफसरों को अब घर लौटना है। लौटकर बन्धु-बान्धवों को विजय की गाथाएं सुनानी हैं, आस-पड़ोस के लोगों को अचम्भित करना है।

हुक्म होते ही तमाम लाशों और घायल हुए मुजरिमों को शिकार किए जंगली जानवरों की तरह खच्चरों की पीठों पर लादा गया। घायल सिपाहियों के स्ट्रेचर बन्धुआ मजदूरों के कन्धों पर उठवाए गए। सरकारी गवाह चेतू के लिए भी एक घोड़े का इंतजाम किया गया। फिर काफिला जैसे आया था, वैसे ही चमक-दमक और शान के साथ, चिटमोला की तरफ लौट चला।

चिटमोला से पूरा काफिला नीली गाड़ियों और खाकी जीपों में राजधानी लौट जाएगा। वहां जाकर लाशों का प्रदर्शन किया जाएगा, प्रदर्शन के बाद पोस्टमार्टम। पुलिस को अपनी सफलताओं के सबूत पेश करने होंगे इन लाशों के रूप में। पदोन्नति के लिए, तमगों के लिए और बड़ावर कुर्सियों की नजरों में ऊंचा उठने के लिए। अखबारों में रोचक किस्से छपवाने के लिए भी इन लाशों के चित्रों की जरूरत पड़ेगी। दूर-दर्शन और आकाशवाणी के लिए चांदी के भाव इण्टरव्यू बिकेंगे अफसर लोगों के। इससे ग्राम लोगों के दिलों पर छाया नक्सलवादियों और डाकुओं का भय दूर होगा। गांधीवाद और जे० पी० वाद की जय-जयकार होगी। सबूत के बिना सरकारी मशीनरी का रथ एक इंच भी आगे नहीं खिसकता।

इधर पुलिस का काफिला दमकड़ी गांव से विदा हुआ कि उधर भीड़ अनजानी-अनचीन्ही पनाहगाहों से निकलकर दवाईखाने के सामने जमा होने लगी। डा० दादा, बाकर, चन्देरी और चन्देरी का बेटा देवा भी इस भीड़ में शामिल थे। किसी कारणवश बच गए जगतिया के कुछ साथी और न पकड़े गए करियाला पार्टी के कुछ युवा सदस्य भी बीच-बीच में दिखाई दे रहे थे। आहिस्ता-आहिस्ता दूसरे गांवों के लोग भी भीड़ में शामिल हो रहे थे। यों वे इस लालसा में रहे थे कि जगतिया और उसके साथियों की लाशें देखेंगे पर आते ही आक्रुद्ध मन:स्थिति के लोगों में शामिल होकर क्रोधित होने के लिए विवश हो जाते थे।

जहां से लाशें उठाई गई थीं वहां की मिट्टी और पत्थरों पर जमे हुए खून के चकत्ते अब भी साफ दिखाई दे रहे थे। जाहिर था कि कुछ लोगों

ने यहीं पड़े-पड़े दम तोड़ा। इन चक्तों के बीचों-बीच रूपा के हाथ की टूटी हुई चूड़ियों के कुछ टुकड़े चमक रहे थे, गोमा की लाल चूड़ियों की तरह लक-लक।

चन्देरी ने आगे बढ़कर एक टुकड़ा उठा लिया, "इस मासूम बच्ची ने क्या बिगाड़ा था इन जल्लादों का।" जैसा कि उसका स्वभाव था, पल्लू हाथ पर इकट्ठा करके, उसने होंठ-नाक ढककर सुबकने लगी—उसके जहन में महुआ की याद ताज़ा हो आई थी।

चन्देरी को सुबकती देख कई दूसरी औरतों की भी आंखों में पानी भर आया। उन्होंने आगे बढ़कर चन्देरी को घेर लिया। लेकिन इस बार वे चन्देरी को ढाढ़स नहीं बंधा रही थीं बल्कि इस विषय पर तर्क-वितर्क कर रही थीं कि बच्चों और औरतों को मारने का पुलिस को क्या अधिकार था? रायसाहब और उसके पालतू गुण्डे, इधर जो जगतिया ने भी ज्यादा कोहराम मचाए हुए हैं, पुलिस ने उनको क्यों नहीं मारा? बूढ़ी दादी तो अपनी पोपली आवाज़ में यहां तक कह रही थी, "जब इस तरह बिना किसी कारण के मरना ही है तो फिर क्यों न अपने पूर्वजों की तरह लड़-झगड़कर मरें। कम से कम प्रेत जोनी में जाने से बचेंगे-सब लोग।"

इधर डा० दादा की आवाज़ में और ही तरह की तपन दिखाई देने लगी थी। उनके चेहरों और आंखों में लाली उभर आई थी और उनके दोनों हाथ रह-रहकर एक-दूसरे को दबा रहे थे, "साथियो! अब मुझे भी यही लग रहा है कि दिनेश ज्यादा ठीक था और मैं हद से ज्यादा गलत। अब मैं भी महसूस करता हूं कि बिना खून का बलिदान पाए कोई भी गुलामी अपने शिकंजे ढीले नहीं करती। और फिर मानसिक गुलामी तो और भी ज्यादा खतरनाक होती है। बिलकुल कनखजूरे की तरह, जो जलकर ही आदमी का शरीर छोड़ती है। अब वक्त आ गया है कि हम अपना बलिदान दें और साहसपूर्वक सामूहिक रूप से रायसाहब के बंगले पर पहुंचें और जाकर उनसे पूछें कि आखिर हमारा कसूर क्या है कि वे पुश्त दर पुश्त हमें सज़ा देने का ठेका हथियाए हुए हैं। आखिर हम भी इन्सान हैं, हमारे साथ वे इन्सानों जैसा सलूक क्यों नहीं करते?"

"आप ठीक कह रहे हैं डा० दादा। जब हर हालत में मरना ही है तो क्यों न संघर्ष करते हुए मरें। अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करके मरने

वाला आदमी दूसरे जिन्दा आदमियों की देहों में, आत्माओं में बसकर सदा-सदा के लिए अमर हो जाता है। और आदमी का इस धरती पर जन्म लेने का मकसद भी यही है।" करियाला पार्टी के युवा सदस्य देवा ने दिनेश की कही हुई ये पंक्तियां लफ्ज़-ब-लफ्ज़ रट रखी थीं। क्योंकि अब ये दिनेश की नई नाटिका का, देवा के हाथों में सौंपा गया एक महत्त्वपूर्ण संवाद थीं।

"ये बिटवा ठीक कह रहा है। हम जाकर रायसाहब से पूछें तो सही कि उसको हमारे से दुश्मनी किस बात की है? इस गांव के जवान लड़कों, बूढ़े आदमियों और मास्टर दिनेश को आखिर उसने किस कसूर में पकड़कर बन्दी बना रखा है?" यह एक दूसरी बूढ़ी औरत थी, जिस को देवा का संवाद समझ तो नहीं आया था लेकिन देवा जैसे मिट्टी के माधो को इस तरह चपर-चपर बोलते देख उसमें भी जवानी लौट आई थी।

"दुश्मनी की क्या बात करनी हो दादी, गरीब और अमीर की हमेशा दुश्मनी रही है। अब पूछना क्या है, सबको पता तो है कि भेड़िया, खरगोश के साथ इतना बुरा सलूक क्यों करता है?" यह करियाला पार्टी का एक दूसरा सदस्य था, इसे भी नाटिका के कुछ संवाद याद थे, जिनको मिला-जुलाकर उसने यह नया रूप दे लिया था।

"तो फिर ठीक है, जितने भी मर्द यहां खड़े हैं सब के सब संगठित होकर सुमेरू की तरफ चलने के लिए तैयार हो जाएं।" डा० दादा की कांपती हुई मुट्ठी आसमान की तरफ उठ गई।

डा० दादा की मुट्ठी की तरफ देखकर चन्देरी का भी कांपता हुआ हाथ हवा में लहरा उठा, "मैं पूछती हूं, सिर्फ मर्द ही क्यों जाएंगे? हम औरतें क्यों नहीं?"

चन्देरी का सवाल सुनकर दूसरी औरतों में भी दबी-दबी-सी प्रतिक्रिया जागी, "हम भी साथ जाएंगी... हम भी साथ जाएंगी।"

इन सामूहिक आवाजों में से फिर पहली बूढ़ी औरत का स्वर उभरा, "हमारे मर्द और बेटे-पोते युद्ध की तरफ कूच करें और हम गाय-भैंसों की तरह अपने बाड़ों में बैठी रहें...यह ठीक नहीं है।"

सामूहिक स्वर फिर उभरे, "हां, यह बिलकुल ठीक नहीं है...हम सब औरतें भी साथ जाएंगी। हमें भी साथ ले चलिए!"

पता नहीं यहां से एक युवा आवाज नारे के रूप में गूंज उठी, "डा० दादा।"

भीड़ ने जवाब दिया, "जिन्दाबाद।"

फिर वही युवा आवाज और भी जोश के साथ गूंजी, "इंकलाब।"

भीड़ के पास इस नारे का जवाब जैसे युगों से सुरक्षित था, जवाब मिला, "जिन्दाबाद!"

बच्चे भी मुट्ठियां तान-तानकर नारों का जवाब दे रहे थे, और साथ ही समताल पर फुदक भी रहे थे जैसे उनको किसी मेले में जाने की खुशी हो रही हो। निराश्रित भीड़ को अचानक एक नेतृत्व मिल गया था। वह नेतृत्व भी इसी भीड़ का एक हिस्सा था, कहीं बाहर से आरोपित नहीं हुआ था।

डा० दादा ने अपने दोनों हाथ हवा में लहराए तो नारे पहले धीमे पड़े और उसके बाद इधर-उधर बिखरकर बन्द हो गए। "देखिए! औरतों को साथ चलने की अभी कोई जरूरत नहीं है। मुक्ति की लड़ाइयां बहुत-बहुत लम्बी होती हैं। अंग्रेजों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए हमने कितनी लम्बी लड़ाई लड़ी थी, यह किसी को भूला नहीं है। बस यूं समझिए कि अबकी बार आप लोगों को काले अंग्रेजों से लड़ाई लड़नी है। औरतों के सामने भी इस लड़ाई में सैकड़ों अवसर आएंगे, उन्हें धीरज के साथ इन अवसरों का इंतजार करना चाहिए। इस तरह का उतावलापन ठीक नहीं।"

"तो फिर देर किस बात की है। चलिए, इन काले अंग्रेजों का सामना करने के लिए चलिए, हम तैयार हैं!" यह एक बूढ़े आदमी की आवाज थी, जिसके एकमात्र जवान लड़के को पुलिस पकड़कर ले गई थी और अब तक उस लड़के की कोई खैर-खबर इस बूढ़े को नहीं मिली थी।

"ठीक है, हम लोग पहरुआ के रास्ते से न जाकर डवरू की तरफ के रास्ते से जाएंगे ताकि रायसाहब को हमारे फैसले का एकदम पता न चले और रास्ते में जो दूसरे लोग हमें मिलें उनको भी साथ लेते चलें।" डा० दादा ने अपना अंतिम निर्णय सुना दिया।

इसी समय अचानक सरपंच रामदास पता नहीं कहां से प्रकट हो गया। उसने आते ही डा० दादा पर एक बेरहम सवाल दाग दिया,

"आप हिरणों के एक झुण्ड को शेरों की मांद की तरफ ले जाने की गलती कर रहे हैं डा० दादा, जानते हो इसका परिणाम क्या निकलेगा ?"

"मांदों से दूर रहकर क्या परिणाम निकला है रामदास ! यही कि शेरों के पालतू लकड़बग्घे भी हिरणों की हड्डियां तक चबाते जा रहे हैं। और फिर जिन लोगों को तुम हिरन कह रहे हो वे हिरन नहीं हैं। रायसाहब और तुम्हारी तरह ही इन्सान हैं। इन्सानों को हिरन का फतवा देकर उनको महज खाने की चीज समझना इंसानियत के माथे को लाल लोहे से दागने के बराबर है। कमाल है, आप भी इन इन्सानों की बिरादरी के होकर इन्हें हिरन कहते हैं ?"

"मेरा मतलब है''' आप मेरा मतलब नहीं समझे'''"

"हम तेरा मतलब खूब समझते हैं सरपंच ! यह तेरे मतलब को ही समझने का परिणाम है कि आज हम इस तरह की जलालत भरी जिन्दगी जी रहे हैं।" करियाला पार्टी के एक और युवा सदस्य ने याद किया हुआ एक और संवाद सरपंच के सामने उगल दिया।

सरपंच उस युवा लड़के की तरफ बिटर-बिटर देखता रह गया। उसे समझ ही नहीं आ रहा था कि इन सब लोगों को क्या हो गया है और अचानक ये गूंगे लड़के भी किस भाषा में बोलने लगे हैं।

सरपंच को चुप हुआ देख भीड़ में से पता नहीं किसने फिर से एक नारा उछाला, "रायसाहब का दुमछल्ला सरपंच।"

लेकिन इस नारे का भीड़ ने कोई जवाब नहीं दिया। भीड़ इस नारे से अपरिचित थी। सिर्फ दो-चार करियाला पार्टी के सदस्यों ने ही इस नारे का जवाब दिया, "मुर्दाबाद।" इसके बाद भीड़ भी इन युवकों का साथ देने लगी।

डा० दादा ने फिर अपने दोनों हाथ उठाकर भीड़ को शान्त किया, "देखो, अब हमें नारों में वक्त बरबाद नहीं करना चाहिए। सबको सुमेरू की तरफ कूच कर देना चाहिए ! ताकि सूरज ढलने से पहले हम वहां पहुंच सकें।"

देखते ही देखते पीड़ित लोगों के जंग लगे हथियार उनके फौलादी हाथों में आ गए। तीर-कमान, दरातियां, कुल्हाड़े और भाले। किसी-किसी के पास पुश्तैनी राइफल भी। डा० दादा की बारह बोर की देसी बन्दूक भी दादा के हाथों में उतर आई।

जब तक लोग अपने-अपने हथियार लेकर इकट्ठे होते रहे तब तक अजीब-अजीब किस्म के नारों से धरती और आसमान एक होते रहे। औरतें भाग-भागकर हथियार घरों से निकाल-निकालकर पतियों और जवान बेटों के हाथों में थमाती रहीं। जुल्म की इंतहा अन्ततः आदमी को इसी रूप में प्रस्तुत करती है। लेकिन जब सब लोग इकट्ठे होकर चल पड़े तो नारे अपने आप बन्द हो गए। पदचापें भी पैरों तक ही सीमित हो गईं। लगने लगा जैसे आदिमानव आदिम युग में सामूहिक शिकार के लिए निकले हैं। और यह सामूहिकता उनके लिए बड़ा मानवीय और नैतिक पर्व है।

● ●

इधर यह *छोटी-सी शान्ति-सेना* सुमेरू की तरफ विदा हुई उधर श्यामा और बंगालन मां पहरुआ की बहुत-सी हरिजन औरतों को साथ लेकर दमकड़ी गांव पहुंच गई। ढोल भी उनके साथ था।

श्यामा ने मैदान में पैर धरते ही पहले दवाईखाने पर लगे ताले को देखा फिर जहां लाशें रखी गई थीं उस जगह पर *भिनभिनाती मक्खियों* की तरफ से नजरें बचाकर औरतों से सवाल किया, "सूरज और रूपा की लाशें कहां रखी गई हैं?"

"उन्हें भी बाकी लाशों की तरह पुलिस अपने साथ ले गई।" सब से आगे खड़ी एक *जवान-सी लड़की* ने *श्यामा* के सवाल का जवाब दिया।

सुनते ही श्यामा की त्योरियां चढ़ गईं। खून ने उबाल खाया कि वह अपने से बड़ी औरतों के लिए भी रणचण्डी बन गई, "डूबकर मर जाओ डायनो। उन कुत्तों को इन बच्चों की लाशें ले जाने का क्या अधिकार था? तुम भी लाश बनकर क्यों न चली गईं उन लाशों के साथ?"

श्यामा की फटकार सुनकर सबकी सब चुप खड़ी रह गईं, जैसे सबकी जुबान को लकवा मार गया हो।

बंगालन मां ने श्यामा की पीठ पर हाथ रखकर उसे शान्त किया, "थोड़ा शान्ति से काम लो श्यामा, *यह वक्त क्रोध करने का नहीं है,*

ये बेचारी भी मुसीबत की मारी हुई है, इनके साथ ऐसे नहीं···"

मां ने उन औरतों की तरफदारी की, जिनको श्यामा शुरू से ही नफरत की निगाह से देखती रही थी, उसका पारा और ज्यादा चढ़ गया। गुस्से से उसका चेहरा और ज्यादा रक्तिम हो उठा और जुबान से जैसे चिंगारियां निकलने लगी।

"ये सारी मुसीबतें अपने लिए खुद बोई है इन चुड़ैलों ने। क्यों नहीं दिनेश का साथ दिया ? जब दिनेश उस सुअर के बच्चे शिकारी पर मुकद्दमा करने के लिए शहर से कागज बनवाकर लाया था तब क्यों नहीं उस पर अंगूठा लगाया इन शैतान की बच्चियों ने ? रोज शिकारी से गोश्त ले-लेकर खाती रही। और फिर भी ये मुसीबत की मारी हुई है ?"

मां ने फिर श्यामा की पीठ को कोमलता से सहलाकर उसे शान्त किया, "इस गांव का कोई भी मर्द दिखाई नहीं दे रहा, क्या उन सबको भी पुलिस पकड़कर ले गई ?"

"वो सब सुमेरु की तरफ इकट्ठे होकर गए है, रायसाहब से लड़ाई लड़ने।" एक बच्चे ने डबरू की तरफ से होकर सुमेरु की तरफ जाने वाले रास्ते की तरफ हाथ उठा दिया, इस अन्दाज में जैसे उसे मर्दों के साथ न जा पाने की पीड़ा हो और वह पीड़ा उसे अपने मां-बाप को छोड़कर श्यामा के पक्ष में हो जाने को मजबूर कर रही हो।

"और तुम सबकी सब यहां पत्थर के बुतों की तरह खड़ी रहीं तमाशा देखने के लिए। डूब मरो चुल्लू-भर पानी में। तुम्हारे मर्द और जवान बेटे पुलिस की कैद में है और बच्चे गोलियों से भून दिए गए हैं और तुम यहां आराम से खड़ी गप्पें लड़ा रही हो ! कुछ तो शर्म करो" श्यामा का शरीर थर-थर कांप रहा था और उसकी मुट्ठियां रह-रहकर सख्त-नर्म हो रही थी।

"तुम फिजूल में हम सबको गालियां बके जा रही हो श्यामा बेटी ! जब मर्द हमे साथ न लेकर जाना चाहें तो जबरदस्ती भला हम कैसे जाती ?" एक बुढ़िया को भी श्यामा की गालियां सुनकर गुस्सा आ गया। वह डर और झिझक को ताक पर रखकर श्यामा के सामने आ खड़ी हुई।

"जबरदस्ती !" श्यामा के चेहरे पर वितृष्णा की रेखाएं खिंच गईं।

"हमने कहा था कि हमें भी अपने साथ ले चलो। हम भी उस राय-साहब से पूछेंगी कि हमारे बच्चे और मास्टर जी कहां हैं, जिन्हें पुलिस पकड़कर इधर सुमेरु की तरफ लाई थी। पर डा० दादा ने ही हमें साथ ले जाने से मना कर दिया तो फिर बताओ कि हम क्या करतीं। अपने मर्दों के खिलाफ कोई औरत विद्रोह कैसे कर सकती है ?" चन्देरी ने भी उस बूढ़ी औरत का साथ दिया और अपने आंचल में छुपाई दराती निकालकर आगे बढ़ आई।

"तो पुलिस उन पकड़े हुए लोगों को अपने साथ नहीं ले गई ?" श्यामा का ध्यान औरतों के कायरतापूर्ण आचरण से हटकर इस सवाल पर चला गया – तो फिर वे सबके सब अब रायसाहब के चंगुल में हैं, उन्हें किसी भी तरीके से वहां से मुक्त कराया जाना चाहिए।

"नहीं, पुलिस सिर्फ लाशों और जगतिया के घायल साथियों को लेकर गई है। वह पकड़े हुए लोगों को अपने साथ लेकर नहीं गई।" स्पष्टीकरण देती हुई एक तीसरी औरत भी चन्देरी और बूढ़ी औरत के साथ श्यामा के सामने आ खड़ी हुई।

पहरुआ की हरिजन महिलाओं को लगा जैसे दमकड़ी गांव की औरतें पल-भर में ही श्यामा पर हमला कर सकती हैं। उन्होंने भी अपने आंचलों में छुपाई दरातियां बाहर निकाल लीं और श्यामा की अंग-रक्षिकाओं के रूप में श्यामा और मां बंगालन की बगलों में आकर खड़ी हो गईं।

ऐन इसी वक्त सरपंच रामदास बड़ी चट्टान के पीछे से निकल आया। सबसे पहले उसकी निगाह, कमर पर दोनों हाथ रखकर एक तरफ खड़े दौल पर पड़ी। उसे लगा कि दौल के चेहरे पर भी दिनेश जैसी ही दाढ़ी और मूंछें उग आई हैं। औरतों के चिरपरिचित चेहरे भी उसे अपरिचित-से लगे। वह लड़खड़ाता हुआ-सा श्यामा के सामने जा खड़ा हुआ, "कुसूर इनका नहीं है...कुसूरवार मैं हूं...." उसने पैर का एक जूता निकालकर श्यामा के सामने कर दिया, "जूते मारो... मुझको जूते मारो..." और जूते वाले हाथों से ही पगड़ी उतारकर गंजा सिर दिखा दिया, "यहां मारो यहां...।"

श्यामा सरपंच की सुर्ख आंखों में देखती रह गई। उसे लगा कि सरपंच को तेज बुखार और आंखें लाल कर देने वाले कीड़े ने काट

लिया है।

"सब गए···पर मैं···मैं बुज़दिल···उस दरिन्दे के हाथ की कठ-पुतली···मुझे माफ करो श्यामा बेटी···मुझे माफ करो ! ···" रामदास ने पगड़ी श्यामा के पैरों पर रख दी।

"ये क्या कर रहे हैं आप ? ···क्या हो गया है आपको ?" श्यामा ने पगड़ी उठाकर सरपंच के सिर पर सजा दी।

"उन्हें बचा लो···उन सबको बचा लो···वह पाजी उन्हें मार डालेगा···उनकी आंखें निकलवा देगा ! ···" रामदास ने फिर पगड़ी उतार ली और उसमें मुंह ढंककर बच्चों की तरह सुबकने लगा।

इस सब में सरपंच को ख्याल ही नहीं रहा कि कमर पर बंधे तहमत के अन्दर शराब का अधिया खोंसकर रखा हुआ है। अधिया निकलकर पत्थर पर जा गिरा और टुकड़े-टुकड़े हो गया।

बंगालन मां की नाक पर धोती का पल्लू चला गया, "सरपंच जी आप और शराब ! छीः छीः छीः, इस जमाने में आदमी किस पर भरोसा करेगा !"

अब सरपंच कांच के टुकड़ों पर ही बैठ गया। उसने फिर अपना मुंह पगड़ी से ढंक लिया और जैसे अपने आपसे ही बतियाने लगा, "बर्दाश्त नहीं हुआ···तेरे से बर्दाश्त नहीं हुआ···डूब मर···सोन नदी में डूब मर···अब तू मुंह दिखाने के काबिल नहीं है···हां काबिल नहीं है···ठीक है···तो फिर चल ! ···" वह ज़मीन पर पंजे गढ़ाकर खड़ा हो गया और झूमता हुआ उसी तरफ चला गया जिधर से आया था।

रामदास का इस तरह से जाना एक बार तो सारे वातावरण को सन्नाटे में भर गया। फिर श्यामा ने उस सन्नाटे को तोड़ा, "यह सब उस कमीने रायसाहब की ही बदौलत हो रहा है। उसके फैलाए हुए ज़हर ने हम सबकी ज़िन्दगी को नरक बनाकर रख दिया है। महाकाली की कसम, आज या तो मैं रहूंगा या रायसाहब का वह भूतिया तंत्र।" श्यामा ने एक बार हाथ की दरांती प्रहार करने की तरह हवा में लहराई और तेज़ कदमों से सुमेरू की तरफ चल दी।

"श्यामा रुको ! रुको तो ! ठहरो, मैं भी तुम्हारे साथ चलती हूं।" सुचित्रा भी आवेश में भागकर श्यामा के पीछे-पीछे हो ली।

बंगालन मां को इस तरह श्यामा का साथ देती देख दूसरी औरतों

के खून ने भी जोश मारा और वे भी एक-एक करके श्यामा और बंगालन मां के पीछे-पीछे चल दीं।

अब बच्चों ने वहां रहकर क्या करना था ?…वे भी अपनी मा-बहनों और नानियों-दादियों को जाती देख कुदालियां भरते हुए उनके पीछे-पीछे हो लिए।

पीछे रह गया मात्र सन्नाटा और उस सन्नाटे का गवाह रामदास, जो चट्टान के ऊपर बैठा यह देख रहा था कि कोई ऐसा आदमी दिखाई दे, जिससे वह शराब की बोतल मंगवा सके।

●●●

मुद्रक : [illegible], शाहदरा, दिल्ली





जन्म : 1941 पंजाब में, शिक्षा : एम० ए० (हिन्दी), सम्प्रति : सरस्वती कॉलिज, अम्बाला छावनी से सम्बद्ध राकेश वत्स आठवें दशक के अग्रिम कथाकारों में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। 1962 से लेकर अब तक के लेखन के बीस वर्षों में इन्होंने चार कहानी संग्रह, सात उपन्यास, एक कविता संग्रह और आठेक सम्पादित रचनाएं दी हैं। साथ ही 'मंच' और 'सक्रियकहानी' पत्रिकाओं का कुशल सम्पादन भी कर रहे हैं। कहानी में 'सक्रियता' के प्रस्ताव के प्रस्तोता के नाते भी राकेश वत्स ने अपनी वैचारिक प्रतिबद्धता का परिचय दिया है। भारत की कई दूसरी भाषाओं में भी इनकी अनेक रचनाएं अनूदित होकर सम्मानित हुई हैं।